॥ अजूबा राजस्थान ॥

अजूबा राजस्थान

डा. महेन्द्र भानावत
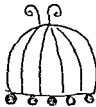
Rs 60 00

प्रकाशक— मुक्तक प्रकाशन/352, श्रीकृष्णपुरा/ उदयपुर (राज.)

प्रथम संस्करण— जनवरी 1986/ सर्वाधिकार लेखकाधीन

मुद्रक— मंगल मुद्रण/ चेटक सर्कल/ उदयपुर—313 001

विषयानुक्रम

लेखकीय

अब तक प्रकाशित मेरी सभी पुस्तकों से यह पुस्तक कुछ भिन्न सामग्री लिये है. ऐसे बहुत से विषय हैं जो सामान्य से हटकर कुछ विचित्र, अनूठे, अद्भुत, अबूझे और रहस्य रोमांचपूर्ण हैं. राजस्थान इनमें अग्रणी है, शायद इसीलिये भी कि यहां इस क्षेत्र में लगातार अधिक काम हुआ है.

इस पुस्तक में सम्मिलित सभी लेख प्रकाशित हैं. सर्वाधिक तो धर्मयुग में ही छपे हैं. पाठकों ने भी इन्हें विविध चमत्कारपूर्ण तथा जिज्ञासापूरक बताया इसीलिये मेरी शोध-जिज्ञासा भी इन अज्ञात अलक्षित विषयों के नवीन स्त्रोत खोजती रही. कुछ लेख साप्ताहिक हिन्दुस्तान में निकले. दैनिक हिन्दुस्तान, नई दुनिया, मरु भारती एवं रसायन में भी छपे. और भी कहीं छपे. इनमें से अधिकतर लेख यहां परिवर्द्धित रूप में हैं. कुछ ऐसे भी हैं जो तब पूरे नहीं छप पाये, अब छप रहे हैं परन्तु अभी भी इनमें इतनी गुंजाइश है कि इन्हें 'बानगी' कहना ही ठीक रहेगा.

ये लेख केवल लोकजीवन के तथ्य-विश्लेषण ही नहीं, इतिहास का मौन तोड़ने वाले और उसे पुष्टि देने वाले भी हैं. यह जताने का प्रयत्न भी करते हैं कि जहां लोक का निरन्तर आलोक अन्तरित होता है वहां इतिहास और

पुरातत्व का भी मुखर होना है और अपनी प्रस्थापना से शोध-खोज की प्रक्रिया को गहरा अन्तरवास देना है. मेरी तो यह स्पष्ट मान्यता है कि लोक के मन-विश्वास को जाने बिना कोई भी इतिहास किसी भी पुरातन की पकड नही पा सकता. इस नजरिये से भी यदि मेरे ये लेख देखे परखे जायेंगे तो निश्चय ही हमारे सोच के दायरे बढेंगे

कहने को मैं और भी बहुत कुछ कह सकता हू लेकिन अभी तो न कहना ही कुछ कहने से अधिक ठीक लग रहा है. अच्छी स्थिति यह भी है कि लेखक अबोला रहे और उसका लेखन ही अधिक बोले

डॉ लक्ष्मीमल्ल सिंघवी ने भूमिका लिखकर इस पुस्तक के और मेरे यशः गौरव को बढाया है मैं उनके प्रति वदित हू

लोकदेवता कल्लाजी के अनन्य सेवक सरजुदासजी को इस पुस्तक का समर्पण कइयो को मीठी मार और एक अजीब कसकसी दे सकता है उनसे मरा आग्रह है कि वे इसम सकलित मेल सम्बन्धी मेरे दोनो लेख अवश्य पढे.

मैं यह चाहता हू कि सिक्को की तरह मेरी यह पुस्तक चल निकले और मेरे मित्र यह चाहते है कि उन्ही सिक्को की तरह यह गायब भी हो जाय.

—डा. महेन्द्र भानावत

भूमिका

डा. महेन्द्र भानावत को राजस्थान की लोकपरम्पराओं के अध्येता और व्याख्याता के रूप में उल्लेखनीय प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है. यह पुस्तक उनकी उपलब्धियों की माला में एक और अध्याय जोड़ती है. डा. भानावत ने हमारे देश के गौरव, लोककलाओं के अद्वितीय मर्मज्ञ, स्वर्गीय देवीलाल सामर के पदचिन्हों पर चलकर जन-मानस की मान्यताओं और जीवन्त अभिव्यक्तियों के परिप्रेक्ष्य में लोक से हटकर 'लोक' की स्थापना का प्रयास किया है. इस स्थापना में उन्होंने न केवल अपने अध्यवसाय का परिचय दिया है बल्कि परम्पराओं और मान्यताओं की जड़ तक पहुंचने की क्षमता भी अर्जित की है.

'अजूबा राजस्थान' ग्रन्थ में राजस्थानी जनजीवन के कुछ पक्षों का एक अनोखा वृत्तान्त है जो यह सिद्ध करता है कि कभी-कभी वास्तविकता के तथ्य किसी भी कपोलकल्पना से अधिक आश्चर्यजनक हो सकते हैं. डा. भानावत ने कई विचित्र रीतियों, परम्पराओं और प्रथाओं को एक नवीन सन्दर्भ में सजा कर व्यापक दृष्टि दी है और 'लोक' के जीवन्त यथार्थ को समानुभूति तथा सहानुभूति दी है.

उदयपुर क्षेत्र के डा. भानावत की रचना माला में संकलित सभी मनकों को माला के मनकों की तरह अलग अलग होते हुए भी सूत्रबद्ध रूप से एक धागे

मे पिरोए हुए हैं   यात्रा के हर कदम पर कथाओं का अबाध क्रम है और उन कथाओं के विचित्र कथ्य मे समाए हुए विश्वासो के बिम्ब. कथावाचक की बात मे रस है और शैली मे सुगम सुघड साहित्यिकता की बानगी और रवानगी

इस यात्रा-वृत्तान्त की यह विशेषता है कि इसके प्रत्येक पृष्ठ मे लोकजीवन की धरती की सोंधी सुगध सन्निहित है इसमे लोकभाषा के मुहावरो की प्रतिध्वनि अनुगूजित होती है और पाठक बरबस इन अजूबो की दुनिया मे प्रविष्ट हुए बिना नही रह सकता इस यात्रा का वृत्तान्त पढते-बतियाते थोडी सी देर मे पाठक अनायास ही साक्षी और सहयात्री की अनुभूति का आस्वादन करने लगता है जब-तब, लोकदेवता कल्लाजी की रहस्यमयी संकेतात्मक उपस्थिति पाठक को सचेतन मूर्च्छा का आयाम देते हुए प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष के बीच एवं समय के पार ले जाती प्रतीत होती है

'अजूबा राजस्थान' मात्र एक रोचक यात्रा वृत्तान्त ही नही है. इसे किस्सागोई कहना असगत होगा. इस पुस्तक मे अनुसधान, साहित्य, रिपोर्ताज, समाजशास्त्र एवं सामाजिक नृतत्व का सम्मिश्रित समावेश हुआ है जिसे एक नई विधा की सौष्ठवपूर्ण प्रस्तुति के लिये लेखक को पाठको की ओर से और मेरी अपनी ओर स हार्दिक बधाई एव इस विधा की सभावनाओं का स्वागत.

-

—लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

लोकदेवता कल्लाजी

के

अनन्य सेवक

सरजुदास जी

को

सादर समर्पित

नवरात्रा यात्रा

नवरात्रा का हमारे यहा शास्त्रोक्त विधान तो है ही पर लोकविधान भी बड़ा जोर जबर्दस्त है कई प्रकार की सिद्धिया, टोटके तत्रमत्र इन दिनो किये जाते हैं शक्तियों का अवतरण होता है. रात-रातभर जागरण होता है अपने सेवकों मे उनका भाव आकर प्रत्यक्षीकरण होता है उनकी छाया बनी की बनी रहती है. देवताओ की विशिष्ट सेवापूजा, मानमनावण, धूपध्यान, भोगपाती, अरजू-आरजू जातरियो का आवागमन लोकदेवी देवताओ के देवरो मे बना का बना रहता है.

ये देवी-देवता कई तरह के भांत-भात के कहीं माटी की मूर्तियो के रूप मे, कही पत्थर पर उत्कीर्ण किये हुए, कही सिन्दूर मालीपनो मे सजेधजे, कही चादी की खोल पहने तो कही अनगडे जमीन में गडे बाहर निकले कुछ की नीचे जमीन पर थरपना, कुछ की ऊ ची चौकी, कुछ और ऊ चे थाट पर आसीन तो कुछ लक्डी के विशिष्ट कलात्मक तोरण के रूप मे प्रतिष्ठित

कहीं रात-रात भारत गाथाओ से आकाश और धरती के ओरछोर होते लगते हैं तो कहीं विभिन्न भावमुद्राओ में भोपे अपना शौर्य-करिश्मा दिखा रहे हैं. कही ढाक थाली को गर्जना तो कही ढोल पर धमाधम के जोरदार डाके. किसी देवता को मीठी धाम है तो कोई धार माग रहा है कहीं अकरे की तो कही पाडे की बलि सब जगह बडा विचित्र चित्र है कोई गाव कस्बा ऐसा नही जो नवरात्रा की हवा में अगापगा रहा हो. कोई व्यक्ति ऐसा नही जिसके नवरात्रा की हवा न लगी हो

इन देवी-देवताओं के अजीब-अजीब देवरे, देवरियां, मदिर मदरियां. कही चारो ओर फैला जगल और उसके बीच किसी वृक्ष के सहारे देवता तो कहीं चबूतरे पे विराजमान. देवता के कहीं पालने ही पालने बधे लटके तो कही ऊ ची-ऊ ची

त्रिशूलें एक साथ कई जमीन मे गडी, कही वृक्षो की टहनो मे लटके ढोल तो कही मयूर पख, धूप देने के धुपारने, मोटा माटी का दीया, ग्रखड जोत, दीवट लकडो की ऊ ची, कही लोहे की बनी. कही साकलें लटकी रखी. भाव लाते ही भोपा हाहुत की जोर की हाक लगाता है और जोर-जोर की पीठ पर, कधे पर साकल पटकता है, खूब धुनता है. जिस साकल को साधारण ग्रवस्था मे उठाया नही जा सकता उसी को उस विशिष्ट कपन मे भोपा उठाकर जोर-जोर से ग्रपने पर लगाता है

कही ग्राखे, कही भभूत, कही पाती. कोई देवता सतान देता है तो कोई पशुग्रो की बीमारी दूर करता है कोई भूतप्रेत डाकिन चुडैलन निकालने का काम करता है तो कोई बीमार ग्रादमी की बीमारी, चोरी चपाटी, गृह समस्या, धन जायदाद जैसी हर समस्या का पूछने पर, मुट्ठी देखने पर ग्रथवा बिना पूछे ही समाधान देता है. बडी ग्रजीब रचना है. बडा ग्रजीब ससार है इनका.

29-9-81

इस साल उदयपुर क्षेत्र की नवरात्रा यात्रा बडी दिलचस्प तथा कई तरह के ग्रध्ययन ग्रनुसधान की उपलब्धि दिला गई. भीण्डर की प्रसिद्ध कालका माता का मदिर. यहा गोलवोल नही पहनाई जाती पालने बधवाये जाते हैं पुत्र दिये जाते हैं निपूतियो को. बडा माना हुग्रा स्थान है. यहा ग्रहीर भोपा है. माताजी जिस पर राजी हो जाती, हुठमान होती उसे भोपा थरपती है. ऐसा नही कि भोपा कोई परम्परागत विरासत लिए हो. बाप मरा तो बेटा बने. इसे यो ग्राईमाता भी कहती जा रही थी ग्रौरतें धोक लगती हुई. नवरात्रा मे ग्रष्टमी को ही धाम चलती है तब भीड़ इतनी समाती है कि पूछो न. दूर-दूर तक के लोग ग्राते हैं यह स्थान 40 वर्ष पुराना है. मीठी धाम है ग्रष्टमी को जब धाम चलती है तब मजा देखने का है. तब भूतप्रेत डाकन चिकोतरी वाले लोग लुगाई ग्राते हैं माता उन्हें सजा देती है ग्रौर वे जिन्हें लगे होते हैं, उन्हें छोड ग्रपनी राह लेते हैं हजूरिये भी रहते हैं भोपे के साथ. भोपा जातरी से सीधी बात नही करता, कहता. वह हजूरिये के मार्फत ही सारी बात जानता कहता सुनता है माताजी के मदिर की तीन परिक्रमा लगवाई जाती है ग्रौर ग्रादमी स्वस्थ हुग्रा नजर ग्राता है.

माताजी का मंदिर बडा भव्य कलात्मक बना हुआ है. पूरा काच का बना हुआ है यहीं के सुथार-मिस्त्री का किया हुआ काम है यह ढोल बाजिया वाला अपना बधा बधाया अनाज पाता है. भोपे को कुछ नहीं मिलता. बीडी तमाखू तक नहीं कभी कोई रसोई बनती है तब भी भोपा उसे काम में नहीं लेता है साकल वगैरह का यहा काम नहीं है. मामूली धूजणी चलती है पूरे शरीर में भोपे को. जब तक भाव रहता है, देवी रहती है तब तक पूरा शरीर कंपित होता रहता है. यों हर दीतवार को यहा धाम चलती है. जातरी श्रद्धालु आते ही रहते हैं

इसी के अहाते में एक जगह सावरियाजी की है, हनुमानजी की भी मूर्ति है. धर्मराज का भी स्थान है. इनका भाव भी रवि को ही होता है. नवरात्रा में भी सभी दिन नहीं, केवल रवि को ही भाव होता है

भीण्डर के पास जगल मे वरेकणमाता का प्रसिद्ध स्थान है. इस माता की बडी मानता है. निसतानो को सतान देने वाली देवी भी यह है इसीलिये यहा बालको के झडूल्ये उतारे जाते हैं. माता की मूर्ति आप रूप ही है यानी कोई गडगडाया पत्थर नहीं होकर अनगड पत्थर है. केवल धड रूप में ही है. मदिर बडा भव्य बना हुआ है बहुत पुराना जैसे जैन मदिर हो पर उसमें मूर्ति ऐसी देखकर यह कल्पना स्वाभाविक लगती है कि मूलत. यह जैन मदिर रहा होगा पर इसमे मूर्ति किसी कारणवश यह लगादी होगी. माताजी की सेवा प्रतिदिन होती है पर कोई भोपा नहीं है जिसे भाव आते हों. पाती की मानता है. फूल देती है. मीठी धाम है. बरसात नहीं होने पर इस देवी की मनौती की जाती है. मन मे धारा काम लेकर यदि देवी के वहा पहुँचा जाय तो यह देवी इच्छापूरण करने वाली है. इसका पुजारी है. पशुओं में यदि कोई बीमारी लग जाती है तो यहा अरजाऊ होती है.

वहा आये जातरियो से पूछताछ करने पर पता चला कि किसी समय वहा गुजरो की भैंसे चर रही थी उनमे एक पाडा था एक बुढिया इधर से आ रही थी जिसने बहुत थक जाने के कारण पाडे पर बैठकर मदिर दर्शन जाने को कहा. उस बुढिया को बिठाकर पाडा मदिर तक आया पर वहा आते ही उसका लोह हो गया और बुढिया न जाने कहा लुप्त हो गई. वहा सून ही सून हो गया. कहते हैं वह बुढिया नहीं थी, देवी शक्ति थी जो मदिर में, मूर्ति में प्रविष्ठ हो गई.

उधर जैनी लोग यहा पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित करने आ रहे थे. जब उन्होंने यहा आकर देखा कि खून ही खून हो रहा है तो वे डरे और भागते बने. यहा आसपास गूजरों की वस्ती तो अब भी है

यह घटना आदिवासी एव बनिया जाति के विरोध के सूत्र देती है आम धारणा यह भी है कि बनिया बरसात को बाध देता है जो किसानों-आदिवासियों का जीवन है. एक भारत गाथा मे वर्णन है कि अकाल जब पडा तो बनिया देवी के पास गया और बोला कि अकाल पड़ा है, सब और त्राहि-त्राहि है, बरसात करो और जन-जीवन को बचाओ देवी बोली-पाडा चढाना पडेगा बनिये ने सोचा कि पाडा चढाने से तो जीव हत्या का पाप लगेगा पर चढाना भी जरुरी है अत देवी के सम्मुख हा तो भर दो पर पाडा कैसा चढाया जाय. उसने विचार कर घास का पाडा बनाया और उसका लोह किया बनिया देखता रह गया कि घास के पाडे से खून की जो धार छूटी कि सारी नदी का पानी लाल हो गया और इधर देवी ने अपनी तलवार से बनिये का सिर उतार लिया.

इसी तरह की एक और कहानी सुनने को मिली चित्तौड जिले के बेगू के पास स्थित जोगण्यामाता के सम्बन्ध मे. वहा भी एक बनिये ने अपनी ऐसी ही कुछ बोलमा बोली और जब उसे पाडा चढ़ाना था तो उसने गुड का बना पाडा चढाया. उस पाडे का खुर पत्थर में जम गया जिसके निशान आज भी देखने को मिलते हैं लोगो मे आज भी भय है कि बनिया बरसात बाध देता है और तब ग्रामीणों को खूब ठगता है.

बरेक्णमाता के सामने बाहर चोट जोगण्या हैं पत्थर ही पत्थर रखे हुए हैं ये पत्थर ही चौंसठ योगिनियो के प्रतीक हैं देवी के तलवार और ढाल चढी हुई है यहीं एक दीवाल मे बने आलिये में काचली मे सिन्दूर रखा देखा. जो भी औरतें आती हैं, सलाई से सिन्दूर की बिंदी लगाती हैं यहीं दीवाल मे काच भी लगा हुआ है. पास ही बीमारों के निकलने के लिए दो बारियां हैं. देवी की बड़ी मानता है. जातरी हर समय यहा बने ही रहते हैं बरेकण नाम के सम्बन्ध मे पूछताछ की पर कोई सूत्र सकेत हाथ नहीं लग पाये.

बरेक्णमाता के पास ही आमलिया गाव है. यहा जोड्या बावजी का स्थान देखा. दूर-दूर दो वृक्षो को मिलाती हुई एक जोड्डी बाध रखी थी और

नीचे रास्ता गाव मे होकर जाता है. पूछने पर पता चला कि इसके नीचे जाने वाला जानवर कभी बीमार नही होता यदि कोई पशु बीमार हो भी जाता है तो जोइडा बावजी के नाम का सडा, जेवडा पानी का छोटा देकर बाध दिया जाता है. मूल स्थान फतहनगर के पास है, वहीं से यहां थाम लाये हैं. लवण वहा से लाये भभूती पानी मे मिलाकर छोटा दे दिया जाता है हाथ पर डोरी वट कर उसको तातो बना उसे धूप मे खे कर मेवासी (जानवर) के बाध देते हैं. इससे डोबो, पागो की बीमारी जाती रहती है कभी कोई आफरा आ जाय, जानवर के कालजे मे कोई जानवर पड जाय, उसके खून मे ऊंगलियो जैसा सूमा वंध जाय, मुंह पर जाग पडने लग जाय तब भी यह तातो काम आती है. सदीव से, टेठ से, परम्परा से ऐसा चला आ रहा है. चाहे गाय हो, बैल हो, बकरी हो, भैंस गाडरा हो, कोई जानवर हो, उसकी सभी तरह से रक्षा करना हर किसान अपना प्राथमिक एव आवश्यक कर्तव्य समझता है. इससे पता चलता है कि जानवर आदमी का कितना प्रिय, घनिष्ट और हेलमेल का प्राणी रहा है.

यही पास मे भोम्याभूत का स्थान है. गोविंदा रावत ने बताया कि यह 100-200 बरस पुराना स्थान है. भूत और भेरू दोनो साथ रहते हैं. भूत के पत्थर पर तैल-सिन्दूर चढाया जाता है. भोपा कोई नही है नारियल चढाया जाता है. लोग डरते हैं वैसे पर यह सारी पूजा इसीलिये करते हैं ताकि वह उन्हें अन्यथा दुख न दे. उनकी रक्षा करता रहे और वैसे देवता को भी क्या चाहिये. धुप सुगधी से ही तो वे राजी रहते हैं. यही खेत मे पीता रावत ने मातलोक बताये. पूछने पर बोला कि कोई लुगाई मर जाती है तो वह मातलोक कहलाती है और उसे खेत मे या खले में या घर के बाहर ही स्थान दिया जाता है जबकि पूरवज, आदमी मृतक को, किसी देवरे के अन्दर प्रवेश दिया जाता है. पत्थर पर इनकी आकृतियां उभारी मिलती हैं. ये सब ऋषभदेव के कारीगरो द्वारा बने होते हैं और वहीं से लाये जाते हैं.

मुझे बताया गया कि यह सारा सदर्भ तो जीवता जीव री सेती है. पाच व्यक्ति मिलकर पूरवज लाते हैं और बिठाते हैं, स्थापन करते हैं भोपे ने बताया कि मरने के बाद आदमी जिस जूण मे जाता है, जो बनता है उसी शक्ल का पूरवज बनाया जाता है. औरतें भी किसी की मृत्यु के बाद आटे पर लैण जमी,

आकृति उभरी देखती हैं तब पता लगा लेती हैं कि मृतक किस योनि में क्या बना है, उसी की शक्ल का पूरवज बनाया जाता है. यह सब गुए के साथ पूजा वाला प्रसग है बिना शक्ल सूरत का जो पत्थर खड़ा कर दिया जाता है वह सीरा कहलाता है. इसे चीरा भी कहते हैं.

ग्रामल्या का धर्मराज का देवरा बड़ा माना हुआ है. यह देवरा भी बड़ा अच्छा बना हुआ है बाहर भी इसकी लम्बी चौड़ी जगह है. एक वृक्ष-ठूठ भी यहां है जिसकी टहनो मे ढोल लटका देखा. धर्मराज की सवाकार पत्थर की मूर्ति है जिस पर पूरी चांदी की खोल चढ़ी हुई है. अब तक राजस्थान के कई अचलो में मैं घूमा फिरा परन्तु मैंने ऐसी खाल चढ़ी कहीं अन्यत्र नहीं देखी. पूछने पर बताया गया कि डूंगले के एक जणवे ने यह खोल बनवाकर पहनाई है. उसने कोई मानता करी थी. कार्य पूर्ण होने पर उसने यह किया. मूर्ति के ठीक सामने, बाहर कई पूरवज बिठाये देखे गये. पूरवजों के कुल 28 पत्थर गिने गये जिनमे 54 आकृतियां खुदी हुई मिली.

किसी पत्थर पर दो, किसी पर तीन. जितने जिस घर मे मरते हैं उसी के अनुसार ये पूरवज हैं. कोई इनमे तीर लिये, कोई बदूकधारी, कोई छुरी लिये, कोई कटारी वाला तो कोई तलवार लिये है. तीन मूर्तियों मे बीच में एक सर्प और उसके दोनो ओर आजुबाजु मे ढाल लिये मानवाकृति. इन पूर्वजों में कुछ आकृतियां अपेक्षाकृत छोटी मिलीं तो पता चला कि ये बाल पूरवजो की हैं. जो बच्चे मृत्यु को प्राप्त होकर पूरवज बनते हैं उनकी आकृतियां छोटी होती हैं और उसी के अनुरूप पत्थर भी छोटा होता है. कुछ आकृतियां धुणी (धनुष) लिये भी देखी गई इन्हीं पूरवजों म एक पोल्या का अनघड पत्थर देखा जिस पर तेल लगा हुआ था. यह सबका रक्षक कहलाता है.

इस देवरे पर पहले से ही कुछ व्यक्ति बैठे चिलम तमाखु पी रहे थे. हमारे पहुचने पर आसपास के लोग भी आगये. रामासामी करने के बाद फिर जोड़डावावजी का प्रसग छिड गया तो पता चला कि खाकरा (वड) वृक्ष की जड को बटकर रस्सी बनाई जाती है. उसी की जेवड़ी होती है इसे वेल भी कहते हैं. इसे बटते समय थोड़ी-थोड़ी दूरी पर बीच-बीच मे दाब (घास) की कुचड्यां रख दी जाती हैं. वर्ष के प्रत्येक आने वाले भादवे के महीने में जोड़डा बावजी

जाकर नई जेवडी लाई जाती है. इसे करवाणी (छाटा) देकर बाधी जाती है, बावजी का नाम लकर.

यही कुछ देर बैठे गपशप करने पर नापजोख की बात निकल आई बडे विचित्र नाप के नाम निशान सकेत हैं आदमी खडा हो जाये और फिर एक हाथ ऊचा करे इतने बडे नाप को उप्ता (upta) कहते हैं बाम उसे कहते हैं जब एक सीध मे आदमी अपने दोनों हाथ पख की तरह फैला दे एक हाथ का नाप यानी कुहनी से लकर हाथ का नाप मरोडो देकर इधर वट वृक्ष की जडों से पतली, मोटी रस्सिया बनाई जाती हैं ये रस्सिया खाट बुनने मे भी काम आता है खाट की बुनाई म दो रस्सी साथ-साथ बुने तो 50 बाम, चार राडी बुने तो 100 बाम रस्सी लगती है हमने भीण्डर मे एक खाट के लिए यह रस्सी भी खरीदी

भादवे के महीन मे ही पाडे को मारकर किसी बाडे के निकास के स्थान पर रख दिया जाता है और फिर उस पर से जानवर कुदा कर बाहर किया जाता है ऐसा विश्वास है कि इससे जानवरो मे बीमारी नही आती है यह प्रथा सादडी मारवाड की ओर प्रचलित देखी गई मेवाड की ओर जो कालबेलिये होकर आते हैं वे अपने बैलो की गुणतिया भी खाकरे की जडो की ही बनाते हैं इन्ही जडो से बैलो के जोत, कुए पर चडस की नाड तथा रस्से बनाये जाते हैं. मारवाड की ओर के कालबेलिये आकडा से गुणती बनाते हैं

यही एक राव हम मिल गया यह वशवाचक था वशावली रखने वाले और भी लोग होते हैं एक-एक जाति की वशावली रखने वाले लोगो की बात चली तो मुखभाट ब्रह्मभाट, भवाई नट, ढोली, राव, बारहट स चलती-चलती हमारी बात टेठ पडा पर आकर समाप्त हुई

भीण्डर के पास उससे सटा गार्यावास है यहां गायरियो की बस्ती ही अधिक है इसे भीण्डर के पास वाली भागल भी कहते हैं यहा धर्मराज का देवरा देखा ताखाजी की मूरत थी शनिवार को यहां भोपे को भाव पडते हैं नवरात्रा में कुछ नही किया गया केवल सध्या-सध्या दीपक जरूर किया जाता है परताप गायरी ने बताया कि इस गाँव मे वधापा नहीं है. सख्या बढती नही है एक-एक घर मे इक्के-दुक्के लोग ही हैं

भोपा ने एक बार कहा कि इस गाव को छोड दो. खाली कर दो तो लोग पास हो के हीतालीमाता गये पर वहा फून नही दिया तो लोगवागो ने ग नहीं छोडा. बाहर मदिर के सामने पूरवज देखे गये भोपे ने बताया कि ए तो उसके बाप की है तसवीर. उसके पास एक जो हजूर्या था उसके पिता भ की तसवीर है पाती माग कर जिस जुग की धरमराज फरमाते हैं उसी तसवीर बनवानी पडती है यह तसवीर भीण्डर में ही सलावटी ने बनाई है.

जब हमने रखबदेवजी मे बनने वाले पूरवजों की बात छेडी तो उसने बता कि यहा की तो मूरत बडी प्रसिद्ध है. लोगवाग यहा जाकर श्राकृति लेकर फि गातोडजी जाते हैं और वहा की केसर जब उस पर चढती है तो ही वह देव बनता है, तब ही वह मूरत कहलाती है, तब ही देवरे मे जाकर उसकी थरप- होती है, नही तो वह कोरा भाटा ही है, पत्थर ही है. देवता नही। गातोडजी को इसका परचा मिला है कि यहा श्राकर यहा की छाप लगेगी तब ह मूरत कहलायेगी लोगवाग नहाधोकर रिखबदेव से बनी श्राकृति ले जाते ह गातोडजी का भोपा श्रपने हाथो से केसर चढाता है. गातोडजी की बाम्बी केसर भरा हाथ डालता है. यदि वह सच्चा होता है तो उसकी केसर घुल जात है, झूठा होता है तो साथ मे सर्प चला श्राता है मूरत को खडी यदि कर द जाय तो वहा से हिलती तक नही है इसलिए उसे श्राडी कर ही ले जाई जाती है परताप ने बताया कि उनकी जाति मे केवल पूरवज ही होते है. श्रौरतो क मातरका नही. कु वारे का कोई पूरवज नही होता. यदि कोई श्रौरत म जाती है श्रौर श्रादमी दूसरी शादी कर लेता है तो उस श्राने वाली श्रौरत क श्रपने गले मे उसकी श्राकृति धारण करनी पडती है.

केसर की बात चली तो द्वारका जाने की बात परताप ने सुनाई श्रौर कह कि गातोडजी जाकर जो छाप लगा श्राता है वह द्वारका नहीं जा सकता. द्वारक भी यदि गुपचुप चुपचाप जाये तो दरसन श्रच्छे होते हैं. परताप श्रौर उसके साथ 40 के करीब लोग द्वारका हो श्राये हैं. ये लोग चुपचाप चल निकलते हैं जाने के बाद फिर घरवालो को पता चलता है तब वापस जब सघ पूरा लौटत है तो बधा कर लाते हैं.

शाम को हम कालका मदिर पहुचे जहा सुबह गये ही थे श्रभी भोपे को भाव श्राये. उसी भाव मे पास बैठा एक भोपा श्रोतर पडा जिसे भेरू का भाव

ग्राया बीच में कई औरतो मे बैठी एक औरत ओतर पडी घूण पडी. उसे कहा गया कि अष्टमी को आना. भोपा बोला, यहा किसी से पूछताछ नही होती कि वह कौन है, कहा से आया है. एक झाड़ू लगता है तो जो भी लगी होती है, भाग खडी होती है किसी ने इसमे वीर रख दिया है. गलन्या वीर होता है तब शरीर धीरे-2 गलता रहता है. जलन्या वीर होता है तो शरीर मे जलन ही जलन चलती है. आठम को जिन औरतो को जो कुछ लगा होता है, चौकी की परिक्रमा करते ही उनके डील मे आ जाता है. भूत प्रेत यदि पवन मे आ जाते हैं तो बडी तकलीफ देते हैं इनकी जुदा-जुदा उम्र होती है. एक राडाजी होते हैं जो किसी तरह का नुक्सान नही पहुचाते. भूत नुकसान पहुँचाता है. यहा पहली फसल बोने की भी भविष्यवाणी की जाती है. दा पडने, मावटा पडने की बात भी कही जाती है राज काज कैसा चलेगा, यह भी कहा जाता है पहले तो चोरी चपाटी भी ठावी की जाती थी. एक बार एक व्यक्ति के घर चोरी हो गई भोपे को बताया कि यदि ठावी हो गई तो 100 रुपये भेंट चढाऊगा. चोरी बताये दिन ठावी हो गई. सारा धन मिल गया पर उसने 100 रुपये नहीं चढाये तब उसकी 18 बरस की लडकी धुनने लग गई. उसे लेकर परेशान हो वह दम्पति मदिर आया भोपे ने भाव मे कहा कि 100 रुपये चढाने की बात थी, तब तो बडा परेशान था. काम बनने के बाद मुझे याद तक नहीं किया. तभी उन्होने 200 रुपये चढाये और लडकी ने तत्काल धूणणा बद कर दिया भोपा बोला कि सब चमत्कार को नमस्कार है. कालका को आईनाथ तो ओपमा के लिए कहते हैं. यो चित्तौड से हो चार पीढी पहले यहाँ धाम आई हुई है.

रात को हनुमानजी का स्थान देखा. पुजारी बोला कि गत 20 वर्ष से यहा अखड दीप जला रहा हू. बालाजी के नाम का डोरा बाधता हूं कि सारे फद फादे भागते नजर आते हैं. हनुमानजी ने लखन को जिंदा किया है. वीर सिकोतरो की बात चल पडी तो उसने बताया कि वीर और सकोतरा बिना कुकर्म किये नही सधते. डाकन के पास पाच वीर होते हैं जिन्हे वह छिपाकर रखती है. उसकी सगत करने वाले को वह दे देगी और फिर अपनी चेली बना लेगी. डायन औरतो को लगती है. आदमी को प्राय: लगती नहो और यदि लग गई तो छोडेगी नहीं. जो डायन 100 को निगल चुकी होती है सिकोतरी बन जाती है. लालबाई फूलबाई सिकोतरी ही तो है. उसके पास सिकोतरी के रूप मे लाल चूडी रहती है. भीलवाडा के पास पुर, माडल, सेताखेडा तीनो मे सिकोतरी

है इनमे किसी को कगन तो किसी को चूडो दे रखो है सिकोतरी भूत भविष्य देख लेती है. मूल सिकोतरी है. सिकोतरा तो फेंका हुआ है जो जाकर रखा जाता है इस सिकोतरी मे मूल है लालबाई, फूलबाई शेष सब चेलिया हैं सिकोतरी के भाव आदमी को आते हैं, स्त्री का नही ये स्वय नही ओतरती, अन्यो को ओतराती हैं ये माताजी के नाम से काम करती हैं इनकी उम्र एक सौ बरस होती है

जगतवा आदमी के शरीर मे पूरी नही आती है केवल रूह आती है. *दूए गाव म नारसिंघी माता है कहते हैं वह खुले त्रिशूल-तलवार डालकर* निकलती है. भीलवाडा मे तो हाथ मे अग्नि लेकर जाते हैं आग को बाध लेते हैं 52 वीर का एक झूमरा होता है वीर काम करते रहते हैं एक डायन 5 से अधिक वीर नही साध सकती. उसने तीन वीर के नाम बताये पहला आज्ञाकारी जो हमेशा हुक्म मे हाजिर रहता है कहते जो करता है दूसरा कलवा और तीसरा मासाहारी.

सिकोतरी रोती हुई या हसती हुई आती है इसे सिद्ध करने के लिए या तो श्मशान या फिर हनुमानजी का स्थान होता है सफेद फूल वाला आकडा उसके नीचे रख देने स वह समाप्त हो जायगी लालबाई के लाल कपडा और फूलबाई के सफेद कपडा, फूदी लगती है. कुवारिया और चदेरिया मे इनके स्थान हैं बामणिया मे भी है जहा हर रवि को भाव आते हैं यह सिकोतरी सुगरी व नुगरी दोनो तरह की होती है. सुगरी तो निहाल कर देती है

उदयपुर के किन्ही बारहठजी का किस्सा है कि उन्हे सिकोतरी लग गई. वह प्रति रात उनके सग आकर सोती और परेशान करती एक दिन चारभुजा का एक पडा आया तो उसने कुछ टोटका किया. जिस कमरे मे सिकोतरी आती थी उसके जाड्या बांध दिया उस रात सिकोतरी और उसकी सहेलिया बाहर ही जोर-जोर से रोती रहीं यह रोज उदयपुर दरबार ने सुना तो उन्होने जगह-जगह चारभुजा के मदिर बनवाये.

डाकिन कोई दो-ढाई आखरो का मत्र साधती है किसी एक दिन हनुमानजी के मदिर मे जाकर नग्नपूजा करती है. उदयपुर मे मुझे एक व्यक्ति ने बताया कि डाकिन बनने का मत्र है—'डाडीडुच्च'. इसी सदर्भ मे उसने मूठ

मत्र का भी जिक्र किया जो हनुमान से ही जुडा हुआ है. मत्र के पूर्व हनुमान से कहा जाता है कि हे हनुमान ! यदि तूने मुझे मत्र पूरा नही कराया तो तुझे शपथ है. तू माता सीता का पति होगा. राम का सिर काटने का तुझे पाप *लगेगा लक्ष्मण की हत्या करने का तुझे पाप लगेगा'* यह वीर हनुमान होता है जो पचमुखी कहा गया है. कहा जाता है कि मूठ यति, सन्यासी, राजा तथा भजनी पर नही चलती है. मूठ कच्ची भी होती है पर वह असरकारी नहीं होती. सुना है कि उदयपुर के महाराणा शम्भुसिह ने किसी यति द्वारा यहा के श्मशान कीलित करवा दिये

बातचीत मे कुछ लोगो ने बताया कि जब किसी बालक की मृत्यु हो जाती है और वह प्रेत योनि मे जाता है तो उसे माल्या कहते हैं माल्या का कही मदिर या देवरा नही होता यह जिसे लग जाता है उसे अधिकतर उल्टी होती है, जी मचलना है, दस्तें भी लगती हैं यह प्राय. बच्चो को ही लगता है तब सात मुट्ठी अनाज को माल्या लगे बच्चे पर फिराकार चारो दिशाओ मे फैंक दी जाती है. यह बच्चो को ही नही, बच्चियो को भी लग सकता है.

सगस का जिक्र चला तो पता चला कि जहा-जहा भी भेरू के स्थान होते हैं वहा प्राय. सगस होता हैं. इसे लोगबाग बीडी, तमाखु, शराब व गाजा चढाते हैं. इसकी आकृति हाथ मे तलवार लिये घडसवार के रूप मे होती है. जहाजपुर मे कहते हैं, सगसजी के तीन स्थान हैं. अनजान प्रेतात्मा के रूप में सगसजी की स्थापना कर दी जाती है. इनका मुख्य भोपा तो धुणता ही है पर वहा बैठे और लोग भी धुणते हैं.

एक भेरू को साकलो से बांधा जाता है. कुए बावडी मे लटकाया जाता है. भदेसर व भीडोदा मे ऐसे साकलो से बधे भेरू कुए बावडी मे देखे जा सकते हैं. कहते हैं भेरू की छाया यदि किसी कुंवारी लडकी पर पड जाती है तो शादी के बाद जोडे सहित उसे भेरू की पूजा करनी पडती है नही तो वह चैन से नहीं रहने देता है. कानोड मे नलवायो के भेरू बडे आकरे हैं.

मेवाड मे गोगा नवमी पर कुम्हार मिट्टी के घुडसवार गोगा बनाकर घर-घर घोडा फेरता या घुमाता है. कोई घी गालता है. कोई दही चढाता है. कोई चापड़ा दूब चढाता है. धरमराज के देवरे मे औरतें भीतर धरमराज तक नही

जाती. वे बाहर से ही उनके दर्शन करती हैं. अकाल मृत्यु को अगन मोत कहते हैं.

कहते हैं ढोली मर जाता है तब भी बरसात नहीं आती है. भीण्डर में एक बार ऐसा ही हुआ तब भेडादेवत पूजा गया. तब मिट्टी का इन्द्र बनाकर उसे एक लोठा पानी से नहलाते हैं और सिन्दूर लगाकर घूघरी की धूप दी जाती है. कितनी विचित्र बात है, ढोली के पास रहने को मकान नहीं खुले में उसका ढोल रहता है. वह इन्द्र से प्रार्थना करता है कि वह न बरसे. बरसेगा तो उसका ढोल भीगेगा. एक जगह तो मैंने दीवाल पर उल्टी पुतली वर्षा देवी को लगी देखी गोबर की पूछा तो कहा गया, बरसात नहीं आ रही है सो यह टोटका है

बम्बोरा के पास इडाणा माता का स्थान है पत्थर के दातरे के रूप मे माताजी है. यह माता बडी आकरी, करडी है लोगो ने बडी कोशिश की कि वहा रोशनी आ जाये पर खम्भे लगे कि उडे. कहते हैं यह माता अगन नहाती हैं, अग्नि स्नान करती है

चैत्रसुदी पूर्णिमा हनुमान का जन्मदिन होता है. चवदस इनका खास दिन होता है. रात को 12 बजे बाद ये तामस वृति के हो जाते हैं. इनके तीन स्वरूप हैं—बाल, दास व वीर. वीर का स्वरूप डाकनियो आदि का है. राक्षसो का वध किया तो ये वचनबद्ध भी हुए. डायन मृतात्मा नही होती जबकि चुड़ैल होती है. डायनो के पास सवारी होती है. सबसे बडी के पास मगर-मच्छ होता है.

आज को अपनी यात्रा पूर्ण कर दूसरे दिन हमने रिखबदेव रोड की ओर प्रस्थान किया.

30-9-81

बारापाल के लीबडा वाला बावजी बहुत प्रसिद्ध हैं. लींबडा नीम वृक्ष को कहते है इसलिए यह नाम पड गया. ये धर्मराज हैं. सडक से चढकर एक ऊंची पहाडी पर जाना होता है. देवरा कच्चा केलू का है. भीतर देवताओं में धर्मराज, ताखा, काला गोरा विराजमान हैं धर्मराज के ककडी चढा रखी है.

नीचे बाडी मे जवारे भी रखे थे डाक पर धर्मराज का भारत गाते हैं यही पास की पहाडी पर ईलाजोमिलाजी हैं वहा बैठे लोगो ने कहा कि अभी तो कुछ होगा नही, रात को चौकी लगेगी तब पधारना.

वहा से थोडे आगे बढे कि एक ओर सडक पर भैरूजी का स्थान मिला. नया ही थरपाया हुआ है यह 5 वर्ष से रामदेवजी की धजा चढी हुई पास मे पखो, चीमटा, कोटवाल (गेडिया-गोटा-डडा), चटी आदि देखी. इतने मे भोपा भी आ गया

यही एक किस्सा सुना कि जयसमुद्र के पास गामडी गाम मे इयामाता है जिसे अम्बामाता भी कहते हैं यह पहाड के भीतर है इसके कई भोपे है पर यह वहां किसी को टिकने नही देती है वहा कोई रात को नही रहता. अकेली देवी रहती है नवरात्रा मे 500 करीब बकरे आज भी चढते हैं 4-5 पाडे मारे जाते हैं.

कहते है कि उस स्थान पर कभी लोग बांस लेने आये थे तो वहा विश्राम किया. बांसो मे भार होने से एक 8-10 वर्ष की लडकी वहां कलश लिये बैठी थी पानी पिलाने. सबने पानी पीया फिर उनके देखते-देखते कलश तो भरा का भरा ही रह गया और छोकरी गायब हो गई उन बांसों से जडें फूटने लगी और देवी प्रकट हो गई उस लडकी वाले स्थान पर, लोगो ने पत्थर बनी लडकी को हिलाया तो वह हिली भी नहीं, टस से मस तक नही हुई.

यहां आदिवासी भोपा है काम साधने पर कठी पहनाई जाती है. रवि को चौकी लगती है लोगो ने यहां भी मदिर बनाना चाहा पर माता ने नहीं बनने दिया. यहां गाल मे से तीर निकाला जाता है जिसे नेजा निकालना कहते हैं. आईमाता व इयामाता दोनो की कठी व गोल चलता है. अम्बा, मालर, इया, नारसिंघी ये सात बहनें हैं.

गातोडजी का बडा नाम है. दूर-दूर तक के लोग यहां आते हैं. खासतौर से सांप काटे लोग तो यही लाये जाते हैं यहां जाकर पता लगा कि गातोडजी और कोई नही गोगाजी ही हैं तो बडा आश्चर्य भी हुआ. उज्जैन से यहा धाम आई हुई है. धाम इतनी चलती है कि गाव में कोई बीमारी आ जाये और

चित्तौड़ा समाज की पंचायत भी वही जुटती है और जो भी निर्णय लिया जाता है उसकी पालना होती है. यों चित्तौड़ा समाज के आसपास के 9 गांव हैं. इन्हीं सबकी मिलकर पचायत बैठती है. गातोडजी के नाम की बोलमा आज भी इस समाज मे चलती है और कार्य सिद्धि पर चूरमा कर बढ़ाया जाता है.

श्री कोठारीजी ने बताया कि गातोडजी के यहां तो चोरी की परीक्षा भी ली जाती है. किसी के चोरी होने पर जिस पुरुष पर सन्देह किया जाता है उसे गातोडजी की बांबी म हाथ डालने को कहा जाता है यदि उसका कुछ नहीं बिगड़ता है तो वह सच्चा समझ लिया जाता है पर यदि हाथ डालते ही अगुलियों मे खून निकल आता है तो वह चोर साबित होता है ऐसे चोरों का पता लगाते हुए कोठारीजी ने भी एक व्यक्ति को वहां देखा था जिसके बांबी मे हाथ डालते ही अगुलिया खून से तरबतर हो गई थीं और उसके पास से तब चोरी का माल भी बरामद किया गया था. इधर यह भी सुनने मे आया कि नागों से मांगने वाली एक नागमगा बारोट जाति होती है जो जीवन में केवल एक ही बार मागती है वह जाति नाग जाति की वंशावली रखती है. कुछ वर्ष पूर्व गुजरात, कच्छ, सौराष्ट्र मे यह जाति थी.

1-10-81

इस दिन की यात्रा हमने गामेडी गांव के श्यामाता मंदिर से प्रारम्भ की. देवी के सम्मुख एक शेर बना हुआ जिसके मुह से मालीपनो की जीभ लटक रही थी. यह स्थान जयसमद से एक कच्ची सडक से जाने पर है कोई 6 किलोमीटर. एकांत मे ऊंची चढ़ाई पर यह स्थान है. यह कोई पहले बना हुआ बड़ा कलात्मक मंदिर लगता है. मंदिर जीर्णशीर्ण स्थिति मे है पत्थर इधर-उधर पड़े हुए हैं पास ही में कुड है जिसका पानी कभी सूखता नहीं है. मंदिर मे स्थापित मूर्ति बाद की लगती है. गामेडी मे राठौड़ो की बस्ती है अत. यह स्थान उनकी देवी का ही लगता है. राठौड़ लोग पाबूजी को मानते है पड़ भी बचवाते हैं. धरियावद से कभी-कभी पड़ बाचने वाला आता है. जो भी राजपूत इधर का शादी करता है वह सजोड़े श्यामाता आकर दर्शन करता है. श्यामाता की कठी चलती है. बीटी भी पहनाई जाती है जिसे गोल पहनाना कहते हैं.

यहां से हम रूडेडा गये. यह लोकदेवता कल्लाजी का प्रसिद्ध स्थान है. चित्तौड़ के युद्ध मे जब कल्लाजी का सिर कट गया तो वे रूड रूप मे वहा से

यहीं मारे गये और उनके साथ उनकी वचनबद्ध प्रिया कृष्णाकुमारी सती हुई. कहते हैं गोग चुहाण कल्लाजी के मामा थे यह स्थान सलुम्बर से 11 किलोमीटर है. यहां मैं दो एक बार पहले भी जा चुका हू और इस सम्बन्ध में काफी लिख भी चुका हू.

सलूम्बर-जयसमन्द का यह इलाका छप्पन इलाका के नाम से प्रसिद्ध है. जयसमन्द के आगे मेवल प्रारम्भ होता है. डूगरपुर का इलाका वागड़ कहलाता है. उधर बिजोलिया का इलाका खैराड़ नाम से जाना जाता है. बिजोलिया चित्तौड़ का इलाका ऊपरमाल कहलाता है इन इलाकों की प्रकृति-संस्कृति का अपना वैशिष्ट्य है. इस परिवेश का भी अध्ययन अनुसंधान आवश्यक है.

रू ंडा से सलूम्बर लौटते समय रास्ते में नदी के किनारे एक वृक्ष पर दो आदमियों को हमने सिन्दूर मालीपना लगाते हुए देखा. हमने अपनी गाड़ी रोकी और उन तक पहुँचे पूछने पर उन्होंने कहा कि जगह-जगह लोगबाग रूंख काटते जा रहे हैं सारा वन खड उजड़ता जा रहा है. कहीं नदी के किनारे बचे ये वृक्ष ही न कट जायें, इसलिये यहां बावजी की स्थापना कर रहे हैं ताकि वृक्ष कटने से बचे रह सकें. इससे न तो बकरिया चराने वाले इन्हें छूड़ेगें और न ही कोई इन्हें काटेगा. हमने देखा, वृक्ष की गोड़ में माताजी और भेरूजी की स्थापना कर दी गई है. वृक्षों की सुरक्षा का और उन्हें सुरक्षित रखने का यह भाव लोकजीवन का कितना मांगलिक है वृक्षो पर वैसे भी लोकदेवी-देवताओं का निवास माना गया है.

यहीं से संध्या होते-होते बारापाल लोबड़ी वाले बावजी के वहा देवरे पहुँचे. हमने यहां धर्मराज तथा भेरुजी के दो भाव एक साथ दो भोपो को आते देखे. पहले धर्मराज का भाव आया. भाव ही भाव में जवारे को बडी अदब से पानी पिलाया गया फिर भोपे ने गो मूत्र पिया फिर अमल का पानी पिया और तदनन्तर सिन्दूर लेकर चोराई (बडे घूघरे) तथा नगारों के बिंदिया दी.

पूजा चारो दिशाओं में घूम-घूम कर की गई. पहले सेवा पूजा धर्मराज के भोपे ने की फिर भेरू के भोपे ने. चौराई बजे. नगाड़े, थाल, थाली बजी. आसपास का वातावरण गूंज उठा. ऐसी चारों ओर की सेवा हमने अम्बामाता

के मंदिर मे भी देखी गातोडजी मे. सेवा के अन्त मे हर व्यक्ति एक दूसरे से धोक-धोककर रामासामी करता है.

यहा तो हमने 21 कॅकडे उतारते देखा. आखे पानी दी 5 आखे सिन्दूर में मिलाकर नीम के पते सहित खाने को दिये जैसी बीमारी होती है उसी के अनुरूप उसका इलाज किया जाता है एक को आखे देकर यहा कि घरवालो को पानी मे इन्हे डालकर पिला देना कॅकडे जिनके भी उतारे उन्हे बाहर हनुमानजी के यहा धोक अवश्य देनी होती है. यह देवरा मीणो का है मीणे ही यहा भोपे हैं साप कटे यहा भी आते हैं. सर्पदंश पर आदिवासी लोग गातोडजी, नाथूजी या फिर लाखाजी के नाम का डोरा बाधते हैं गातोड़जी के एक सेवक से बातचीत मे पता चला कि उसने गातोडजी को सर्प रूप मे देखा यह सर्प हाथ बराबर बडा, अगूठे जैसा मोटा तथा केसरिया रग का था.

धर्मराज के देवरे मे जो गोल पहनाई जाती है वह भेरूजी की गोल कहलाती है. जागरण की सुबह आसपास के फळो मे सेवक को भेजते हैं जो धान चून आटा लाता है. पूरी नवरात्रा मे हजूरिये सेवग चोराई वाले को शुद्ध रहना पडता है एक बार,एक हजूरिया चोराई को वृक्ष पर टाग कर घर चला गया और अपनी पत्नी के साथ अशुद्ध हो गया, तब वह घर मे ही बीमार हो गया, ऐसा कि उसे उठाकर देवरे लाये तब बावजी ने सारी गाथा घटना अपने आप कह सुना दी. फिर लोगो की सिफारिश पर बावजी ने उसे ठीक किया. इसी प्रकार एक बार एक व्यक्ति जो देवरे मे काम करता था उसने किसी लडकी को छेड दिया जब वह चोराई टांगने गया तो वहा उसे सर्प ने काट खाया. उसे तत्काल देवरे लाया गया जहा बावजी ने सारी बात बतला दी.

यहा देवी अम्बाव का भारत गाया गया जिसमे गायकी के साथ एक पूरी कथा चलती है गायकी की कथा के बाद फिर दूहे कहकर भारतगाथा आगे बढ़ती रहती है.

मूठ

अनिष्टकारी विद्याओं मे मूठ एक ऐसी विद्या है जिसका नाम सुनते ही रोम-रोम मरा मरा हो उठता है भयावनी अकाल मृत्यु सामने दिखाई देती है. इस पापिनी विनाशिनी का नाम लेना ही नरक जाना है मूठ मारो या सात पीढी तारो जैसी कहनी से स्पष्ट है कि इसके साथ कितनी घृणा और हेय दृष्टि जुडी हुई है मगर राजस्थान मे तो इस मारक विद्या का बडा कोप प्रकोप है. मूठ का प्रयोग करने वाला कभी फला फूला नहीं है. उसकी मौत कुत्ते से भी गईबीती मौत समझी गई है वह स्वय ही नही, उसका सारा परिवार कण कण का होता देखा गया है और कहते हैं उसकी सात पीढियों तक इसका कु-असर रहता है फिरभी लोग हैं कि जो जरा-जरा सी बात पर अपने दुश्मनों को मूठ द्वारा अगत मौत देकर ही दम लेते हैं

रिद्धि सिद्धि मगल के दाता गणेशजी भी मूठ के पकेपकाये खिलाडी थे. आदिवासी भीलो के गवरी नाच के एक भारत म किस्सा आता है कि दशहरे के दिन देवियाँ मानसरोवर मे पाती विसर्जित करने गई तब बेडव डीलडौलधारी गणपत को सोया ही छोड गई. सुबह जब आँख खुली तो गणपत अपने को अकेला पा बडे आगबबुला हुए. उन्होने आव देखा न ताव, वही से उडद मन्त्र कर फैंके जिससे जाती हुई देवियों के रथ के पहिये पाताल मे जा घुसे और धरू ठे आकाश मे जा लगे. सारे देवी देवताओ मे खलबली मच गई. पचासो उपाय किये मगर रथ टस से मस नही हुए तब किसी समझेबुझे की शरण ली गई. रथ पर मुट्ठी वारी गई और धारनगर ले जाकर धारिये भील को बताई गई. मुट्ठी देखकर धारिये ने देवी अबाव को सारी घटना कह सुनाई. यह कि देव-समालिये मे गणपत को अकेला छोड देने के कारण उसीने मूठ चलाकर यह गड-बड किया है. उसे जाकर मनाओ तो ही स्थिति पूर्ववत् हो सकेगी. यही हुआ. देवी ने गणपत को मनाते हुए कहा कि आगे से जो भी नया शुभ कार्य किया जायगा, सबसे पहले तुम्हारी मानता होगी. तब जाकर गणपत ने अपनी मूठ वापस झेली और अब हर नये शुभ कार्य पर विघ्नहरण मगलकरण के लिये लबोदर गणराज को पाट बिठाया जाता है.

मूठ कई प्रकार की होती है. मोतीरामबा ने अपने उस्ताद से इसके तीन सौ साठ प्रकार सुने थे. मानजीबा ने तो इसे पोप विद्या कह कर भी इसके अस्तित्व को कई किस्सों में कह दिया बोले कि मूठ यू तो हवा का गोटा है पर जिस पर फैंके उस पर हनुमानजी के गोटे की तरह असर करती है

आषाढ माह मे मुर्दे की खोपडी को जमीन मे गाडकर उसमे उडद बोये जाते हैं और तब जो उडद तैयार होने हैं उन्हे मंत्र द्वारा पकाया जाता है. उडद के अलावा मकई, जवार, मूग के दानो को भी मूठ के लिये साधते हैं पर उडद ज्यादा असरकारी समझे जाते हैं एक व्यक्ति ने तो मुझे ककडियों के माध्यम से मूठ का एलम पकाने की बात बताई.

उसने कहा कि कलाल जाति के किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर रात को बारह बजे उसके सिरहाने खडे होकर एक मंतर पढते जाओ, एक कंकरी छोडते जाओ. इस प्रकार एक सौ आठ बार मंतर पढ़कर एक सौ आठ कांकरिया साध ली जाती हैं. वह जल्दी-जल्दी मे मंत्र कुछ इस तरह बोल गया-

> ॐ हनुमान हठीला/दि वज्र का ताला/
> तो हो गया उजाला/हिन्दू का देव/
> मुसमान का पीर/वो चले अनरथ/
> रैण को चलै/वो चलै पाछली रैण को
> चलै/जा बैठे वैरी की खाट/दूसरी घडी/
> तीसरी ताली वैरी की खाट मसाण मे/

मैंने जब उसे ठीक से पूरा मंत्र बोलने को कहा तो उसने कहा कि मंतर बताने का नही होता. जो कुछ उसने बताया वह भी गलती कर गया.

कलाकार रमेश ने बताया कि एक मूठ यह बोलकर भी साधी जाती है-

> कचरणी बांधु सचरणी बांधु चलती बांधु मूठ।
> दुसमण की बत्तीसी बांधु पडे कालजो टूट॥

मूठ श्मशान जगाकर, निर्जनवन मे प्राय बबूल वृक्ष के नीचे, कंठ तक पानी मे [illegible] उल्टी घट्टी चलाकर भी साधी जाती है. इन सबमें नग्न साधना यह प्राय नवरात्रा मे या फिर धनतेरस, [illegible] तथा दीवाली

की काली रातो मे पकाई जाती है   भैंसा, बकरा तथा मुर्गे का रक्त भी इसके लिये अनिवार्य है.

एक मूठ तो वह होती है जो तीसरी ताली मे सारा काम तमाम कर देती है और एक मूठ वह जो मियादी होती है   इसमें तीन घटे से लेकर तीन दिन, तीन महीने, तीन वर्ष जैसा समय होता है. इन मूठो मे जहा ककड, मू ग, मोठ के दाने चलते हैं वहा भाव शब्द भी चलते हैं. देवेन्द्र मुनि शास्त्री ने बताया कि अहमदाबाद में मुनि जेठमल और यति वीरविजय के बीच शास्त्रार्थ चला तो जेठमल मुनि पर एक-एक कर बावन मूठ आई जैन साधु होने के कारण मुनिजी किसी अन्य पर उसका प्रहार नही चाहते थे अत: उन्होने बावन ही मूठ किंवाड पर फेंकली जिससे उस पर बावन छेद हो गये. देवेन्द्र मुनि ने बताया कि ग्रथो मे पेशाब पीकर तथा शौच जाते हुए मूठ साधने के उल्लेख मिलते हैं. सचमुच मे यह असुर साधना है   मूठ सतर, मतर, जतर तीनो है   मूठ फैंकने वाला मूठ को झेलने, थामने, ठहरा देने तथा वापस करने का भी जानकार होता है.

मूठ सिवखड सर्वप्रथम वृक्षों पर अपना प्रयोग करते हैं. ऐसी स्थिति मे जब मूठ डालने पर लहलहाता वृक्ष सूखकर काटा बन जाय और पुन. काटा बना वृक्ष लहलहाने लग जाये तो समझ लिया जाता है की मूठ की सार्थक पकाई होगई है तब मनुष्यो पर इसका प्रयोग प्रारभ कर दिया जाता है. मेवाड का आमेट क्षेत्र तथा पाली का पामुण्डेरी, नाणा एव जालोर का सियाणा, बागरा क्षेत्र मूठ का बडा प्रभावी क्षेत्र रहा है. आदिवासियो मे इसका प्रचलन सर्वाधिक मिलता है. इनमें आम तथा महुवा जैसे वृक्षो पर खूब मूठ मारी जाती है जो इन आदिवासियों की आजीविका के मूलाधार हैं.

ये आदिवासी मूठ बांधने मे बडे तगड़े होते हैं. फसल पकने पर अपने पूरे खेत को ऐसा बाध देते हैं कि कोई भी फसल को नुकसान नही पहुँचा सकता. यदि कोई खेत मे घुस जायगा तो वह वही घूमने लग जायगा और वहां से भागना बनेगा. इसी प्रकार गन्ने का रस उबलते गुड के कडाव बाध दिये जाते हैं. बकरे का लोह करने जाते वक्त तलवार बांध दी जाती है. और तो और शराब की भट्टी तक बांध दी जाती है जिससे लाख प्रयत्न करने पर भी शराब की एक बूद नहीं बन सकती.

*मनोविनोद के सार्वजनिक अवसरों संस्कारों पर भी मूठ का प्रयोग बहुता-*यत मे देखा गया है भीलो के सुप्रसिद्ध गवरी नाच मे जब सारे गांव के भील मिलकर अपने आदि देव महादेव शकर को रिझाने के लिये सवा महीने की गवरी लेते हैं तो उसे जादू टोना तंतर मंतर मूठ आदि सर्वनाश से बचाने के लिये किसी होशियार मादलिये की खोज करते है मादलव दक्ष ही ऐसा जानकार होता है जो समग्र गवरी की रक्षा करता है अच्छे जानकार मादलिये के अभाव में गवरी ली ही नहीं जायेगी

डालू भील ने बताया कि गवरी म अवसर पर बणजारा मियावड, गोमा, नट, बूडिया तथा राइयो पर मूठ फेंकी जाती है मादल बजाने वाला मादलिया गवरी प्रदर्शन के दौरान बडा सचेत रहता है और मूठ आदि का झेल कर, कभी कभी जैसी आई वैसी थाम कर अभिनेताओ की रक्षा करता है एकबार की गवरी मे जब बणजारे का अभिनय चरमसीमा पर था कि मादलिये ने बिना किसी खेल के व्यावधान के अपने पास मे पडे एक जूत को त्रिशूल के ऊपर ठहरा दिया. जूता बिना किसी सहारे के अपने आप चक्कर खाता रहा गवरी का खेल भी यथावत चलता रहा. बाद मे पता चला कि बणजारे पर किसी ने मूठ फेंकी थी जिसे मादलवादक ने जूत के सहारे थाम ली यह मादलिया अपने *साथ एक लाल झोली रखता है जिसमे कुछ नीबू मतरे हुए पडे रहत है. गवरी* मे नाचने वाले लोगर ने बताया कि दो वष पूव भारतीय लोक कला मडल मे काम करने वाला कलाकार गोपाल गवरी म बणजारे का साग करते मारा गया जिस पर किसी ने मूठ की थी यही नही नाथद्वारा के पास थोरा घाटा मे रम रही सम्पूर्ण गवरी ही मूठ की ऐसी शिकार हुई कि वही की वही ढेर हो गई. जहा सभी खेल करने वाले खेल्य मरे वहा उन सबके स्मारक के रूप मे पत्थर के पूरवज बिठा रखे हैं जो उस घटना को ताजी किये हैं यह गवरी भवानीमाता की भागल गाव की थी.

पुतलो के रूप मे मूठ के भी कई अजीब करिश्मे देखने सुनने को मिलते हैं इस प्रकार की मूठ में जिस व्यक्ति को मौत देनी होती है उसके नाम का पुतला *बनाया जाता है यह पुतला आटे का, नमक का, मिट्टी का अथवा कपडे का* बना होता है और इसे मतर कर किसी कुए बावडी मे या जमीन में डाल दिया *जाता है ज्यो ज्यों यह पुतला गलता रहता है त्यो-त्यो मूठ किया व्यक्ति* क्षीण होता रहता है और अन्त मे यदि किसी समझेबूझे से पुख्ता इलाज

नही करवाया गया तो उसे मृत्यु की शरण लेनी पड़ती है इन पुतलों में जगह जगह पिनें भी लगाई जाती हैं. इसका आशय यह होता है कि जिस-जिस स्थान पर पिन लगाई गई है, मूठकारी व्यक्ति का वह-वह स्थान बड़े कष्टों से घिरा रहता है और ऐसा दर्द देता है जैसे किसी ने एक साथ हजारों पिनें चुभो दी हो.

पुतलों की तरह ऐसे ही प्रयोग पिनें चुभे नींबू को लेकर किये जाते हैं. युवा पत्रकार श्री ब्रिजमोहन गोयल ने अपने जन्मस्थान फालना का किस्सा सुनाते हुए कहा कि एक बार वहा के रकबा मोची और उसकी एक महिला रिश्तेदार के बीच बड़ी जोर की तनातनी हो गई तब उसकी रिश्तेदार महिला ने उससे कह दिया कि यदि सात दिन के अन्दर-अन्दर तेरे को नही देख लिया तो अपने बाप की असली मूत नही रकबा के दिमाग से यह बात आई गई होगई मगर सातवें ही दिन जब वह अपनी दुकान मे बैठा गोयल से स्वस्थ चित्त मन बात कर रहा था कि अचानक मुंह के बल गिरा, पेशाब छूटा और श्वास निकाल दी. बाद मे गोयल ने वहा एक नीबू पड़ा देखा जिसके सात पिनें लगी हुई थीं मगर वह नीबू कहा से कैसे वहा आया, अब तक एक पहेली बना हुआ है. लोगबाग आज भी कहते सुने जाते हैं कि रकबा को उस महिला ने मूठ से मरवा दिया.

कभी-कभी आपस मे बड़ी जोर की अदावदी हो जाती है तब एक पक्ष दूसरे को मूठ से मरवाने का खुला निमंत्रण दे बैठता है. ऐसा ही एक निमंत्रण आज से कोई पैंतीस बरस पूर्व नागौर जिले के डोडियाना गांव में जेठमल दरजी को दिया गया. कहा गया कि फलांदिन सुबह तुम्हारे घर पर मूठ आयेगी- हिम्मत हो तो उसका मुकाबला करना. उसी दिन सुबह ठीक साढ़े आठ बजे जेठमल के घर से धुंआ उठा. धुआ उठते ही सारा गाव उलट पड़ा और अपने-अपने घरो तथा कुआ बावडियो से पानी ला-लाकर मकान को भस्म होने बचाया. यह अच्छा हुआ कि केवल मकान जल पाया, कोई आदमी मरा नही. बाद मे वहां से कपड़े का एक पुतला निकला जिसमे पिनें लगी हुई थी. डा. नेमनारायण जोशी ने अपने गाव को यह घटना सुनाते हुए कहा कि समझेतुर्क ऐसे आदमी भी देखे गये हैं जो हाथ की पाचो ऊंगलियों की पांचो नाड़ियों को देखकर बीमारी का पता लगा लेते हैं. कहते हैं कि अंगूठे और उसके पास वाली ऊंगली की नाड़ी यदि नहीं चलती है तो मुबा हो जाता है कि

किसी ने कोई कला कर दी है यानी मूठ फेंकी है या कि वीर चलाया है या सिकोतरी-सिकोतरा किया है.

यह मूठ पुरुष ही चलाते फेंकते हैं. कहीं नहीं सुना कि औरतें भी मूठ फेंकती हों. लेकिन औरतों में एक अलग प्रकार है माईजी का जो मूठ का भी बाप कहा जाता है. यह पशुओं को यदि लग जाय तो उनका वहीं कलेजा निकल जाये. भोमट के प्रत्येक आदिवासी परिवार में सिकोतरी साधा व्यक्ति मिलेगा यह उनके घर की रक्षिका है. यदि कोई पशु आदि चोर ले गया तो यह उसकी प्राप्ति कराकर ही रहेगी. दीवाली की काली रात को कई लोग उल्लू वश में करने की कठोर साधना करते हैं. कहते हैं यह बड़ी मुश्किल से वश में होता है यदि वश में हो गया तब तो जो चाहो सो पाओ पर यदि विपरीत स्थिति पैदा हो गई तो सिवाय अपनी जान गँवाने के और कोई चारा नहीं. उदयपुर के पास कुंडाल गांव के एक डागी ने चार उल्लू इसी दृष्टि से पाले मगर उल्लू उसके वश में नहीं हो सके उल्टा डागी ही उल्लूओं द्वारा मार दिया गया.

भूतों का मेला

राजस्थान मे एक से एक बढ चढ़कर कई दुर्ग हैं मगर 'गढ़ तो चित्तौड़गढ़ और सब गढ़ैया' ही कहे जा सकते हैं. चित्तौड़ कई बार जाना हुआ कभी ग्राम्य मनोरंजन के सूर्य की पहली किरण तक रात-रात भर खेले जानेवाले तुर्रा ख्यालो के उस्ताद चैनराम स मिलने तो कभी बहुरूपियों की स्वांग-झांकियो के सिलसिले म बसी गांव भी इसी क पास स्थित है जहां की काष्ठकला कठपुतलियां और कावड़ो ने विदेशियो तक को प्रभावित कर रखा है चित्तौड के छीपे भी बडे प्रसिद्ध हैं जो कपडो पर पुरानी चाल की छपाई करने मे करीगर उस्ताद हैं. चित्तौड का किला तो बडा जोर जबर्दस्त है ही. यहा का प्रत्यक कण अपने आप म इतिहास शौय का जीता जागता दस्तावेज है किन्तु उतना ही अब मौन शान्त गुपचुप चाहिये उसे कोई जगानेवाला जो कुछ यहा सुनने-पढने को मिलता है वह तो कुछ नहीं-कुछ नही' है यहीं लोगा के मु ह से सुना कि हर दीवाली भूतों का बडा भव्य मेला लगता है जानने को तो सारा चित्तौड जानता है यह बात आसपास के इलाके भी जानते हैं मगर देखा किसी ने नहीं

यह देखा मैंने पहली बार एक देहधारी मनुष्य ने लोकदेवता कल्लाजी की दिव्यात्मा ने अपने सवक सरजूदासजी के शरीर मे प्रविष्ठ हो मेरे अन्तर्चक्षु खोले और 15 नवबर 1982 की दीवाली को इस अद्भुत अलौकिक एव अविस्मरणीय मेले का साक्षात्कार कराया इस साल दो दीवाली पडी. यह मेला भी दोनो दीवाली को भरा

दीवाली के एक दिन पूर्व, रूप चवदस को ही मैं सरजुदासजी के साथ चित्तौडगढ़ पहुच गया वहां अन्नपूर्णा माता के मन्दिर मे हमारे ठहरने की व्यवस्था हो गई रात को दस बजे करीब हम सोने को ही थे कि अचानक सरजुदासजी के शरीर मे सेनापति मानसिंह का भाव आया नीची बन्द आखें किये बडे नपेतुले शब्दो में वे बोले— 'मुझे दो दिन पहले भेजा है सारी व्यवस्था के लिये. दस हजार सैनिक जगह जगह नाकेबदी कर खडे हैं आप लोग जब

तक यहा रहेंगे तब तक वे आपकी रक्षा के लिए यही रहेंगे दुनिया ने मुझे नमकहराम यहा पर मैं नमक को कभी नहीं भूला. बडे-बडे राजा हमारे पीछे थरथराते थे कोई नही जानता कि दुश्मन के घर रह हमने खाया पीया मगर काम अपना किया'

'यह जय चित्तौड है यहा बडी-बडी सतिया हुई हैं यह एक ऐसी धरती है जिसे जब-जब भी प्यास लगी, इसने पानी के बजाय खून लिया है इस मेले मे सभी तरह के लोग आयेगे अच्छे भी होगे और बुरे भी जो कुछ देखें मन मे रखें.'

मैंने विनीत भाव से उनकी यह बात सुनी और 'हुक्म-हुक्म' कहा अपनी इस बात के दौरान उन्होने बार-बार 'दुनिया के बेटे' और जय विश्वम्भर' शब्द का उच्चारण किया यह सब कहकर, हमे सावचेत कर, भलावण देकर मानसिहजी चले गये पर रात को जब-जब भी मेरी नीद खुली, मैंने पाया कि मानसिहजी उस पूरी रात सारी व्यवस्था ही करते रहे कभी मैंने सुना वे निर्मयसिहजी को बुलाकर आवश्यक निर्देश दे रहे हैं तो कभी सिणगारीबाई से बातचीत कर रहे हैं कि सारी व्यवस्था दे खलेना. यह कर लेना, वह कर लेना वे कइयो के नाम लेते जा रहे है और फटाफट निर्देश देते जा रहे हैं

दीवाली के दिन, दिनभर मैंने शिवमन्दिर और उसके अहाते मे बने महल मे मीरा बाई का निवास देखा महल के सामने मीरा की दोनो दासियो के खडहर-चबूतरे देखे पास मे बना भोजराज का महल देखा. गोमुख देखा और जौहर कुड देखा उधर लाखोटिया बारी का वह लम्बा फैला परिक्षेत्र देखा. वह स्थान देखा जहा जयमलजी रात को टूटी हुई दीवाल ठीक करा रहे थे कि धोखे से अकबर ने अपनी 'सग्राम' नामक बन्दूक का उन्हे निशाना बनाया. उनकी टाग मे गोली लगी वे जिस चट्टान पर जाकर सोये वहा अभी भी खून गिरा हुआ है. मेरे साथ सरजुदासजी कम, कल्लाजी ही अधिक रहे. जब-जब भी उन्हे किसी स्थान के सम्बन्ध मे किस्से, बीती घटना, इतिहास और उससे जुडे प्रसग बताने होते वे सरजुदासजी मे साक्षात हो आते और एक-एक कण-कण का विस्तृत हाल बता जाते, रोमाचित कर जाते. उनके जाने के बाद मुझे वे सारी चीजें सरजुदासजी को बतानी पडती कारण कि तब सरजुदासजी नही होते कल्लाजी होते. मीरां के सम्बन्ध मे तो कई चौंकानेवाली बातें बतायी. उसका तो सारा इतिहास ही अलग है वह फिर कभी कहा जायेगा.

शाम को 7 बजे करीब मैं और सरजुदासजी मेले के लिए अन्नपूर्णामाता के मन्दिर से चले साथ मे मिठाई, नमकीन, धार (शराब), गूगल, अतर, अगरबत्ती, अमल ककू, केसर, चावल, गोली, पानी हुक्का, गुड मिश्रित गेहू की घूघरी, (बाकला) आदि लिया ताकि मेले म आये सुगरे नुगरे देवताओ को राजी कर सकें मदिर के अपने कमरे से बाहर आकर सर्वप्रथम हमने सबको नूता, न्यौता दिया कहा– 'जितने भी देवी देवता पीर पैगम्बर शूर सती हैं, सब मेले म पधारजो हम आपको नूतने आये हैं हमे और कुछ नही चाहिये, केवल आपके दरसन करने आये हैं '

हम कालिका मन्दिर के सामने जाकर बैठ गये और एक बिछात पर सारा सामान तरतीबवार रख दिया अधेरा घना बढ़ता जा रहा था कोई आवागमन नही था लगभग साढे आठ बजे तक हम चुपचाप बैठे रहे और प्रतीक्षा ही करते रहे इस बीच कभी कोई जोर की आवाज आती, कभी जोरो का कोई प्रकाशबिंब आता दिखाई देता कभी हवा जोर की सन्नाटेवाली लगती और कभी बिलकुल शान्त. कभी किसी स्थान विशेष पर लगता कि आदमियो का जुडाव है तो कभी पास दूर महल-खण्डहरो मे चहलपहल होने का एहसास होता हम आँखें फाड फाड कर दूर नजदीक अपने आसपास चारो ओर देखते मुझे लगता जैसे कोई पुष्पक विमान आया और पुन लोप हो गया

लगभग साढे नौ बजे अचानक मानसिहजी आये और बोले– 'जल्दी करो, अपना सामान समेटो, सब इधर ही आनेवाले हैं, दो दीवाली होने के कारण इस दीवाली पर नुगरे (बुरे) ही अधिक आये हैं मगर आप डरें नही मैं आपके साथ रहूगा ' सारा सामान समेटने मे मुझे कोई समय नहीं लगा और मैं चल पडा उनके साथ ऐसा लग रहा था कि किसी बडी भीड मे मैं जा फसा हू जैसे जानवर भडक गये हो और बेरोकटोक भाग रहे हो ऐसे भूतप्रेत भागे जा रहे थे धक्कामुक्की करते भीड भरे मेला मे जो स्थिति होती है वैसी ही मेरी होती रही मगर उसी तेजी से मानसिहजी कभी बाकले लुटाते, कभी मिठाई, कभी धार देते पूरे रास्ते हम त्वरा से बढते रहे बीच राह पर एक जगह मुझे उन्होने रोक दिया सामने देखा, पत्ता महल के पासवाले तालाब मे घुडसवार के रूप मे जयमलजी की आकृति एक तेज प्रकाशपुज पृष्ठभूमि मे मे घना काला अधेरा काफी देर तक मैं उस दिव्यात्मा के दर्शन करता रहा बडा आत्मीय सुख मिला. जब तक मेरा मन भरा नही तब तक वह दिव्य आत्मा मेरे सम्मुख बराबर बनी रही इसी पत्ता महल के आसपास डेरे डले हुए थे तम्बू लगे हुए थे. थोडी देर बाद पत्ता महल से जोर जोर की

आवाज आई. मुझे सावचेत किया गया. मैंने देखा, महल के बीचोबीच ठेठ भीतर तक वैसा ही एक प्रकाशपुंज कुछ अधिक तेजोमय दिखा आकृति विहीन. यह दाताजी कृष्ण की छवि थी. इसके पश्चात एक अपेक्षाकृत छोटी दिव्याकृति और दिखाई दी. यह कुंभाजी की थी. एक विराट आदमकद आकृति.

यह सब कुछ दस ही मिनट का खेल रहा होगा. कालिका मन्दिर से मोतीबाजार तक की कोलतार से बनी पक्की सडक हमने कैसे नापी, कुछ पता नही चला. पता चला कि इतनी मिठाई और नमकीन और बाकले, मुट्ठी भर भर डाले, बिखेरे पर धरती पर इनका एक कण तक नही गिरा. धार की बोतल खाली की मगर कोई बू तक नहीं आई. अत मे बोतल फेंक दी पर उसकी कोई आवाज नहीं सुनाई दी. रास्ते मे एक क्षण को मुझे लगा कि जैसे मैं भी हवा मे बह गया हूँ पर दूसरे ही क्षण मैं अपनी सही स्थिति मे आ गया. मोती बाजार पहुचते-पहुचते एक ट्रक सामने आती हुई मिली. मानसिहजी ने बताया कि ट्रक मे बैठे आदमियों मे से दो भूतो की झपट में आ जायेंगे सुबह सुन लेना कि दो के कलेजे चले गये.

इस बार मुख्य दरबार जुडा कुंभा महल मे. वैसे प्रतिवर्ष पद्मिनी महल मे जाजम बिछती है. आम दरबार जुडता है वैसा ही जैसा चित्तौड मे राणाओ के समय जुडता रहा. एक-एक पक्ति मे 6-6 बैठकें रहती हैं सब अपनी-अपनी जगह, अपनी हैसियत के अनुसार बैठते हैं. सरदार, उमराव, ठाकुर, महाराणी, ठकराणी, दास, दासी, नौकर, चाकर सब उसी तरह के ठाठ. सारा राजसी रग ढग. यह मेला भरता है दो-ढाई घटे के लिये. वे ही सब दुकानें जो तब लगा करती थी. अकाल मृत्यु मे जो खो गये उन सबका मिलन मेला है यह. इस मेले मे सबसे ज्यादा मिठाइया बिकती हैं भेष बदल-बदल कर आदमी वेश मे ये लोग जाते हैं और मणोबध मिठाइया खरीद लाते हैं.

चित्तौड के किले पर कुल सत्रह जौहर हुए. तीसरे जौहर के बाद संवत् 1702 मे यह अदृश्य मेला प्रारम्भ हुआ. अकालमृत्यु प्राप्त कर जो जीव इधर उधर भटक गये उनसे आपसी मेलमिलाप हेतु प्रतिवर्ष दीवाली को इसका आयोजन रखा गया. कई राजपूतो के बालक मुसलमानो के हाथो चले गये जो मुसलमान बना दिये गये परन्तु उनकी खापें मुसलमानी मे अभी भी उनकी साक्षी हैं. चुहाण, सिसोदिया, राठोड, डोड्या ये सब खांपें राजपूतो की हैं जो आज मुसलमानो में भी पाई जाती हैं. इन खापो के लोग मूलतः राजपूत रहे हैं. साईदास ईसरदास और बीसमसिंह तो बड़े जबरे वीर थे. इन तीनों ने मिल-

कर 50 हजार दुश्मनों का सफाया कर दिया एक ही तलवार से साढे तीनसौ का खेल खत्म कर दिया जयमलजी तो सारे युद्ध का सचालन करते थे उन जैसा युद्धवीर रणबाज दूसरा नही हुआ उनम दस हाथियो जितना बल था

चित्तौड की चप्पा चप्पा भूमि की अखूट गौरव गाथा है मेरे लिये तो सबसे बडी यही उपलब्धि रही कि मैं इस अदृश्य मेले के अलौकिक रहस्य को अपना दृश्य बना सका, अपनी दृष्टि दे सका यह मेला मेरे लिये तो गू गे का गुड ही बना हुआ है कल्लाजी बावजी ने यह कृपा केवल मेरे पर की तो मैंने यह ठीक समझा कि इसका जायका वे लोग भी लें जो कभी इसे साक्षात् सम्भव हुआ नही मान सकेंगे, केवल सुन अवश्य सकेंगे–जब जब भी वे चित्तौड आयेंगे, कि यहां प्रतिवर्ष भूतो का मेला दीवाली की गहन रात को लगता है पर तु जिसका कोई साक्षी नही हो सकता

सता प्रथा

हमारे यहा मुख्यतः राजस्थान मे सती प्रथा का तो बडा जोर रहा ही है पर सता प्रथा के उदाहरण भी कई मिलते हैं. सती-सताओ के कई देवरे, देवल, मदरी, छतरी, चबूतरे, मिलेंगे. शिलालेख मिलेंगे और उनके सम्बन्ध मे गीत, गाथाएँ, कथा, किंवदंतियां मिलेंगी. प्रायः प्रत्येक जाति मे सती प्रथा की परम्परा रही है. राजस्थान मे अपनी शोध-यात्राओ के दौरान मेरे देखने मे कई सती-सता स्मारक आये हैं.

सतियो के सम्बन्ध मे प्राय. यही बात अधिक सुनने को मिलती है कि जो स्त्री अपने मृत पति के सिर को अपनी गोद मे लेकर उसके साथ चिता मे जल मरे वही सती कहलाती है पर ऐसी ही बात नही है. बीकानेर प्रवास के दौरान जब मैं उदय नागोरी के साथ दम्माणियो के चौक मे जसोलाई के पास सती की मदरी देखने गया तो वहां संगमरमर के शिलालेख के अनुसार संवत् 1867 मे श्रीनाथजी व्यास की पत्नी अपने इकलौते पोते के साथ सती हुई थी. यही दो ओसवाल जाति की सतियो के स्मारक भी बने है जो अपने पुत्र के पीछे सती हुई थी.

इतिहास प्रसिद्ध हाडीराणी तो रण जाते हुए अपने पति को अपना मस्तक देकर अग्रिम सती हो गई. गुजरात मे पति के वचन भग करने तथा उसके नामर्द होने कारण सती होने के उदाहरण मिलते हैं. पशुप्रेम तथा उनकी रक्षा हेतु स्त्रियो के सती होने की घटनाये भी इधर प्रचलित हैं. यहा के मीठी गाव मे एक पालतू नील गाय के मर जाने पर बाईस चारण कन्याएँ सती हो गई. ये कन्याएँ 'आइया' नाम से जानी जाती हैं. विवाह के पूर्व सती होने के प्रसग भी पुरानी बहियों मे मिलते हैं. सवत् 1545 माघ शुक्ला दसमी को सरस्वती नामक बारह वर्षीय मगेतण ने जब यह सुना कि उसके भावी पति की सर्पदंश से मृत्यु हो गई तो घोडे पर सवार हो वह गाजेबाजे के साथ सती हो गई. सरस्वती की सेत्रावा नगर के गोलछा वश मे सगाई हुई थी जो भैंसड़ा नगर के चोपड़ो को पुत्री थी.

सतियों की तरह सताओं के भी ऐसे ही विविध घटना-प्रसंग मिलते हैं. गुरु के गोविन्द अग्रवाल ने बताया कि संवत् 1727 में कच्छ के बड़ा रतडिया [गांव] का चारण बाला भोजा अपनी बेणु नामक पत्नी के पीछे सता हुआ इसी प्रदेश का माधवजी कापड़ी अपने रामल बापा नामक गुरु के पीछे सता हो गया. बीकानेर की सतियों की बगीची में सतियों के कई स्मारकों के साथ सताओं के कई स्मारक बने हैं. यहीं सता की मदरी के पास लगे एक शिलालेख में बीकानेर [की] स्थापना से पूर्व ललाणी व्यास द्वारा अपनी पत्नी के पीछे सता होने का उल्लेख है

फतहपुर का सांस्कृतिक इतिहास लिखनेवाले ओंकारश्री ने बताया कि फतहपुर-शेखावाटी का इलाका जहाँ सतियों के लिये प्रख्यात रहा है वहां सताओं के लिये भी कम ख्यात नहीं है इधर भाई का बहन के पीछे तथा प्रेम संबंधों को लेकर सता होने के कई किस्से प्रचलित है भीखमंगे तक इधर सती जती के नाम की भीख मांगते सुने गये हैं– 'कोई दीजो रे सती जती रे नाम.' मारवाड़ में अधिक पत्नी प्रिय व्यक्ति को सता की संज्ञा देने का रिवाज आज भी है ऐसे (जोरू के गुलाम) व्यक्ति को 'कई लुगाई पाछे सतो होरियो है' कहा जाता है जैसलमेर के पुरुषोत्तम छंगाणी ने बताया कि बरसात नहीं होने पर उधर बालिकाएँ जो खोल-गीत गाती हैं उनमें गुड़िया के मरने पर गुड्डे द्वारा सता होने का उल्लेख मिलता है–

म्हे म्हे बेगो रे आव रे
ढूली मरे ढूलो सतो चढ़े रे

उदयपुर में तो सता घाट तथा सतापोल बड़े प्रसिद्ध हैं जो सताओं के विशिष्ट धर्म शौर्य तथा वीर-मौत के प्रतीक है. सती सताओं के ऐसे अनेकानेक उल्लेख कथा-प्रसंग तथा स्मारक मिलते हैं. अपने आप में यह बड़ा ही दिलचस्प विषय है जिस पर काफी कुछ अध्ययन अनुसंधान किया जा सकता है.

कूंडा एवं ऊंदर्‌या पंथ

हमारे देश मे प्रचलित धार्मिक-अध्यात्मिक पथो मे कांचलिया अथवा कूंडा एव ऊंदर्‌या पथ ऐसे विचित्र, अद्‌भुत और अनूठे पथ हैं जिनकी समता किसी दूसरे पथ से नही की जा सकती.

कूंडा पथ :

इसे बीसनामी पथ के नाम से भी जाना जाता है लोकपुरुष रामदेवजी इसके मूल उपजीव्य रहे हैं. अछूतो एव पतितो के उद्धारक के रूप मे रामदेव जी की लोक कल्याणकारी सेवायें बडी उल्लेखनीय रही हैं रामदेवजी बडे अच्छे भजनी थे. अच्छे गायक के साथ-साथ अच्छे तन्दूरा-मजीरा वादक भी थे. उनकी वाणी का विचित्र व्यापक प्रभाव था. वे जहा भी जाते, सबको सदैव के लिए अपना बना लेते. वे जहां भी बैठते, कीर्तनियो-भजनियो का अपार समूह उमड पडता सभी लोग भजनभाव मे तल्लीन हो जाते और रात-रात भर अलख-आनन्द की बरसात होती रहती. इस भजन सगत मे दूसरे सत भक्त-साधको के साथ-साथ स्वय अपने भजन रचते रहते और भक्त लोग बडी तन्मयता के साथ उनकी वाणी को विस्तार देते रहते. रामदेवजी के ये भजन मुख्यतः 'परवाण' कहलाते हैं ये परवाण भजनो के ही अनुरूप होते हैं. फर्क केवल इतना ही रहता है कि ये भजन थोडे बडे होते हैं इनका गायन भजनो के अत मे होता है. आज भी कूडापथी लोग अपने भजनो के अन्त मे रामदेवजी के परवाणों का उच्चारण कर श्रद्धाभिभूत हो उठते हैं.

रामदेवजी के भक्त-भजनियो मे जरगा नामक भजनी उनका प्रमुख चेला था. यह जाति से बलाई था जो आगे जाकर उनके घोडे का चरवादार बन कर रामदेवजी की चरण-सेवा मे रहा. प्रसिद्धि है कि एकबार रामदेवजी जरगा के साथ कही परचा देने जा रहे थे. देर रात हो जाने के कारण राम-देवजी जरगा तथा घोड़े को एक स्थान पर छोड़कर शीघ्र ही लौट आने को कह

र अकेले ही परचा देने चले गये. रामदेवजी परचा तो दे आये परन्तु जरगे
ी स्मृति उन्हे नहीं रही और वे कहीं अन्यत्र जन-कल्याणार्थ निकल गये
ामदेवजी की आज्ञा से जरगा और घोडा खडे के खडे रहे तो निर्जीव हो गये
ाद मे रामदेवजी को अचानक जब जरगे की याद आई तो वे तत्काल उस स्थान
र पहुचे देखा तो जरगा व घोडा दोनो सूखे काठ बने हुए हैं. उन्होने अपने
ालम से दोनो को सरजीवित किया और जरगे को वचन मागने को कहा
रगे ने कहा कि मैं और कुछ नही चाहता, केवल यही चाहता हू कि आपके
ाथसाथ मेरा नाम भी अमर रहे रामदेवजी ने कहा कि इसी स्थान पर प्रतिवर्ष
ुम्हारे नाम से मेला लगा करेगा इस मेले मे नाम तो तुम्हारा रहेगा परन्तु
ाम मेरी चलेगी तब से वह स्थान और मेला जरगा के नाम से लोकप्रिय
ुआ

जरगाजी का मेला उदयपुर से 35 किलोमीटर गोगुन्दा के पास शिवरात्रि को लगता है इस मेले में रामदेवजी के भक्त कामड, बलाई, रेगर, चमार, मेघवाल, मोग्या आदि अधिकाधिक सख्या मे एकत्रित होते हैं रात्रि जागरण के रूप मे इस दिन रात-रात भर भजनभाव होते हैं बहुत से श्रद्धालु रामदेवजी की मनौती के रूप मे कामड लोगो से क्षमा दिलवाते हैं और उनकी महिलाओ से तेरताली के प्रदर्शन करवाते हैं कामड औरतें रामदेवजी की उपासना मे ही अपने शरीर पर तेरह मजीरे बाधकर तेरताली के प्रदर्शन मे तेरह प्रकार के विशिष्ट साधनापरक हावभाव व्यक्त करती हैं इसी जरगाजी में काचलिया पथ की खास धूणी है कालान्तर मे रामदेवजी के इन्ही भक्त भजनियों ने काचलिया पथ का शुभारम्भ किया

अकेला पुरुष और अकेली स्त्री इस पथ के सदस्य नही हो सकते पति-पत्नी सम्मिलित रूप से इसके सदस्य बनते हैं इसका अपना एक गुरु होता है. जब कभी इसकी सगत बिठानी होती है, गुरु के आदेश पर कोटवाल द्वारा सदस्यो को सूचना पहुचवा दी जाती है रात्रि को लगभग दस बजे सभी लोग निश्चित स्थान पर एकत्र होते हैं यह स्थान किसी सदस्य विशेष का घर अथवा कोई एकान्त स्थान होता है आयोजक सदस्य की ओर से इस सगत का समस्त खर्च वहन किया जाता है वही सभी सदस्यो के लिये चूरमा बाटी के भोजन की सामग्री जुटाता है. सदस्यलोग ही यह भोजन तैयार करते हैं और सामूहिक रूप से धूपध्यान कर भोजन करते हैं.

मुख्यस्थल पर जहा इसका आयोजन किया जाता है, पाट पूरा जाता है. इसके लिए सवा हाथ के करीब कपडा जमीन पर बिछा दिया जाता है. यह

कपडा सफेद होता है इसके ऊपर लाल कपडा बिछाया जाता है इसके चारो किनारो पर पचमेवा–खारक बादाम, दाख, पिश्ता तथा मिश्री रख दिया जाता है. कपडे के बीच मे सातिया, ऊपर एक तरफ चाँद तथा दूसरी तरफ सूरज तथा दोनो के बीच रामदेवजी का घोडा तथा नीचे बीच मे रामदेवजी के पगल्ये तथा दोनो ओर पाच-पाच टोपे मांडे जाते हैं सातिये पर कलश थापित कर दिया जाता है. इस कलश पर जोत कर दी जाती है. पाट पूजने की इस क्रिया मे सवा सेर चावल लिये जाते हैं इसी पाट के पास केवेलू मे चूरमे खोपरे की धूप लगा दी जाती है.

लगभग दो बजे तक भजनभाव होते रहते हैं भजन समाप्ति के बाद गुरु के निर्देशानुसार सभी औरतें अपनी अपनी काचलिया खोलकर कोटवाल को देती हैं. कोटवाल इन काचलियो को कलश के पास रखे हुए मिट्टी के कूडे मे डाल देता है. पाट पर रखे हुए चावलो मे से गुरु मन मे धारे व्यक्ति को, कूडे मे पडी हुई काचलियो मे से एक काचली निकालने पर जिस औरत की काचली हाथ मे आ जाती है उसके साथ भोग के लिए, निर्देश देता है. दोनो स्त्री-पुरुष कलश के पास डाले गये पर्दे के पीछे जाकर भोग करते हैं. भोग स्वरूप वीर्य को स्त्री अपने हाथ मे लेकर आती है और गुरु के वहा रखे पात्र मे डाल देती है.

इस प्रकार वारी-वारी से गुरु सादके धारता रहता है और काचली उठा-उठाकर स्त्री पुरुष को भोग के लिये आज्ञा प्रदान करता रहता है. गुरु द्वारा धारे पांच की सख्या वाले सादके (आखे) 'मोती' कहलाते हैं. पाच से कम ज्यादा की सख्या वाले सादके 'जोड' कहलाते हैं मादकों की यह सख्या आने पर पुन पाट रख दिया जाता है जब सबकी वारी पूरी हो जाती है तो जितना भी वीर्य एकत्र होता है उसमे मिश्री मिला दी जाती है और सभी सदस्यो को प्रसाद के रूप मे दे दिया जाता है. मिश्री मिश्रित वीर्य का यह प्रसाद 'वाणी' कहलाता है कोटवाल द्वारा प्रसाद देने की क्रिया 'वाणी पेरना' कहलाती है. वाणी के अतिरिक्त चूरमे का प्रसाद भी होता है जो 'कोली' कहलाता है पच मेवे का प्रसाद 'भाव' नाम से जाना जाता है प्रसाद देते समय लेनेवाले और देने-वाले के बीच सवाल-जवाब के रूप मे जो कडावे बोले जाते हैं वे इस प्रकार हैं–

हुकम, हड्डमान को; आग्या, ईश्वर की, दुवो, चारो, चारी जुगमे हुवो! चोकी, हिंगलाज की, परमाण, सत चढ़ै निरवाण; येगो, अलख रा घर देखो.

इस समय लगभग प्रात हो जाता है तब सब लोग अपने-अपने घर की राह लेते हैं

सभोग की ऐसी मर्यादित स्वच्छता-स्वच्छदता एक और रूप मे भी इन बीसनामी पथियो मे देखने को मिलती है यही गुरु, जब इनमे से किसी का महमान होता है तो वह सदस्य अपने आपको धनभाग समझता है और अपनी पत्नी को सभोग के लिए गुरु के पास भेजता है सभोग क्रिया के पश्चात् पत्नी अपने हाथ मे जो वीर्य लाती है उसे प्रसाद के रूप मे परिवार के छोटे-बडे सभी सदस्य स्वीकार करते हैं

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यह पथ रामदेवजी की ही आराधना का एक विशिष्ट रूप है रामदेवजी के भक्तों का ही इसका सदस्य होना पाट पूरना, भजनभाव, कलश स्थापना तथा जोत आदि सभी रामदेवजी की स्मृति उपासना के प्रतीक हैं काचली और कू डे से सम्बन्धित जो क्रिया-प्रक्रियाएँ हैं वे मूलतः किस बात की सकेतक हैं इस ओर गहरे अध्ययन एव अनुसधान की आवश्यकता है.

चोली पूजन

चोलीपूजन नाम से इसी से मिलती जुलती प्रथा मध्यप्रदेश के सीहोर जिले की काछी, टीमर, मछुए आदि पिछडी जातियो मे प्रचलित है कहते हैं इस जाति के अनेक व्यक्ति अघोर तत्र मे बडी आस्था रखते हैं और इसीलिए मास मदिरा और महिला द्वारा तत्र साधना करते हैं

तत्र की यह साधना चोलीपूजन कहलाती है देवीकृपा से किसी इच्छा की पूर्ति होने पर श्रद्धालु भक्त साधक इसका आयोजन करता है यह आयोजन भी रात्रि ही को किसी एकान्त किन्तु नियत स्थान पर किया जाता है इसमे भाग लेनेवाले सभी साधक सपत्नीक होते हैं

सर्वप्रथम पुजारी किसी बडे पात्र मे शराब भरकर उसकी पूजा करता है तब उस पात्र म वहा आई महिलाए अपनी-अपनी चोली (कचुकी) उतार कर डालती है और उसे शराब मे भिगो-भिगोकर अपना वक्षस्थल साफ करती हैं तब तक पुरुष वर्ग घडे के चारो ओर नाचता हुआ शराब पीने पिलाने मे मग्न रहता है

फिर पुजारी देवी की पूजा कर उसे नई चोली धारण कराता है इस समय मेमने की बलि दी जाती है और उसका मास पकाया जाकर देवी को भोग दिया जाता है. इस समय भी शराब पीने का दौर जारी रहता है

यह सब कुछ हो जाने के बाद प्रत्येक पुरुष उस शराब के पात्र से एक-एक चोली उठाता है और जिस महिला की चोली उसके हाथ आ जाती है वह उसी के पास जा खडा हो जाता है. सभी चोलियो का बटबारा हो जाने के पश्चात् देवी के समक्ष सारे नर-नारी यौनक्रीडा मे मग्न हो जाते हैं.

ऊदर्या पथ :

ऊन्दर्या पंथ को मानने वाले भी नीची जाति के लोग होते हैं. इसका आयोजन भी किसी एकान्त स्थान मे ही होता है ताकि सामान्य व्यक्ति की पहुँच भी वहा तक न हो सके और किसी को इसका सूत्र तक हाथ न लग सके.

इसमे भी महिला पुरुष दोनों होते हैं. दोनो आमने-सामने गोलाकार बैठ जाते हैं परन्तु वे पूर्णत. नग्नावस्था लिये होते हैं. दोनो के शरीर पर किसी प्रकार का कोई कपडा नही होता है. इस समय सबको पूर्ण सयम मे रहना पडता है

बीच गोलाई मे चूरमा (घी मे पके मोटे आटे मे शक्कर मिलाकर तैयार किया गया) रख दिया जाता है जो वही तैयार किया जाता है यह चूरमा माताजी के भोग के लिए बनाया जाता है. उस चूरमे से सटा हुआ एक कच्चा धागा सीधा टेठ ऊपर मकान की छत तक बाध दिया है. पहले चूंकि मकान कच्चे बने होते थे जो या तो घासफूस से छा दिये जाते थे या कवेलू से ढक दिए जाते थे. अतः यह धागा घासफूस या फिर लकडी की छत से जोड दिया जाता था.

इस धागे के सहारे-सहारे एक चूहिया आकर नीचे रखी चूरमे की ढेरी से अपने मुँह मे उसका कण लेकर चली जाती तो समझ लिया जाता कि देवी को चूरमे का भोग लग गया है और उनकी साधना पूरी हो गई है. परन्तु यह कार्य बहुत आसान नही था. चूहिया का आना ही बडा मुश्किल था. इसमे कभी-कभी तीन-तीन चार-चार सात-सात दिन तक वहा बैठे रह जाना पडता और निरन्तर चूहिया की प्रतीक्षा बनी रहती दूसरी बात यह थी कि चूहिया कभी दिन को नहीं निकलती उसके निकलने का समय रात्रि हो और वह घर भी बिना किसी होहल्लेवाला हो अत. दिन को ये साधक भजनभाव मे निमग्न रहते और रात पडने पर सब चुपचाप टकटकी लगाए बैठे रहते चूहिया के वहां आने और प्रसाद ले जाने के दिन तक सभी लोग निराहार रहते हैं.

ये लोग मात्र निराहारी ही नहीं रहते अपितु इनके आपस मे भजनभाव होते रहते हैं और एक दूसरे के गुप्तागो को स्पर्श करते हुए नाचते भी रहते हैं यह सब देवी को प्रसन्न करने और उसे रिझाने के लिए किया जाता है ताकि देवी जल्दी रिझकर वहा चूहिया स्वरूप दर्शन देकर उनकी सेवासाधना को सार्थक करे

यह सारी साधना शुद्ध भावो से प्रेरित है किसी महिला पुरुष मे कोई विकृति नही आ पाती है. किसी मे विकृति आने पर उसकी साधना निष्फल समझ ली जाती है और यदि कोई किसी से छेड़खानी भी कर बैठता है तो उसके साथ बुरी बिताई जाती है यहा तक कि सभी मिलकर उसकी हत्या तक कर देते हैं परन्तु अपनी पवित्रता पर जरा भी आच नही आने देते हैं. इससे यह स्पष्ट है कि नीची जातियो मे भी कितनी ऊँची साधना, देवी के प्रति निष्ठा और कठोर आत्म सयम पाया जाता है

एक दिन उदयपुर राजमहल के शिवशक्ति पीठ पुस्तकालय मे जब मैंने प. बालकृष्ण व्यास से कूडापथ की चर्चा की तो उन्होने ही मुझे ऊदर्या पथ के सम्बन्ध मे यह जानकारी दी और कहा कि जयसमद की ओर किसी समय उधर के आदिवासियो मे इस पथ का बडा जोर था परन्तु सारा कार्य इतना गुपचुप होता है कि अन्य किसी को इसकी भनक तक नही पड सकती. यहा तक कि इसे इतना छिपाया रखते हैं कि पथ का कोई मानलेवा किसी का आजीवन घनिष्टतम मित्र भी होता है तब भी इसका पतानही चल पाता है जब तक कि वह भी उस पथ का सदस्य न हो.

पति मरे विधवा सिणगार करे

हमारे यहां कई जातियो मे मृत्यु संस्कार भी बड़े विचित्र रूप मे मनाये जाते हैं. यो किसी की मृत्यु कभी आनन्ददायी नही मानी जाती परन्तु उस शोक विह्वल अवस्था को उल्लासमय वातावरण देकर जो विविध रीति नियम पूरे किए जाते हैं उनके पीछे भी बडी गहन लोकदृष्टि अन्तर्निहित है राजस्थान के वागड क्षेत्र मे रह रहे ब्राह्मण-परिवारो के सर्वेक्षण मे एक अजीब मृत्यु संस्कार देखने-सुनने को मिला.

इसके अनुसार यदि किसी महिला का पति मृत्यु को प्राप्त होता है तो उसके तुरन्त पश्चात विधवा हुई महिला को उसके पीहर ले जाया जाता है और वहा उसे समग्र सम्पूर्ण सिणगार कराया जाता है उसे कोर किनारी वाली पोशाक पहनाई जाती है. हाथो मे मेहदी दी जाती है. काजल टीली लगाई जाती है. माथा गूंथा जाता है और जितना गहना होता है वह पहनाया जाता है. विधवा को ले जाते लाते समय खुला मुह रखना होता है और जब पूरे सिणगार के साथ वह अपने पतिगृह लाई जाती है उसके पश्चात ही उसके पति की अर्थी श्मशान मे ले जाई जाती है. अर्थी ले जाने से पूर्व उसके पास बीच गोलाई मे उसकी विधवा पत्नी को रख उसके चारो तरफ विधवा महिलायें तथा दूसरे गोल घेरे मे अन्य सधवा महिलायें मिलकर घूमर नाचती हैं. इस समय वे अपने दोनो हाथो से अपनी छाती कूटती रहती हैं और रुदन गीत मे मृतक के जन्म से लेकर मरण तक के सुकर्म-कृत्यो को एक-एक कर चितारती हुई उसे नृत्यमय गेय रूप देती रहती हैं.

मुर्दे को श्मशान ले जाने के पश्चात् महिला-समुदाय तालाब पर जाता है. इस समय भी विधवा को उसी सिणगार वेश मे सबसे आगे कर दिया जाता है और वहां जाकर एक तरफ विधवा समधी औरतें मिलकर उस विधवा बनी स्त्री का चूडा फोड़ती हैं और उसे पानी में फेंक देती हैं. सधवा महिलाएं यह

सत्कार नही देखती हैं. लौटते समय विधवा की पोशाक वही रहती है केवल एक साडी और उसे ओढा दी जाती है इस बार उसका मुह खुला नही होकर उसे पूरी ढक दी जाती है घर लाकर उसे कमरे के भीतर एक कोने मे बिठा दी जाती है जिस स्थान पर उसे बिठाई जाती है वहा से बारह दिन तक वह ऐसी बैठी रहती है कि हिलती-डुलती भी नही है इस समय प्राय कोई सधवाएं बोलती भी नही है या तो पुरुष किसी काम से उससे वार्तालाप करता है या बच्चों के माध्यम से कोई बात कहलाई जाती है नहीं तो विधवाएं ही यह कार्य करती हैं

बारहवें दिन विधवा का भाई आता है जो रात को उसे चुपचाप अकेले मे चूदड ओढाता है यह वही चूदड होती है जो शादी के समय उसे ओढाई गई होती है इस समय उसके आस पास कोई नही होता है यह प्रसग देखना भी अच्छा नहीं समझा जाता है 9 वें दिन विधवा बनी महिला के सिर के सारे बाल नाई द्वारा कटवा लिये जाते हैं ये बाल फिर हमेशा के लिए उस विधवा को साल-छ माह मे कटवाते ही रहने पड़ते हैं इस जाति मे किसी भी विधवा को बाल रखना वर्जित समझा जाता है

ग्यारहवें दिन सध्या को औरतें मिलकर फिर उसी तरह उसको बीच मे बिठाकर गोलाई मे घूमर लेती हुई उसी तरह के गीत गाती रूदन करती है. बाहर से आनेवाली समधी औरतें भी, विधवा-सधवा सभी, उस गाव की हर मुख्य सडक तथा चौराहे पर उसी तरह घूमर लेती हुई आगे बढती रहती हैं

एक माह बाद माचोसा किया जाता है जिसमे पूरी जात को जिमाया जाता है डेढ माह बाद मुख्य-प्रमुख रिश्तेदारो को बुलाकर जिमाया जाता है. ऋषि पचमी के दिन सभी को हामे का भोजन कराया जाता है षष्ठमी को पूरी जात को काचीकूलर (चावल को पीसकर शक्कर घी मिलाकर बनाये जाने वाले लड्डू का भोजन) खिलाया जाता है और नवमी को रिश्तेदारो को बुलाकर जिमाया जाता है

डूगरपुर की श्रीमती पुष्पाबाई ने बताया कि मृतक के बाद पूरे बारह महिनों तक यह सीगाला चलता ही रहता है हर त्योहार आने के चार दिन पूर्व रोना धोना प्रारम्भ हो जाता है. दीवाली के दिन प्रात 4 बजे सारी जात के लोग तालाब पर जाकर लकडी की बनी छोटी निसरनी पर दीपक रखकर पानी मे छोडते हैं. पूरा बरस होने पर बरसी की सुख सज्जा दी जाती है. इस सज्जादान मे यदि औरत मरती है तो उसकी पूरी पोशाक, बेवडा आदि

किसी गरीब समधी-रिश्तेदार को दिया जाता है. पुरुष की मृत्यु पर उसकी पूरी पोशाक दी जाती है.

औरत की मृत्यु होने पर पूरे बारह माह तक प्रतिदिन एक समय किसी गरीब साधु औरत को और आदमी की मृत्यु होने पर साधु आदमी को भोजन कराया जाता है. अंत मे इन्हें एक-एक पोशाक दान की जाती है. पूरे वर्ष भर तुलसी पौधे को पानी पिलाया जाता है और नियमित दीप जलाया जाता है. वही एक-एक बेवडा प्रतिदिन किसी धर्मस्थान या प्याऊ मे पानी का डलवाया जाता है.

उदयपुर रंग निवास मिष्ठान्न के श्री देवीलाल जी नाईवाले ने बताया कि पूरे वर्ष जितनी हैसियत हो उतना दानपुण्य और निकाला जाता है. गाय का दान दिया जाता है. सम्पन्न लोग अधिक अच्छा आभूषणो तक का दान करते हैं नही तो भी गरीब से गरीब व्यक्ति को ये पारपरिक सस्कार तो पूरे करने ही होते हैं.

मृतक व्यक्ति के पुत्र को भी कई सारे सस्कार पूरे करने होते है, पूरे बारह दिन उसे भी प्रतिदिन श्मशान मे जाकर पिंडदान देना होता है और दूध दही तथा अलूणे जौ का उसे भोजन करना होता है इन दिनो वह किसी को छूता नही है. चटाई पर उसे सोना होता है और उसके लिये उसका भोजन भी उसकी बहिन ही तैयार करती है.

मृतक के सम्बन्ध मे ऐसे गीत रूदन मैंने अपने प्रात कालीन भ्रमण के दौरान गाडोलिया महिला से भी सुने हैं. पचवटी मे सडक पर सर्दी में कोई 5 बजे जब मैं घूमता हुआ निकला तो एक गाडोलीन को अपने खाट पर सोई हुई ही मैंने इस प्रकार का विलाप करते सुना. उस महिला ने रजाई से अपना सम्पूर्ण शरीर ढक रखा था और रह-रह कर लम्बी आवाज मे मृतक का गुण वर्णन करती हुई वह सिसकिया लेती जा रही थी. आसपास के तीन चार गाडियों वाले सभी गाडोलिया परिवार सोये हुए थे. वह रूदन एक विशिष्ठ लय मे था. मेरे पास टैप रेकार्डर नही था पर मेरी आज भी वह लयबद्ध रूदन स्मृति मे है. मुझे समझते देर नही लगी कि गाने का यह रोना कष्टो के पहाड़ो को काटता हुआ आदमी को सतुलित किये रहता है. ऐसे दुख दर्दों मे गीत हमारे कितने संगी सहायक होते हैं यह जानने से अधिक अनुभव की वस्तु है.

प्रताप और सिकोतरी

मेवाड के महाराणाओ मे कुंभा, सागा, राजसिंह और प्रताप, ये चार ही ऐसे महाराणा थे जो स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये एक प्राण एक मन से युद्ध करते रहे परन्तु इनमे प्रताप का महत्व सर्वाधिक उजागर हुआ और जहा स्वतन्त्रता व आ।ादी की लडाई का प्रसग आता है वहा महाराणा प्रताप ही प्रेरणा के स्त्रोत और आदर्श के रूप में याद किये जाते हैं इसका कारण यह है कि अकबर के साथ उन्होने जो हल्दीघाटी का युद्ध किया वह मात्र राजतन्त्रीय युद्ध ही नहीं था अपितु जनतन्त्रीय ही अधिक था उन्हे जनता-जनार्दन का सम्पूर्ण सहयोग प्राप्त था इसलिए वे स्वतन्त्रता की अस्मिता कायम रख सके और अकबर जैसे महान शक्तिशाली बादशाह के सामने अपनी अधीनता स्वीकार नही की. यही कारण है कि प्रताप इतिहास और जनजीवन दोनो मे जननायक सिद्ध हुए हल्दीघाटी के युद्ध मे राजपूत, ब्राह्मण, महाजन, धाकड, भील सभी अपने अन्त मन से लडे इसीलिये हल्दीघाटी और प्रताप सारे देश के लिये वदनीय हो गये राजस्थानी के सरस कवि कन्हैयालाल सेठिया ने ठीक ही कहा—

> कोनी कोरो नाव, रेत रो हल्दीघाटी ।
> अठै उग्यो इतिहास, पुजी जं ईंरी माटी ।।

और ओज कवि श्यामनारायण पाण्डेय ने ललकारा—

> राणा की पद धूलि उठाकर, मस्तक पर चन्दन कर लो ।
> राष्ट्रदेवता के चरणो मे, झुको-झुको वन्दन कर लो ।।

गुलाबों से महकी हल्दीघाटी ।

यह हल्दीघाटी केवल अपनी हल्दी रगी माटी के कारण ही प्रसिद्ध नही है अपितु गुलाब के फूलो से भी बडी महकी बनी हुई है. यहा विश्व मे सर्वश्रेष्ठ माने जानेवाले दमशक गुलाब की प्रजाति पाई जाती है जो 'हल्दीघाटी-गुलाब'

के नाम से प्रसिद्ध है परन्तु स्थानीय लोग इसे 'चेती गुलाब' कहते हैं जो वर्ष मे केवल एकबार चेत्रमास मे ही फलते फूलते हैं इस गुलाब के इत्र का प्रति किलो 20 हजार रुपया अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य है

अपनी खोज यात्राओ मे मैंने सुना कि अकबर की सेना इन गुलाबो की खुशबू से सदैव तर रहती थी अकबर स्वय ने यहा के गुलाब और इत्र की बडी महक ली और जाते-जाते जो इत्र यहा से ले गया उसस उसकी पुत्रवधू बेगम नूरजहा तो इतनी इत्रमय हो गई कि उसके बिना उसका रहना तक दूभर हो गया कहते हैं कि महल के उद्यान के चारो तरफ की नहर भी सदा गुलाबजल से भरी रहती थी हल्दीघाटी को गुलाब से इतनी महकाने वाली सिकोतरी थी ताकि मुगल सेना उस खुशबु मे ही अपने को खुशनुमा मानती रहे और युद्ध मे जीतने न पाये. यह भी सुना गया कि जहा गुलाब और हल्दी का गठजोड हो जाता है वहा सभी लोग श्रद्धाभिभूत हो खीचे चले आते हैं

सिकोतरी की महरबानी

यह सिकोतरी तो प्रताप पर बडी महरबान थी शक्ति के रूप मे यह सदैव प्रताप के साथ रहती कभी चेटक म तो कभी प्रताप के भाले मे अपनी शक्ति और शौय का प्रदर्शन कर इस सिकोतरी ने दुश्मनो के दात खट्टे कर दिये

प्रताप का सर्वाधिक साथ देनेवाले आदिवासी भील तो सिकोतरी के बडे मानेता रहे हैं पहाडी झू पो जगलो म रहनेवाले प्रत्येक भील ने सिकोतरी साध रखी है इससे उनके सारे कारज सिध जाते है यहा तक देखा गया है कि चोरी गया जानवर भी अपने घर लौट आता है डालू लोगर ने बताया कि शनिवार को यदि कोई कु वारी कन्या मर जाय और उसे श्मशान मे गाड दे तब रविवार की सुबह जाकर गाडे हुए स्थान के पास जाकर उस कन्या को अनाज के पाच दाने रख नूत आते हैं कि रात को मैं तुझे आकर बाहर निकालू गा, तू मेरा कार्य सिद्ध कर देना वादे के अनुसार साधक रात को श्मशान जाकर मृतक कन्या को बाहर निकालता है और उसका पेट चीर कालजा प्राप्त कर पुन उसे गाड देता है उस कालजे को वह हनुमानजी के स्थान पर ले जाकर उनके सम्मुख बिना उन्हे छुए कुछ मन्त्रो द्वारा साधता है और जलाकर नीबू के चिपका देता है. नीबू जब पक जाता है तो वह उसके माध्यम से अपनी सिद्धि करता रहता है

कई जगह यह सुना कि अपने यहां युद्ध-संकट देख राणा प्रताप ने अपनी रानी को उसके पीहर भेज दी रानी ने काजली तीज पर मिलने का वचन लिया और कहा कि इस दिन रात की बारह बजे तक आपकी बाट जोऊंगी नही तो अपने को समाप्त कर दूगी तीज आई तो प्रताप को रानी का स्मरण हो आया वे चेटक पर सवार हो चले परन्तु बीच मे नदी इतनी उफान मार रही थी कि उसे पार करना मुश्किल हो गया और चेटक का पाव बड वृक्ष की खोह मे जा फसा ऐसी स्थिति मे सिकोतरी ने अदृश्य रूप मे प्रताप का साथ दिया सारे सकटो से मुक्त हो अन्तत प्रताप रात को बारह बजे पहले रानी के पास पहुचे सुबह जब प्रताप वापस लौट रहे थे तो उन्हे एक झूपे मे भील भीलन बैठे मिले जिन्होने प्रताप को आवाज देकर बरसते पानी मे अपने यहा ठहरने को कहा प्रताप कुछ समय रुक गये तब बातचीत मे भील ने रात की घटी घटना का खुलासा करते हुए कहा कि यदि सिकोतरी आप पर महरबान नही होती तो आप रानी जी के पास कभी पहुच नही पाते उधर रानी अपनी जान दे देती और इधर आप भी चेटक सहित जिन्दे नही बचते.

यह कहते ही भील को सिकोतरी आ सवार हुई और बोली कि रात को यदि मैं नही होती तो मेवाड अनाथ हो गया होता और घोडे का पांव टूट गया होता. यह सुन प्रताप की आखो से आंसू बहने लगे उन्होने कहा कि सेना अभी भी नाक मे दम किये है. कैसे क्या होगा ? सिकोतरी बोली– चिंता न करो राणा, मैं सदा तुम्हारे साथ हू रात को तुम बादशाह के डेरे पहुच जाना. वहां सब सोये मिलेंगे, केवल उसके पलग का पहरा दे रहे चार पीर मिलेंगे. तुम उनसे यह कह देना कि सोये हुए को छेडना हमारा धरम नही वरना कतल कर देता. बादशाह को कह देना कि सुबह होते-होते यहां से नौ दो ग्यारह हो जाय वरना परिणाम उलटा होगा.

यह कहते ही प्रताप बडे जोश-खरोश के साथ रवाना हुए. चेटक की टापों मे वह ताकत थी कि बारह-बारह कोस तक उसकी चाल से पत्थरो की आवाज गूजती थी. सुबह होते ही अकबर को जैसे स्वप्न आया और आशका ने उसे घेर लिया अन्ततः पीरो के कहने से उसे मेवाड़ छोडना पडा. फिर वह कभी लौट कर नहीं आया. कहा जाता है तब से भील और सिकोतरी की मेवाड़ राजघराने मे, अधिक प्रतिष्ठा कायम हो गई. प्रताप जब तक जिन्दा रहे सिकोतरी सदैव लाल मक्खी के रूप मे उनके साथ रही.

प्रताप की प्रासंगिकता :

राणा प्रताप की सबसे बड़ी प्रासंगिकता यही है कि उन्होंने अपने स्वातंत्र्य की अलग पहचान दी. मेवाड़ जैसे एक छोटे से राज्य की रक्षा के लिये उन्होंने अकबर जैसे शक्तिशाली से लोहा लिया और सारे राजपूत राजाओं द्वारा अकबर की अधीनता स्वीकार कर लेने पर भी अपनी अस्मिता को बरकरार रखा. यह सच है कि वे सारे हिन्दुस्तान के लिये नहीं लड़े पर हिन्दुस्तान के खिलाफ अपनी सत्ता-महत्ता को अलग बनाये रखने के लिये लड़ते रहे

प्रताप की यह प्रासंगिकता भी कम वजनी नहीं है कि उन्होंने राष्ट्रीय भावना का विकास किया. महात्मा गांधी तक ने उनसे प्रेरणा ग्रहण की. लन्दन में 17 नवम्बर 1931 को राउण्ड टेबल कान्फ्रेंस में बोलते हुए उन्होंने भारतीय राष्ट्र की रक्षा को भारतीयों द्वारा अक्षुण्ण रखने की वकालात करते हुए मेवाड़-राजपूताना और हल्दीघाटी का महत्व प्रतिपादित किया और कहा—'आखिर भारत ऐसा राष्ट्र तो नहीं है जिसे अपनी रक्षा करने का ढंग कभी ज्ञात न रहा हो. वहां सारी सामग्री है वहां राजपूत हैं जिनके बारे में यह माना जाता है कि उन्होंने ग्रीस की एक छोटी थर्मोपली नहीं बल्कि थर्मोपली जैसी हजार लड़ाइयां लड़ी हैं. अंग्रेज कर्नल टाड तक ने यह लिखा है कि 'राजपूताने में हर दर्रा थर्मोपली रहा है.' वस्तुत प्रताप के मूल्यों को जन-जन में प्रतिष्ठित करने और उनका महत्व समझे-समझाने की अब अधिक आवश्यकता है.

गणगौर अपहरण

गणगौर राजस्थान का बड़ा ही रसवती त्योहार है. यहां के निवासियो। इन दिनों जितने इन्द्रधनुषी रंग विविध रूपा चटखारे लिये देखे जाते हैं उतने अन्य किसी त्योहार पर देखने को नही मिलेंगे राजस्थानी गोरियां जहां अपने अटल सुहाग और अमर चूड़े के लिये गणगौर की बड़ी भक्ति-भावना से पूजा प्रतिष्ठा करती हैं वहां छोरियां होली के दूसरे दिन से ही मनवांछित वर प्राप्ति के लिये गवरल माता की पूजा-आराधना मे लग जाती हैं. शादी के लिए दूल्हा तोरण पर आया हुआ है मगर बनड़ी गणगौर पूजने मे मगन बनी हुई है. तभी तो गीत गूंजा है– 'राइवर डोल रह्या तोरण पर बनड़ो पूज रही गणगौर.'

राजस्थान में गणगौर सम्बन्धी कई कथा-किस्से प्रचलित हैं. इनमे गणगौरों के अपहरण की भी कई घटनायें सुनने को मिलती हैं. गणगौर पर गाये जाने वाले गीतो मे भी ऐसे कई संकेत भरे पड़े हैं. राजस्थान की अपनी शोध यात्राओ मे जगह-जगह गणगौर अपहरण की घटनायें मुझे बड़े अजूबे रूप मे सुनने को मिली. अपना पराक्रम दिखाने और दूसरे को अपमानित करने के लिये राजा महाराजा या जागीरदार अपने-अपने प्रतिद्वन्द्वी की गणगौर उडा लिया करते थे. मध्ययुग मे ऐसी घटनायें घटाटोप घटी हैं इसीलिये राजा महाराजाओ तथा ठिकानो के जागीरदारो की गणगौरें पुलिस के पहरे मे रहती. यह पहरा अन्त पुर की गणगौर के साथ भी रहता जहाँ डावडिया बडी सावचेत होकर गणगौर माता के चवर ढोलती रहती और अपने चारो कान चौकन्नें रखती.

उदयपुर की गणगौर बूंदी का ईसर :

उदयपुर से ही शुरु करें तो कहते हैं यहा के राजघराने से सबद्ध किन्हीं वीरमदास की 'गणगौर' नामक बडी रूपाली गोरीगट्ट कन्या थी जिसे चाहने वाले कई राव रईस थे. बूंदी के ईसरसिंह के यहां उसका सगपण कर दिया गया तो

कई लोग उससे ईर्ष्या करने लग गये और किसी तरह गणगौर को पाने की कोशिश मे लग गये जब ईसरसिंह को इस बात का पता चला तो वह रातो-रात उदयपुर आया और गणगौर को अपने घोडे पर बिठाकर चलता बना परन्तु रास्ते मे चम्बल अपने पूर पर थी ईसरसिंह ने आव देखा न ताव, घोडा नदी मे छोड दिया परिणाम यह हुआ कि नदी घोडे सहित ईसर गणगौर को ले डूबी. गीत पक्तियो मे यह घटना इस प्रकार वर्णित हुई है—

उदियापुर से आई गणगौर
आय उतरी बीरमाजी री पोल।

और गणगौर विदाई का यह गीत—

म्हारे सोल्हा दिन रा आलम रे
ईसर ले चाल्यो गणगौर।
म्हे तो पूजण रोटी खाती रे
ईसर ले चाल्यो गणगौर।'

यह गीत बहुत लम्बा है जिसमें प्रत्येक पक्ति के बाद 'ईसर ले चाल्यो गणगौर' की पुनरावृत्ति मिलती है.

' भाले की नौक पर गणगौर का अपहरण

गणगौर अपहरण सम्बन्धी बातचीत के दौरान रानी लक्ष्मीकुमारी चूडावत ने बताया कि उनके पीहर देवगढ की गणगौर भी इसी तरह उडाकर लाई हुई है उन्होने बताया कि देवगढ के पास बरजाल नामक गाव है जहां रावतो की अच्छी आबादी है एक बार यहा के जाला रावत को उसकी भोजाई ने किसी बात को लेकर ताना मार दिया कि ऐसी कौनसी तू जावद की गणगौर ले आयेगा ?

जावद तब एक बहुत बडी जागीरदारी थी और वहां की गणगौर की बडी प्रसिद्धि थी जाला को भोजाई की बात चुभ गई गणगौर के दिन जब जावद मे गणगौर की भव्य सवारी निकली तो जाला हिम्मत कर वहा पहुचा और भरी सवारी से भाले की नोक पर गणगौर उठा लाया जाला ने भाभी को गणगौर लाकर दी तो रावतो मे जाला का सम्मान और गणगौर की प्रतिष्ठा हुई भोजाई का दिया ताना एक नई कहावत को जन्म दे गया. आज भी बरजाल के रावतो मे यह कहावत सुनने को मिलती है— 'फलाणी तो जावद की गणगौर व्हियां बैठी है' यही गणगौर बाद मे रावतो के यहां से देवगढ ठिकाने मे लाई गई

गणगौर लाने पर गांव की जागीर :

अपने अध्ययन काल सन् 56-57 के दौरान गणगौर पर बीकानेर मे मैंने लाखणसी की लूर सुनी तब इसका कोई अर्थ मेरे पल्ले नही पड़ा पर जब चुरू जाना हुआ तो वहा के शोधकर्मी गोविन्द अग्रवाल ने बताया कि इस लूर के पीछे गणगौर अपहरण की ऐतिहासिक घटना गर्भित है बोले कि जैसलमेर के महारावल की आज्ञा से सिरड़ा गांव के भाटी मेहाजल आदि बीकानेर राज्य की गणगौर का अपहरण कर ले गये तब बीतावत खगारसिंह के पुत्र लाखणसिंह ने भाटियो पर धावा बोल मेहाजल को मौत के घाट उतारा और गणगौर प्राप्त की. इस पर बीकानेर महाराजा कर्णसिंह ने लाखणसिंह को ताजीम सहित चुरू जिले के रतनगढ़ तहसील का लोहा गाव जागीर मे दिया फलत लाखणसी के नाम की लूरें प्रारम्भ हुई जो आज भी इस क्षेत्र मे लाखणसिंह के शौर्य पराक्रम को जीवत किये हैं

डिंगल साहित्य के विद्वान सौभाग्यसिंह शेखावत ने एक पत्र द्वारा मुझे सूचित किया कि जोबनेर के समीपस्थ सिंहपुरी का रामसिंह खागारोत मेडता नगर की गणगौर बलात् अपहृत कर ले गया. यह सीकर ठिकाने का फौजदार था. इधर के गांवो मे आज भी यह डर बैठा हुआ है इसीलिये ग्रामस्वामी के घर से जब गणगौर की सवारी निकलती है तो उसमे गाव के सब लोग सुन्दर वस्त्राभूषणो के साथ-साथ भाले बन्दूक, तीर, कमान तथा लाठिया लिये चलते हैं ताकि गणगौर को किसी अपहरण से बचाया जा सके.

भाले की नोक पर गणगौर का धड़ लाना :

उदयपुर के बेदला ठिकाने के राव मनोहरसिंह के यहा तो एक ऐसी गणगौर है जो केवल धड रूप मे ही है उन्हे याद नही कि कहां से इस गणगौर का अपहरण किया मगर अपने बापदादो से वे यह जरूर सुनते आये कि लड़ाई मे तलवार से इसके हाथ पाव जाते रहे और भाले की नोक पर इसका धड लाया गया कोई तीनसौ-चारसौ वर्ष पुरानी यह गणगौर तीन दिन तक विशेष सस्कारो के साथ आज भी बडी श्रद्धा भक्ति के साथ पूजी जाती है. इसकी बणगट बडी मोहनी और लुभावनी है. बडे कीमती वस्त्राभूषणो से इसकी ऐसी उत्तम सज्जा की जाती है कि इसकी विकलागता का किसी को एहसास ही नही होता.

घोड़े पर गणगौर उठा लाना :

मेवाड के महाराणा स्वरूपसिंह के सामने एक दिन किसी ने कोटा की गणगौर की तारीफ कर दी तब महाराणा ने कहा कि कोई उसे लाकर दिखाये तो जानूं कि वह कैसी है ? महाराणा का कहना क्या हुआ सबके लिये चुनौती बन गया बीडा फेरा गया कि कोई माई का लाल ऐसा है जिसने सेर सूंठ खाई हो जो कोटा की गणगौर उडाकर लाये ? सब देखते रह गये तब गोगुन्दा के कुंवर लालसिंह ने बीडा झेला ठीक गणगौर के दिन लालसिंह अपने घोडे पर सवार हो कोटा पहुचा. दरबार गणगौर की मजलिस का आनन्द ले रहे थे. उसी समय लालसिंह ने कहलवाया कि बाहर से एक घुडसवार आया हुआ है जो घोडे पर गणगौर नचाने मे बडा प्रवीण है यदि दरबार का आदेश हो जाय तो वह अपना करिश्मा दिखाये. दरबार ने ऐसा करामाती न तो पहले कभी देखा न सुना जो घोडे पर गणगौर नचा सके अत इजाजत दे दी

लालसिंह अन्दर पहुचा. उसने गणगौर उठाई घोडे पर रखी और उसे धीरे-धीरे घुमाना प्रारम्भ कर दिया फिर थोडी घोडे की चाल बढाई और मौका पाकर ऐसी एड मारी कि घोडा वहा से छलाग मारता हुआ चल निकला सब लोग हक्के-बक्के हो देखते रह गये पल भर के लिये लगा कि जैसे कोई जादू तो नही हो गया बाद मे तो घुडसवार सिपाही उसकी खोज मे भी निकले मगर कुछ पता नहीं लग पाया

लालसिंह ने महाराणा को गणगौर लाकर नजर की महाराणा ने उसकी बहादुरी की बडी तारीफ की और इनाम रूप मे वही गणगौर उसे दी जो प्रतिवर्ष गोगुन्दा मे आयोजित गणगौर मेले की शोभा बढाती है यहा उस गणगौर के साथ ईसर की सवारी भी निकाली जाती है यह मेला मुख्यत. रात को भरता है जिसमे आसपास के सैकडो आदिवासी स्त्री पुरुष भाग लेते हैं और नृत्य गीतो द्वारा मेले को जगमग करते हैं सन् 75 के गणगौर मेले के अध्ययन के लिये जब मैं गोगुन्दा गया तो वहां के वयोवृद्ध पुरोहित भेरूलालजी ने यह सारी घटना कह सुनाई

राजस्थान मे गणगौर पर आयोजित घूमर नृत्य और गीत बडे लोकप्रिय रहे हैं अलग अलग ठिकानो की घूमरो की अपनी खासियत है. इन ठिकानों मे उदयपुर, कोटा, बूंदी, बीकानेर, प्रतापगढ की घूमरें विशेष उल्लेखनीय हैं इनके अतिरिक्त लाखा फूलाणी, नयमल तथा गीदोली नामक लम्बे गीतो का भी

यहां बोलबाला रहा है ये गीत अपने आप मे इतिहास के विशिष्ट पन्ने लिये हैं और गणगौर विषयक वीर संस्कृति के उज्ज्वल कथानक हैं

गणगौर पर गींदोली का अपहरण :

गींदोली के सम्बन्ध मे तो रानी लक्ष्मीकुमारीजी ने बताया कि गींदोली नाम की अहमदाबाद के बादशाह मेहमूदबेग की कन्या थी जिसे महुवा का कुंवर जगमाल लाया हुआ यह कि पाटण का सूबेदार हाथीखां महुआ मे तीज खेलती 140 कन्याओ को पकड़कर ले गया और अहमदाबाद के बादशाह को भेंट कर दी. जगमाल तब कही बाहर था. लौटने पर जब उसे पता चला तो उसके क्रोध की कोई सीमा नही रही. उसी समय उसने प्रतिज्ञा की कि जब तक मैं इसका बदला नही लूंगा हजामत नहीं बनाऊंगा धुले हुए कपडे नही पहनूंगा और न सिर पर पगड़ी ही धारण करूंगा.

गणगौर के दिन बादशाह की बेटी गींदोली सवारी देखने निकली तब मौका देखकर जगमाल का प्रधान भोपजी हूल सवारो के साथ वहां जा पहुंचा और गींदोली को उठाकर चलता बना महुवे मे गणगौर विसर्जन के बाद जब जगमाल की सवारी लौट रही थी तब भोपजी ने जगमाल को गींदोली ले जाकर दी. इस पर जगमाल के हर्ष का पार नहीं रहा. उसने उस सवारी मे गींदोली को आगे किया और स्वयं पीछे होकर चले तब महिलाओ से गींदोली का यह गीत फूटा— 'आगे आगे गींदोलडी पाछेए जगमाल कवर'

इस घटना को कोई छह सौ वर्ष व्यतीत हो गये परन्तु आज भी राजस्थानी महिलायें गींदोली गाकर महुवे से पकड़कर ले जाई गई उन 140 कन्याओ के बदले मे प्राप्त गींदोली की गूंज ताजा कर देती हैं.

प्रतिवर्ष गणगौर आती है और ये सारी घटनायें राजस्थान के प्रत्येक कण पत्थर मे गूंजने लग जाती हैं परन्तु गणगौर के चले जाने के साथ-साथ फिर वर्ष भर के लिये न जाने कहां अलोप हो जाती हैं ?

महिला वेशभूषायें

राजस्थान अपनी वेशभूषाओं के लिए अत्यंत पुरातनकाल से ही प्रसिद्ध रहा है विविध उत्सवों एवं त्यौहारों पर विविध प्रकार की वेशभूषा धारण कर यहां की रंगीनियों ने अपने रंगीले राजस्थान के गौरव को अक्षुण्ण बनाने में चिर सहयोग दिया है. रंगरूपों की इसी विविधता के कारण पण्डित नेहरू ने राजस्थान को 'रंगों का प्रदेश' कहा है यहां की महिलाओं के उत्तरीय वस्त्रों में ओढना, चूंदडी, फागणिये, लहरिये तथा पीलिये, अंग वस्त्रों में चोली, कांचली तथा कब्जा एवं अधो वस्त्रों में घाघरा मुख्य है

ओढ़ना

यह पोत का बनाया जाता है पोत दो टुकडों को जोडकर बनाया जाता हैं जिन्हें पाट कहते हैं. ये ओढने सवा पटिया से लेकर डेढ पटिया, पौने दो पटिया तथा दो पटिया तक के होते हैं सवा पटिये में एक पाट एक गज चौडा तथा दूसरा पाव गज चौडा होता है डेढ पटिये मे एक पाट एक गज का तथा दूसरा आधा गज चौडा होता है पौने दो पटिय मे एक गज तथा पौन गज की चौडाई वाले पाट तथा दो पटिये ओढने मे दोनों पाट एक एक गज की चौडाई लिये होते हैं एक पटिया ओढने के किसी प्रकार का साधा नही होता है डेढ पटिये मे साधा होता है ये कई रंगो के होते हैं इन्हे लुगडा भी कहते हैं

चूंदड .

लाल रंग के ओढने को चूंदड कहते हैं यह ढाई गज लम्बी और पौने दो गज चौडी होती है ये चूंदडें कई प्रकार की होती हैं इनमे केरी, पुतली, मकई, जवार, फूल चौकडी, बाडी, डाबा, मोतीचूर तथा एक डानी भांत की चूंदडें अधिक प्रचलित हैं इनके अलावा किसी रंग से भी चूंदडें पहचानी जाती हैं जैसे काले रंग की काली चूंदड तथा लाल रंग की राती चूंदड गीतो

मे काली चूंदडी पर के बोल अधिक सुनने को मिलते हैं यथा- 'काली चूंदड ऊपर बालमा बोत राजी '

गणगौर पर पार्वती की पूजा करते समय मोतीचूर नामक चूंदड ओढी जाती है भाई जब अपनी बहन के माहेरा ले जाता है तो उसमे चूंदड की प्रधानता रहती है भाणेज अथवा भाणजी की शादी के दिन कलश वदाते समय भाई अपनी बहन को चूंदड ओढ़ाता है. यही चूंदड भाई अपनी भानजी को फेरे के समय चौथे फेरे मे ओढाता है इसे मामा चूंदडी भी कहते हैं चूंदड प्राय प्रत्येक शुभ एव मागलिक अवसर पर ओढ़ी जाती है चवरी मे चूंदड ओढ़ते समय गाया जाता है---

लाडी सेर भर्‌या री चूंदडी,
लाडी पाव भर्‌या री मजीठ
लाडी ओडो सवागण चूंदडी.

चूंदड सुहाग एव सौभाग्य की अमर निशानी है शादी होने के पश्चात् जिस दिन चूडा पहना जाता है उस दिन लडकी को चूंदड ओढाई जाती है. लडकी जब पीहर से ससुराल जाती है तब देहली पूजते समय चूंदड धारण करती हैं. इसके अलावा माताजी पूजते समय, घूघरी बाटते समय, चाक लाते समय, तेडे देते समय, झलमा पूजते समय, खीचडी खाने के लिये पीहर अथवा ननद या मौसी क घर जाते-आते समय भी चूंदड ओढी जाती है पाच, सात अथवा तेरह दिन का सूरज पूजते समय भी चूंदड ओढी जाती है जो चौथे फेरे की दी हुई होती है सत्ताइस दिन बाद माथा नहाने के पश्चात् जब प्रसूता को तेडी जाती है तब भी चूंदड ओढी जाती है. महीने सवा महीने बाद जब ननद मामा आदि क घर जाना होता है तब वहा चूंदड ओढो जाती है तथा चूंदड मे ही बालक झुलाया जाता है रोडी पूजने तथा भेरू पूजने पर भी चूंदड ओढ़ी जाती है शादी कराते बैठते समय, लडकी को डेरे पहुचाते समय, घोडे चढते समय, मुस्यारा पहनते समय, आणा आते समय तथा लाडू बाटते समय भी चूंदड ओढी जाती है ब्याह-शादी मे सध्या को गीत गाते समय प्रारम्भ के पाच दिनो तक चूंदड नेवो पर रखी जाती है प्रात सपने गाते समय भी चूंदड नेवों पर रखी जाती है सध्या गीत गाते समय भी चूंदड ओढी जाती है और तो और जब कोई स्त्री मर जाती है तब भी उसे चूंदड़ ओढ़ाकर ही श्मशान ले जाई जाती है

फागणिया :

यह शीतकालीन परिधान है एक सियाला गीन मे ऋतुओ के अनुसार ओढनो का बडा सुन्दर विवेचन मिलता है. तदनुसार—

> उनाला रा पोमचा,
> चौमासा रा लहरिया
> सियाला रा फागण्या छपाओ म्हारी जोडी रा
> रतन सियालो राजन यू ही रयो जी.

ग्रीष्म मे पोमचे, वर्षा मे लहरिये तथा शीत मे फागण्ये पहनने का प्राय रिवाज सा बना हुआ है

होली पर राजस्थानी रमणिया बमतिये फागणिये तथा नाना प्रकार के रगाई, बधाई और छपाई के वस्त्र धारण करती हैं फागणियो मे अगूरी, गुलाबी, सफेद चन्दनिया, चू दडी तथा सक्ती आदि विभिन्न प्रकार के फागणियो का प्रचलन रहा है फागुन लगते ही 'फागण आयो रसिया म्हानै फागणियो रगायदो' जैसे गीत-बोलो की झडी सी लग जाती है और नवेलियो पर महीन मलमल की सफेद परत पर किनारे लाल, लाल चू दडी फूल मनभावन दखणीचीर, पीले कपडे पर चू दडी बधाईवाले पीलिये, केसरिये कपडे पर चू दडी बधाईवाले केसरिये और नाना रगो के बासन्ती वस्त्र लहराने लगते हैं डाडम्या आगन और लीले कोरपल्ले वाले फागण्ये भी बहुप्रचलित रहे हैं फागण के गीतो मे कई गीत फागणिये का महत्व प्रतिपादित करते हैं एक गीत लीजिये—

> राजी राजो बोल तन्ने फागणियो रगाई द्यू
> रासू म्हारी सुन्दर धण ने जोब री जडी
> गुलाब री छडी हांजी मिसरी री डली फागण आयो रे.
> कोई-कोई ओढ्या भीणी भीणी चू दड
> कोई-कोई ओढ्या दखणी चीर होली आई रे

लहरिया :

यह मुख्यत सावन मे ओढा जाता है वर्षा की छोटी छोटी बूदो के साथ जनमानस मे हर्ष एव उत्साह के अकुर फूट पडते हैं इस ऋतु मे भाति भाति के आकर्षक लहरिये धारण कर स्त्री समुदाय बाग-बगीचो तथा सरोवरो के किनारे जाकर नृत्य गीतो से नानाविध मनोरजन प्राप्त करता है ये लहरिये लाल,

पीली काली, सफेद, तोरम्या, अदरग, आसमानी गुलाबी तथा सुवापखी लहर के आकार की धारियाँ लिये विविध प्रकार के होते हैं. बधेरो द्वारा ये दो दो, तीन तीन तथा पाच-पाच रगो से लेकर आठ-आठ रगो तक मे बाधे जाते हैं. लोकगीतो मे लहरियो के वर्णन बहुतायत मे मिलते हैं यथा—

काली पीली बादली म्हारो लेहरियो भीजोयो जी राज
चतर आपरा गोठीडा पचरग्या नीचोयो जी राज

पीलिया

राजस्थानी लोकगीतो मे जिस प्रकार बूदी की फुदी कोटा का गोटा अत्यत प्रसिद्ध है ठीक उसी प्रकार जयपुर के लहरिये, जोधपुर की चूदडियो तथा उदयपुर के पीलिये व पोमचे अधिक प्रचलित रहे हैं पीलिया एक प्रकार का विशेष ओढना होता है जो पुनजन्म के पश्चात् प्रथम होली पर पीहरवालों की ओर से भेजा जाता है इसे झलमा पूजते समय तथा होली की पूजा करते समय ओढा जाता है इसका आगन पीला, लाल कोरपल्ले बीच म बडा चाद तथा खाजे और चारो पल्ला पर चार छोटे छोटे चाद होते हैं इस कोर बीज्या पखी तथा लेर गोटे स भी सजाया जाता है झलमा पूजने के एक गीत मे जच्चा को पीलिया ओढने की बडी हूस है अत वह अपने पति से पाटण से उसके लिये पोत मगवाकर उदयपुर के रगरेज से नन्ही सी बधण बधाने और अजमेर की कोर दिलाने की अरज करती है—

एके पीया ओ म्हाने पीलया री हूस,
पीलियो वेगो मगाव जो
एके पोत ओ पाटण रो मगावो
नानीसी बधण बधावजो
एके रगरेज उदैपर रो तेवाडो
कोर अजमेर री देवाड जो

पीरये सम्बन्धी और भी अनेक गीत यहाँ प्रचलित हैं एक गीत मे मेडता में उसका ताना तना गया और अजमेर मे नाल भरी गई चित्तौड की तलहटी मे उसकी बुनाई हुई और जैसलमेर मे उसे रगा गया पल्लो पर घूघरू और बीच म चाद बनाये गये और जीरे की तरह लाखिणी बूदो की उसकी बधाई की गई किसी गीत मे दिल्ली से उसका पोत मगाने, जयपुर से बधेरा बुलाने, पल्ले-पल्ले उसके मोर पपीहा और घूघट की जगह नणदल बाई के भाई यानी अपने प्रियतम का चित्र बनाने की भावना बडे सुन्दर ढग से मिलती है.

कोरवर्‍या :

वधू के लिये उसके मामा की ओर से जो ओढना लाया जाता है वह कोरवर्‍या कहलाता है. इसका आंगन सफेद और पीले कोर पल्ले होते हैं इसके साथ लाल घाघरा तथा सफेद कांचली होती है. शादी के दिन इसे मुस्वारे के साथ ले जाया जाता है. मामा के नहीं होने पर अन्य भाईबन्धों में से ही यह किसी को लाना होता है यदि भाईबन्ध भी नहीं हुए तो देवर जेठ तथा अगास्यों-गरास्यों में से ही किसी को लाना होता है. यदि ये भी न हुए तो दुल्हन की मां का मामा अथवा भुवा या फिर बहिन की ओर से लाया जाता है और यदि ये भी न हुए तो फिर दुल्हन के घर से ही व्यवस्था कर ली जाती है परन्तु इसका होना परम आवश्यक है.

घाट :

लाल आंगन, लोली किनारी तथा छोटे-छोटे हरे साजोवाला ओढना घाट कहलाता है. लडकी को ससुराल के लिये विदाई देते समय इसे ओढ़ाया जाता है जो वहां जीमने-चूटने जाते वक्त लगातार तीन दिन तक ओढ़े रहती है. भांडा बादते समय भी यह ओढा जाता है. लाल आगन तथा काले कोरपल्ले वाला ओढना बादरवन्या कहलाता है. एक छींटी का ओढना होता है जो वसन्त्ये रग मे रगा होता है और जिसमें वाराकूची से भांति-भांति के रग के छींटे दे दिये जाते हैं

अगोछा :

ओढने का एक नाम अगोछा भी है ये अगोछे बाडी तथा जवार भांतो मे काले तथा लालरगों के अधिक छपाए जाते हैं विधवाओं के ओढने के काले रग के रेणसाही पोमचे होते हैं जिनका आगन काला, लाल छोगे तथा पल्लो पर काले पालव होते हैं. इसी तरह के नातणे भी होते हैं. सधवाओं के ओढने के पोमचे हरे, आसमानी, लाल, तोरम्या, मोत्यां, पीले, गुलाबी आदि रग लिये होते हैं तीन-तीन अथवा पाच-पाच रगों की धारियो वाला ओढना घनक कहलाता है. तोरूफूलिये तथा बन्दागर ओढने भी इधर काफी चलते हैं ओढने के टुकडो को पाट उन्हें सुई से सिलकर जोडने की क्रिया को खीलना तथा सिलाई को सिवणा कहते हैं एक पाट के फट जाने पर उसकी पूरी सलाग फाड कर फिर से उसके मुह जोडकर साबी बनाने की क्रिया को डाकेर्‍या करना कहते हैं

काचली :

स्तनो को ढकने के लिए काचली पहनी जाती है इसका कटोरीनुमा वह हिस्सा जो स्तनो को ढकता है टूकी कहलाता है दोनो टूकियो के ऊपर जो गोल गरासा होता है उसे कठा कहते हैं टूकी के नीचे की पक्की को ग्राड कहते हैं काचली को कसने के लिए जो नाल बाधे जाते हैं उन्हे कसणें कहते हैं इन कसणो के रग बिरगे फूदे लगाये जाते है ये कसणें ऊपर तथा नीचे के दोनो भागों पर लगाई जाती है जो पीठ पीछे बधती हैं टूकियो के नीचले किनारे पर जो कपडा पेट ढकने के लिए लगाया जाता है वह तनकी कहलाता है यह कावली टूकियो व ली काचली कहलाती है. टूकियो के नीचे ग्राडें तथा बगल मे दोनो ओर खडपे होते हैं बाहु तथा पेट भाग को जोडनेवाला हिस्सा सराक्या कहलाता है

एक काचली तनवाली होती है इसमे सामने छाती पर तन होता है. यह तन आडा तथा खडा होता है आडे तथा ऊंचे खडपे की भी काचलियाँ होती हैं इनके चारो ओर मगजी दी जाती है इन काचलियो के अतिरिक्त करुयावाली, चौपडवाली तथा खडबूजावाली काचलियां भी होती है इनमे बाहो पर चोपड, खडबूजे आदि लगाये जाते हैं. इन काचलियो पर कोर के तरह तरह के फूल तथा पत्तिया दी जाती है और बेलें भी निकाली जाती हैं. टूकियो पर भी तरह तरह की कोर की फूल-पत्तिया बनाई जाती हैं पूरे पेट को ढकनेवाली आगी चोली, पोलका तथा कब्जा कहलाती है

घाघरा :

नाभि से लेकर पाव के टखने तक जो वस्त्र पहना जाता है वह घाघरा कहलाता है इसम कपडा जोडकर नाभि के बाघने का जो बन्धन डाला जाता है वह नाडा और नाड का घर नेफा कहलाता है नेफे तथा चीण के उस खुले हुए भाग को जहाँ नाडे की गाठ बाधी जाती है, नाक्या कहते हैं घेर के नीचे के भाग पर दो अगुल चौडी पट्टी दी जाती है उसे मगजी और उसके नीचे जो पट्टी जोडी जाती है, उसे हजाव तथा माजा कहते हैं

ये घाघरे कई तरह के, कई रग के होते हैं इनमे पट्टीदार, माजेदार, मागरदार, पत्तियादार तथा लेरगोटेदार घाघरो के अलावा पचास एव अस्सी पल्लो के घाघरे अत्यत लोकप्रिय रहे हैं. एक पल्ला तीन फीट के एक बार का

होता है और एक पल्ले की चार कलियां होती हैं लोकगीतों मे अस्सी कलियों के घाघरे बहुत चर्चित रहे हैं. यथा– 'अस्सी कल्या रो घाघरो रे कलि-कलि मे घेर.' इन पहनावों में रंगों का भी अपना अलग वैशिष्ट्य विधान है जैसे हरे रंग के घाघरे पर पीले रंग का ओढ़ना और कसूमल रंग की कांचली बड़ी खूबसूरत लगती है.

रंगाई छपाई बंधाई :

इन पोशाकों की रंगाई, छपाई तथा बंधाई का काम भी विशिष्ट जाति के लोग करते हैं. रंगरेज प्राय: रंगाई का, छीपे छपाई का तथा बंधेरे बंधाई का काम करते हैं. नीलगर लोग रंगाई छपाई तथा बंधाई तीनों का पेशा करते हैं. छपाई के अन्तर्गत मुख्य रूप से गूजर महिलाओं के घाघरों के लिये नानणे, कृषक महिलाओं के ओढ़ने के लिए छायल, पुरुषों के सिर पर बांधने के लिए तथा ब्राह्मण महिलाओं के पहनने के लिए अंगोछे. पोमचों में सधवाओं के पहनने के लिए गुलाबी रंग तथा विधवाओं के लिए रेनसाई रंग के पोमचे छापने का काम अधिकाधिक रूप मे किया जाता है.

बंधाई में लेरिया दो रंगा-अंगूरी तथा मोती, तीन रंगा–बादामी, अंगूरी तथा कच्चा पीला, पंच–रंगाअंगूरी, मोती, कच्चा पीला, बादामी तथा कमक्सी, जापे पर ओढ़ेजाने वाले बड़ी किनार के पीलिये, पोलेदारें तथा लाल होदवाली चूंदड़ें, छोटी किनारवाले मोती कोरये, चौखुटी तथा चार दाणों के मिश्रण की एकदाली भरमा चूंदड़ें, मूंग्या रंगी सफेद व दूध्या होदवाली लाल पल्लों की दो-रंगी डबरी साड़ियां सर्वाधिक लोकप्रिय हैं.

रंगाई में घाघरे, लुगड़े, फेंट्ये, कांचली, कुरते तथा भगल्ये टोपी प्रमुख हैं. सबसे मुश्किल और मेहनत का काम बंधाई का है यह काम रंगाई तथा छपाई की अपेक्षा अधिक मंहगा भी है. सभी कपड़ों की बंधाई के ढंग जुदा-जुदा हैं. इनमें नानणा बनाने की विधि का यहां उल्लेख किया जा रहा है जिससे इनकी बंधाई की कुछ जानकारी पाठकों को मिल सके.

नानणा बनाने की विधि :

इसके लिए सर्वप्रथम रेजे को तालाब पर लेजाकर धोबने से खूब धोया जाता है तदुपरान्त गीले रूप में ही उसे हरड़े में दाबकर सूखा दिया जाता है. हरड़े को पीसकर पानी में खूब घोल दी जाती है. सर्दी में यह पानी थोड़ा गरम

करके डाला जाता है इसके बाद रेजे को सूखा दिया जाता है. यह सूखावट एकपाला ही की जाती है इससे इसके ऊपरी भाग में गहरापन आ जाता है तथा नीचेवाला हरडे का भाग फीका रह जाता है. तदुपरान्त पानी मे पीसी हुई फिटकरी मे गोंद मिलाकर उससे रेजे को गहरे रग पर छापा जाता है और उसे सूखा दिया जाता है. सूखाने पर फिर उसे धोकर एलीजर रग मे रग दिया जाता है इससे जहा फिटकरी मे छापे होते है वह रग बैठ जाता है फिर चिकनी मिट्टी में गोंद मिलाकर उसे बारीक कपडे से छान लिया जाता है और तब पहले के लाल रग पर सपेद पखुडियो मे गाल दी जाती है. फिर रात्रि को उसे जमीन मे गडी नाद मे चूने के पानी मे लील मिलाकर रख दिया जाता है. इससे रात मे रग पक जाता है और चूना नीचे बैठ जाता है

जब पानी में तेजी आ जाती है तब प्रात: धीरे-धीरे नानणे के पड को खोलते हुए उसे माठ मे डाला जाता है और सूखा दिया जाता है और तदनन्तर उसे मसल कर उसकी मिट्टी उतार ली जाती है. इसके बाद चूना तथा गूद मिलाकर नानणा छापा जाता है. लाल छपाई पर दूसरी बूदी छापने से होद आसमानी हो जाता है और पखुडिया सपेद बन जाती है फिर धोकडो की कुट्टी कर उसे कूडे में उबाल दिया जाता है. इससे उससे जाडा कस निकलता है. कूडे मे दो-तीन बार डुबो-डुबो कर सूखाने पर उसकी पखुडिया दाडिम रग की बन जाती हैं अन्त मे फिर उसे फिटकडी मे डालकर सूखाया जाता है. इससे धोकडो का रग पक्का पड जाता है.

विविध छापें :

इन्हें छापने के लिए कई तरह की छापें होती हैं जो लकडी की बनी हुई होती हैं. ये छापें भदकरा जाति के लोग बनाते हैं जो चित्तोड मे रहते हैं. इन छापों मे विविध प्रकार के फूल पत्ती, बेल बूटे, फल-फूल, पशु-पक्षी, प्रमी-प्रेमिका तथा स्थापत्य कला के प्रतीक विशिष्ट झरोखे, माडने एवं गवाक्ष देखने को मिलते हैं अपनी शोध-यात्राओ मे एक-एक से बढ़चढ़कर छपाई मे प्रयुक्त छापें मेरे देखने मे आई अलग-अलग अचलों के पहनावे मे विविधता है और उसी के अनुरूप छपाई देखने को मिलेगी. मेवाड में आहाड तथा आकोला की छपाई बहुत प्रसिद्ध है. आकोला तो छपाई के कारण ही छींपो (छपाई करने वालो का नाम) का आकोला कहा जाता है.

लोकदेव ईलोजी

राजस्थान के लोकदेवताओं में ईलोजी सर्वथा भिन्न किस्म के लोकदेवता हैं जिनकी होली पर ही विशेष पूजा प्रतिष्ठा होती है. अन्य देवी देवताओं की तरह इनका सजाधजा मन्दिर भी नहीं होता और न विधिवत पूजा अनुष्ठान ही. न वैसी साप्ताहिक चौकी लगी ही कहीं देखी गई और न वैसे विशिष्ट पुजारी भोपे ही.

राजसी वेश में ईलोजी :

ईंट-पत्थर से बनी प्लस्तर की हुई विशाल राजसी वेश विन्यास वाली इनकी प्रतिमाएं यत्र-तत्र देखने को मिलती हैं इनका चेहरा भरा भारी, हृष्टपुष्ट शरीर, बांकी तनी मूछें कानों में कुंडल, गले में हार, भुजाओं पर बाजूबन्द, कलाइयों में कंगन, सब मूर्ति में ही उभारे हुए या फिर तरह-तरह के रंगों में चितेरे मिलेंगे. जहां इनका कमर से ऊपर का सारा शरीर सजाधजा मिलेगा वहां नीचे का भाग खुली नग्नता लिये एक अजीब माहौल खड़ा कर देता है. लिंग के स्थान पर लकड़ी का एक मोटा गोटा रखा रहता है जो बालकों के लिये जहां मनोविनोदकारी होता है वहां निपूती औरतें इसे अपनी योनी से छुवाकर सन्तान प्राप्ति का वरदान लेती हैं.

ईलोजी की बरात :

राज परिवार से जुड़े हुए ये ईलोजी राजा हिरण्यकश्यप के बहनोई थे. जिस दिन ईलोजी नास्तिक राजा हिरण्यकश्यप की बहिन होलिका को ब्याहने के लिए विशाल बरात और अपने वैभवशाली स्वरूप के साथ आ रहे थे कि हिरण्यकश्यप को होलिका के माध्यम से प्रहलाद से मुक्ति पा लेने की सूझी दोनों भाई-बहन के बीच प्रगाढ़ प्रेम था. एक दूसरे की कही बात को कोई टालने की स्थिति में नहीं था उसने होली से प्रहलाद का खात्मा करने को कहा. कहते हैं कि होली के पास एक दिव्य चीर था जिस पर अग्नि का कोई प्रभाव नहीं पड़ पाता था. उसी को ओढ़ प्रहलाद को अपनी गोदी में लेकर होली अग्नि में

बैठ गई परन्तु हुग्रा यह कि प्रहलाद तो बाल-बाल बच गया ग्रौर होली ही ग्रग्नि को समर्पित हो गई.

इधर ईलोजी की बरात ग्रा पहुंची. जब सब लोगो को इस घटना का पता चला तो बडा दुख हुग्रा. ईलोजी तो सुधबुध ही खो बैठे. उन्होने ग्रपने सारे राजसी वस्त्र उतार फैंके ग्रौर होली के वियोग मे विलाप करते हुए दहनस्थल पहुचे ग्रौर उस गर्म राख को ही ग्रपने शरीर पर लपेटने लगे. ईलोजी ने फिर विवाह नही किया. ग्राजीवन कुंवारे रहे इसलिये ग्राज भी जिसका विवाह नही हो पाता है उसे ईलोजी नाम ही थरप दिया जाता है. ईलोजी द्वारा ग्रपने शरीर पर राख लपेटने का यही प्रसग धुलेंडी नाम से प्रारम्भ हुग्रा. इसलिए प्रथम दिन होलिका दहन होता है ग्रौर दूसरे दिन धुलेंडी को सारे लोग धूल-गुलाल उछालते मोद मस्ती करते हैं.

भैरव रूप में ईलोजी :

क्षेत्रपाल व भैरव के रूप मे भी ईलोजी की मान्यता रही है. विवाह के तुरन्त बाद क्षेत्रपाल ग्रथवा भैरूजी की पूजा करने की परम्परा यहां घर-घर गाव-गाव रही है. इससे वैवाहिक जीवन सुखी व सुरक्षित मान लिया जाता है. यदि क्षेत्रपाल नही पूजे गये तो ईलोजी जैसे ग्राजीवन कुवारे रहे वैसा ही ग्रनिष्ट ग्राकर घेर लेगा, ऐसी धारणा घर कर लेती है. इसलिये किसी ग्रनघड़ पत्थर को लेकर उसके सिन्दूर पन्नी लगा दी जाती है ग्रौर नारियल की धूप देकर पति-पत्नी एक साथ उनके धोक देते हैं ग्रौर जोडी ग्रमर रहने का प्रसाद पाते हैं.

ईलोजी की मानता होली से लेकर शीतला सप्तमी तक चलती रहती है. कई जगह ईलोजी की सवारी निकलती है. जैसलमेर मे कभी धुलडी के दिन एक ग्रादमी ईलोजी बन निकलता जिसके लिगाकर बडा डडा जिसके ग्रोरछोर मूंज के बाल लगे रहते. यह व्यक्ति राजमहल मे जाकर राजाजी को सलामी करता.

ईलाजी के स्वांग :

उदयपुर में भी ईलाजी के नीमड़े से एक ब्राह्मण काले कपड़े पहन ईलोजी बन निकलता. इसी नीमड़े के यहां गोबर के ईलोजी बनाये जाते तब महाराणा स्वय यहां पधारते. दो दिन तक ऐसा ग्रश्लील वातावरण छाया रहता कि ग्रौरतें

घरो से बाहर तक नहीं निकलती महाराणा सज्जनसिंह के पश्चात् यह कार्यक्रम नही चला. पहले कभी ढोलामारू की सवारी भी इस दिन निकला करती तेली लोग भी उल्टे खाट पर ईलोजी की सवारी निकालते तब किसी मनचले व्यक्ति को उसका सारा शरीर मिट्टी से पोत पोत कर खाट पर बिठा दिया जाता और हाहुल्लड मे लोगबाग निकलते होली पर दरबार के छल्ले मे अश्लील चित्र लगे रहते. चितेरे इन चित्रो को दो माह पहले से ही बनाने शुरु कर देते.

नगी औरतो द्वारा ईलोजी की पूजा :

उदयपुर के देवगढ कस्बे मे तो शीतला सप्तमी को लकड़ी के बने ईलोजी ही मुख्य सडक पर रख दिये जाते हैं रास्ते से जो भी बस, ट्रक आदि वाहन उधर होकर गुजरते हैं उन्हें अनिवार्यत उन ईलोजी के एक रुपया नारियल भेंट करना होता है नहीं तो उनका उधर से निकलना ही वर्जित कर दिया जाता है इधर के गावो मे इस दिन लोगबाग भोजन कर दूर जगलो मे शिकार के लिये निकल जाते हैं पीछे से प्रत्येक घर की औरतें नगी होकर रहती हैं और ईलोजी का पिंड अपने से छुवाती हैं

कहने का तात्पर्य यह कि ईलोजी एक ऐसा विचित्र लोकदेवता है जो एक ओर निसतान औरतो को सतान देता है तो दूसरी ओर हसी, मजाक व तिरस्कार का पात्र भी बनता है नामर्द व्यक्ति के लिए भी ईलोजी शब्द का प्रयोग एक गाली के रूप मे सुनने को मिलता है

हिमाचल के ईलोजी ·

हिमाचल प्रदेश के आदिम जातीय त्योहारो मे चेत्रोलखोन नामक पर्व का मुख्य आकर्षण ही ईलोजी का स्वाग रहा है. यह पर्व चैत्रमास मे मनाया जाता है जो भूत-प्रेतो से सम्बन्धित है चमाव मे इस अवसर पर बडे आकर्षक स्वाग निकाले जाते हैं

इस सम्बन्ध मे प्रो एन. डी पुरोहित ने रगायन के जून, 80 के अक मे लिखा है-'इसमे एक विशेष परिवार का व्यक्ति अपने चेहरे पर अ कलिड लकडी का बना राक्षस का प्रतीक भीमकाय मुखौटा (खोर) लगाता है और शेष शरीर को देवता के कपडो से ढकता है. इस वीभत्स मुखौटे मे दात बाहर निकले होते हैं और सिर पर जानवरो के सींग लगे रहते हैं मुखोटा काले-सफेद रगो की

धारियों वाला होता है और कपडे पीले इसकी गर्दन के पास लकडी का बना मोटा लिंग हड्डियो की माला के बीच फसाकर लटका दिया जाता है इसका अग्रभाग लाल और शेष काला होता है

गाव के मुख्य पर्वस्थल पर ईलोजी का स्वांग गाजे-बाजे के साथ जुलूस रूप में ले जाया जाता है इसमें भाग लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति के हाथ मे लिंगाकार लम्बी लकडिया होती हैं ये शिश्न का प्रतीक मानी जाती हैं इन्हे ग्रामीण युवक अपने हाथो मे हिलाकर अश्लील क्रियाओ का अनुसरण करते हैं स्त्रियां भी ईलोजी के गले मे झूलते लिंग का मगलमय स्पर्श करती हैं '

छेड़ा देव लांगुरिया

छेड़ा देव से तात्पर्य छेड़खानी करने वाले देव से है होली के दिनों मे खासतौर से राजस्थान मे ईलोजी और लागुरिया, ये दोनो देव बडे विचित्र रूप मे याद किये जाते हैं ईलोजी तो बाझ औरतो को सन्तान देने वाले देव हैं बशर्ते कि औरतें इनका लिंगपूजन कर इनके सम्मुख नाक रगडे और इनके लिंग को अपनी योनि से छुवाये राजस्थान मे कई जगह ईलोजी की राजशाही पुरुषाकृति मे प्रतिमाए मिलेंगी और ऐसी औरतें भी कई मिलेंगी जिन्होने ईलोजी की कृपा से सन्तानें प्राप्त की हैं ये ईलोजी बाल-बच्चा म हमी मजाक के पात्र भी बनते हैं कई मनचले इन दिनो इनके डडाकार भारी बने लिंग से छेड़खानी करते हैं कई जगह ईलोजी की विचित्र सवारी भी निकाली जाती है तब भी लिंग ही एक लकडी के गोटे के रूप मे सबका ध्यान आकृष्ट करता है.

लागुरिया ईलोजी से भिन्न है जिसकी खासकर राजस्थान के करौली क्षेत्र मे बडी मान्यता है ब्रज प्रदेश मे भी इसके बडे चर्चे हैं जो लोकगीत इसके सम्बन्ध मे प्रचलित हैं उनमे यह पर पुरुष के रूप मे भी याद किया जाता है लागुरिया के मूल मे प्रचलित लगर शब्द का अर्थ भी पराई स्त्री से अनुचित सम्बन्ध रखने वाला रसिक पुरुष है अपने सम्बन्ध मे स्वय लागुरिया जवाब देता है—बम्मन के हम बालका, उपजे तुलसी पेड यह देव ऐसा जोधा कि छ माह की लम्बी रात्रि भी हो जाय तो तनिक भी सोयेगा नहीं. यह देवी का परम भक्त है देवी आज्ञा दे तो असुर के नौ कोलें ठोकदे पर भक्तजन यह अच्छी तरह जानते हैं कि इसे राजी रखने से ही देवी प्रसन्न होगी. यह यदि बिगड गया तो देवी का वरदान मिलने का नही इसलिये जहा वहा लागुरिया गीतो की ही झडी लगी मिलती है एक अवधारणा यह भी है कि एक पैर से लगडा होने के कारण काला भैरव देवी चामु डा के अखाडे का वीर लागुर लागुरिया कहलाया

चैत्रकृष्णा एकादशी से चैत्र शुक्ला दशमी तक करौली के केलादेवी मेले मे लागुरिया गीतो, मनौतियो की बहार देखने को मिलती है. तब राजस्थान ही नही, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, गुजरात, पजाब, हरियाणा तक के लोग इस मेले मे

उमड पडते हैं मैंने देखा औरतें अपने हाथो मे हरी हरो चूडिया पहने, माथे पर कलश घरे, हथेलियो मे मेहदी रचाये कोरे पीले पहनावे मे देवी के साथ-साथ लागुरिये की पूजा मे भी उतनी ही मगन बनी हुई हैं. पीले-पीले परिधान मे अपने खुले बालो के साथ नाचती ठुमकती रात रात भर गीतो की गम्मतें ले रही है मेले का हर पुरुष लागुरिया और हर औरत जोगणी बनी हुई है जहां औरतें—

दे दे लम्बो चौक लागुरिया बरस दिना मे आयिगे
अबके तो हम छोरा लाये परके बहुअल लायिगे
अबके तो हम बहुअल लाये परके नाती लायिगे

गाकर छकीपकी जा रही हैं वही पुरुष भी 'चरखी चलि रही वड के नीचे रस पीजा लागुरिया' जैसे गीत गाकर जोशखरोश मे मदछक हो रहे है मैं इस सारे माहौल को देख सुनकर लागुरिया के देव व और उनक लु गाडेपन मे खो जाता हू इतने मे कुछ पकी उम्र की महिलाओ मे से आवाज आती है– 'जरा ओडे-डोडे रहियो नशे मे लागुर आवेगो '

भक्त लोग इस लागुरिया को भेंट पूजा मे गाजा चढाते हैं गीतो मे वर्णन आता है कि इसके लिये दस बीघा जमीन मे गाजा बोया है. जब यह नशे मे चूर होकर आयेगा तो छेडाछेडी करेगा और खासतौर से उन्हें छेडेगा जिनके हरी-हरी चूडिया पहने को हैं, काजल टीकी दो हुई हैं उन्हीं को यह नाना नाच नचायेगा. इसलिये उन्ही को इससे ओडीडोडी रहने की जरूरत है. अपनी सर्वेक्षण यात्राओ मे मैंने इधर लक्डी के बने आदमकद राजशी लागुरिये देखे हैं जिनकी शीतला सप्तमी को घर–घर पूजा होती है

केलादेवी और उसके लागुरिये की कितनी मानता है, यह इसी से लगता है कि सन् 75 मे 2 लाख 65 हजार नक्द, 38 हजार की चादी, 3 लाख 35 हजार का 6 कीलो सोना, 10 हजार का कपडा, 1 लाख 65 हजार के 30 हजार नारियल और 75 हजार दुकानो का किराया इसके तीन वर्ष बाद क चढाने का अन्दाज लगाइये जब 10 लाख व्यक्तियो ने इस मेले मे भाग लिया और 2 लाख नारियल भेंट चढाये गये अब इस वर्ष की कल्पना आप स्वय कर लीजिये छेडादेव लागुरिये का कमाल आपको लग जायेगा

स्मारक जानवरों के

यों तो हमारा देश ही कई प्रकार की विचित्रताओं से भरा पूरा है जिसकी सानी विश्व में अन्यत्र कहीं देखने को नही मिलती, पर राजस्थान इन विचित्रताओं मे अपनी विशिष्ट विलक्षणता लिये है. सतियो के स्मारक के लिये तो यह प्रात प्रख्यात है ही पर सताओं के स्मारक भी यहां पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं. मानव हित के लिये किये गये विशिष्ट कार्यों के लिये यहा का मनुष्य किसी को आदर देने मे कभी नही चूका. गांवो के देवरो मे प्रतिष्ठित देवी-देवता और लोकजीवन मे प्रचलित कथा-आख्यान गीत-गाथा इसके साक्षी हैं कि जिसने भी यहां पर हित के लिये अपने प्राणो को उत्सर्ग कर दिया वह सदा-सदा के लिये अमर हो गया. यह बात मनुष्य के साथ ही नहीं, जानवर तक के साथ घटित हुई मिलती है.

किन्हीं जानवरो मे मानवीय किंवा देवीय गुणों को परख कर तदनुसार उनके प्रति सम्मान व्यक्त करने की भी यहा बड़ी प्राचीन परम्परा रही है. कई साडो, बदरो, गायो, कुत्तो, सांपो के ऐसे कथा-किस्से मिलेंगे जिनके सुकृत्यो के फलस्वरूप यहा के लोगो ने उनकी मृत्यु के पश्चात उनके स्मारक बनाये हैं, समाधिया खडी की हैं. बड़े-बडे भोज दिये हैं. शव-यात्राएं निकाली हैं बस्तियों का नामकरण किया है. मदिर प्रतिष्ठित किये हैं, हवन कीर्तन किये हैं. जानवरो को भोजन पर न्यौता है और उनकी अस्थियां तक गगाजी मे प्रवाहित की हैं. इससे यह स्पष्ट है कि हमारे यहा गुण-पूजा को प्रधानता सदैव दी जाती रही है चाहे वह जानवर भी क्यो न हो !

गाय को हमारे यहां माता कहा गया है. प्राचीन शास्त्रों मे भी इसके कई उल्लेख मिलते हैं. बहिन-बेटी को शादी के पश्चात गाय दी जाती है वछ बारस का तो त्यौहार ही गाय पूजन का है. गायों के साथ-साथ बछड़ो का भी हमारे यहां बडा प्यार-आदर है. दीवाली पर हीड गाई जाती है जिसमें गो-पुत्र को सर्वाधिक महत्व-गौरव दिया जाता है. दीवाली के दूसरे दिन

व-गाव बैलो की विशेष पूजा की जाती है   चौपो मे गायें भडकाई जाती हैं
ीर उन्हें लपसी चावल का भोजन कराया जाता है

जयपुर जिले के सुमेरपुर के निकटवर्ती गाव बीसलपुर मे गाय-बछडे का
डा भव्य मन्दिर बनाया गया है जिस पर चालीस हजार रुपये खर्च किये गये हैं
स मन्दिर के पीछे भी एक अजीब घटना-प्रसग जुडा हुआ है सन् 74 की
लपुलनी एकादशी को इस गाव की महिलाओं ने पाच दिवसीय उपवास किया
ौर एक गाय तथा बछडे का पूजन किया आखिरी दिन उपवास खोलने के एक
टे पहले वह गाय मृत्यु को प्राप्त हुई गाव वाला ने सोचा कि गाय बडी
ुण्य वाली थी पूर्व जन्म मे उसके द्वारा किये गये अच्छे कार्यो के फलस्वरूप उसे
हिलाओ का पूजापा मिला और उपवास के दौरान उसने शरीर छोडा अत
उसकी स्मृति को अमर रखा जाना चाहिये इसी भावना ने वहा मन्दिर का
नर्माण कराया और उसमे गाय बछडे की पत्थर की बनी प्रतिमा प्रतिष्ठित की
ाई आस पास के लोग आज भी बडे श्रद्धाभाव से मन्दिर के दर्शन करते हैं और
गाय बछडे के प्रति सम्मान के भाव ग्रहण करते हैं

गाय-बछडे के साथ साथ साड को भी बडी पूज्य भावना से देखा जाता है
मारवाड मे तो इन साडो को लोग प्रतिदिन नियमित रूप से मिठाई आदि
खिलाते भी देखे गये हैं कभी किसी दुकान मे यदि किसी सांड ने कोई चीज
खाली तो भी दुकानदार उसके प्रति बुरी भावना नही लायेगा शेखावाटी के
फतहपुर मे तो सांड का एक स्मारक बना हुआ है जिसके साथ एक शिलालेख
तक एक सेठ ने लगवाया था कहते हैं, साड की मृत्यु पर यहा के एक सेठ ने
ऐसा मृत्युभोज किया जिसम सात तरह की मिठाइया बनवाई गई और सारे नगर
को जीमने के लिये बुलाया गया उसी समय एक बडे चबूतरे पर साड की मूर्ति
स्थापित की गई और शिलालेख लगवाया गया जिसे आज भी पढा जा सकता है
उस पर अकित लेख इस प्रकार है—

श्री गणशजी ।। श्री गोपीनाथजी गुलराजजी सिंघानिया माह सुदी 13
शुक्रवार स 1930 श्रीजी सरण हुआ उमर वर्ष ञ0 का जिकालर सांड छोड्यो
जें साड को स्वर्गवास हुयो भादवा सुदी 15 गुरुवार स 1945 न जैं साड को यो
च्युतरो करायो

कई जगह सांड की मृत्यु हो जाने पर उसकी गाजे-बाजे के साथ शव यात्रा
निकाली जाती है ऐसी स्थिति मे उसे कफन ओढाकर भैंसागाडी मे लादकर

पूरे कस्बे मे घुमाया जाता है. पुष्प गुलाल से उसे सम्मान-श्रद्धा-भाव दिये जाते हैं धूप अगरबत्ती की जाती है बीकानेर के पुनास गाव के लोगों ने तो साड की मृत्यु पर उसकी समाधि बनाई और चौतरफा वृक्ष लगाये नाथद्वारा मे तो एकबार एक साड की शव यात्रा निकाल कर उसे दो बोरी नमक के साथ दफनाया. उदयपुर के श्मशानघाट मे सती की चबूतरी के पास सांड की चबूतरी बनी हुई है

कुत्तो की मृत्यु पर तो तालाब तथा छतरी तक बनाये गये हैं. जोधपुर मे *एक बणजारे ने अपने प्रिय पात्र रातिया नामक कुत्ते की यादगार मे एक नाडा* तालाब व छतरी बनाई यही इलाका जब बस्ती मे परिवर्तित हुआ तो उसका नामकरण ही रातिया तथा नाडा के सम्मिलित रूप मे 'रातानाडा' हो गया जो आज भी इसी नाम से जाना जाता है, कहा जाता है कि यहा के बालसमद उद्यान में जोधपुर के राजपरिवार के कुत्तो के कई स्मारक हैं. ये स्मारक इस परिवार के स्वामिभक्त कुत्ते टेनी, पिदगी, ब्यूटी, शामर, किवी, फार्म, काजी, चाग, मायल, मिसचीफ मेकर आदि के हैं.

जनवरी सन् 77 मे नसीराबाद के सायर ओली बाजार मे शेरसिंह नामक *कुत्ते की मृत्यु पर बैंडबाजो तथा फूल गुलाल की उछाल के साथ शवयात्रा* निकाली पूरे बारह दिन तक उसका शोक मनाया गया. बारहवें दिन नगर के तमाम कुत्तो को गुल्लो (गुलगुलों तथा रसगुलो) का भोजन कराया गया. इस दिन सुबह भजन कीर्तन हुए. एक बूकरसिंह नामक कुत्ते को शेरसिंह का उत्तराधिकारी बनाया गया. फलस्वरूप उसके पगडी बन्धाई की रस्म पूरी की गई. रात को अच्छी रोशनी की गई इस अवसर पर कुत्ते की यादगार को बनाये रखने के लिये फोटो तक खीचवाये गये. उदयपुर के गुलाबबाग मे भी कुतिया की स्मृति मे किसी महारानी की बनाई हुई छतरी है.

बन्दर को हनुमान का रूप माना जाता है इसकी मृत्यु पर तो सजीसजाई डोल निकाली जाती है जिसमे बन्दर को बैठा हुआ रखा जाता है कई जगह रात्रि जागरण तथा हवन आदि किये जाते हैं. समाधि देने पर चबूतरा बनाया जाता है और दाह सस्कार पर चन्दन नारियल दिये जाते हैं रेवाडी के चौक बाजार मे हनुमानजी की मूर्ति के चरणो मे शरीर छोडने वाले बन्दर को जगनगेट के पास वाली ठठेरो की बगीची मे समाधिस्थ किया गया. कुचेरा मे तो एक बन्दर की विद्युत करट से मृत्यु होने पर उसकी डोली निकाली गई कहते हैं कि मरते वक्त उसके मुह से 'राम' शब्द सुनाई दिया. इस बन्दर को यहा से लीराई

ले जाया गया और किसी तरह उसकी यादगार बनाये रखने के लिये एक समिति का निर्माण किया गया जिसने करन्ट बालाजी के नाम से एक मन्दिर का निर्माण किया.

सापो की मृत्यु पर भी इसी तरह के विचित्र क्रियाकर्म किये जाते हैं जैसलमेर मे तो साप को कफन देकर समाधिस्थ करते हैं. भवानीमडी के निवासी रामप्रताप तेली ने तो अपने कुए पर रह रहे सर्पराज की मृत्यु होने पर उसे चदन का दाग दिया और विधिवत् क्रियाकर्म करने के उपरान्त उसके अवशेष लेकर हरिद्वार की यात्रा की और गगाजी मे उसकी अस्थियां प्रवाहित की

साधारण जनता मे ही समाधियों का प्रचलन नही रहा, राजा-महाराजाओं ने भी अपने प्रिय जानवरो की यादगार मे स्मारको का निर्माण कराया.

मुगल बादशाह अकबर को एक हथिनी बहुत प्रिय थी जिस पर बैठकर वे शिकार को जाया करते थे. इस हथिनी ने कई बार बादशाह की रक्षा की. जब वह मर गई तो बदशाह ने फतहपुर सीकरी मे इसकी स्मृति मे एक मीनार बनवाई जो हिरण मीनार के नाम से प्रसिद्ध है.

इसी प्रकार बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह के स्मारक के पास मोरो का स्मारक भी अपने मे बडी दिलचस्प घटना है. कहते हैं जब महाराजा अनूपसिंह की मृत्यु के बाद उनका दाहसस्कार किया जारहा था तो पास ही के एक वृक्ष से एक-एक कर कई मोर कूद कर चिता मे जल मरे. लोग जब इन मोरो को बचाने लगे तो कहते हैं चिता से आवाज गूजी 'इन्हे मत बचाओ, जलने दो. ये पिछले जन्म के राज परिवार के सदस्य हैं. जलने से ही इनकी सद्गति होगी.' ऐसी स्थिति मे उन मोरो का भी वहा स्मारक बनवा दिया गया.

तमिलनाड के रामनाथपुरम जिले की एक पहाडी के शिखर पर एक हाथी के दात का स्मारक बना हुआ है. कहते हैं पहाडी पर बने शिव मदिर मे प्रति दिन हाथी आया करता था जिसके एक ही दात था. जब वह मर गया तो शिव भक्तो ने उसका एक स्मारक बनाकर उस दात की भी वही स्थापना करदी.

यह तो हमारे देश की बात हुई पर विदेशो मे भी ऐसे स्मारक देखने को मिलते हैं. अमेरिका के एक गाव मे एक बार पकी फसल पर भयानक टिड्डी दल उमड पडा. लोगबाग बहुत परेशान हुए उसी समय देवयोग से चीलो का

समूह आ पड़ा जिसने टिड्डीदल का खातमा कर दिया. इस पर गांववालों ने चीलों का अहसान माना और एक स्मारक बना दिया. यह बात कोई 125 वर्ष पुरानी कही जाती है

इसी प्रकार रोम मे एकबार रात्रि को टाइवर नदी में बाढ आगई. इसको सूचना मुर्गों ने बांग लगा कर दी. लोग जग गये और अपना कीमती सामान लेकर सुरक्षित हो गये. रोमवासी मुर्गों की इस करामात से बडे प्रभावित हुए और उनकी स्मृति मे नदी पर एक पुल बनवा दिया.

जानवरों के प्रति मनुष्य का यह प्रेम और ममत्व यह सिद्ध करता है कि गुणों की पूजा का प्रत्येक प्राणी अधिकारी है चाहे वह जानवर हो क्यो न हो. महाराणा प्रताप का प्यारा साथी चेटक भी प्रताप ही की तरह अमर हो गया हल्दीघाटी के मैदान मे बनी उसकी समाधि प्रताप के प्रति उसकी स्वामिभक्ति और शौर्य गौरव के कई इतिहास पृष्ठ खोल देती है. सच तो यह है कि पशुओ के बिना मनुष्य अपना जीवन सूना मानता है. मनुष्य को यदि कोई मजबूरी नहीं हो तो कोई मनुष्य ऐसा नही मिलेगा जो अपने साथ कोई न कोई जानवर नहीं रखना चाहेगा.

एक मेला दिव्यात्माओं का

सन् 82 मे दीवाली की घनी अधेरी भाभ्भू करती डरावनी रात मे लोकदेवता कल्लाजी ने अपने सेवक सरजुदासजी के शरीर में अवतरित हो मुझे चित्तौड के किले पर लगने वाला भूतो का मेला दिखाया तब मैंने अपने को अहोभाग्यशाली माना कि मैं पहला जीवधारी था जिसने उस अलौकिक अद्भुत एव अकल्पनीय मेले को अपनी आंखों से देखा

इस बार सन् 84 को बैकुठ चतुर्दशी को कल्लाजी के दर्शन किये तो उन्होंने हुकम दिया कि आज ही चित्तौड चलना है वहा कल की देव दीवाली को दिव्यात्माओ का लगनेवाला मेला दिखायेंगे लिहाजा हमने उदयपुर से एक टैक्सी ले ली मैं, डॉ. सुधा गुप्ता और मेरा छोटा बच्चा तुक्तक सरजुदासजी के साथ निकल पडे. रात को दस बजे हम चित्तौड पहुंच गये वहा बिडला धर्मशाला मे हमने अपना पडाव डाला जहा सभी हमसे परिचित थे.

करीब साढा दस बजे जब हम अपना सामान तरतीववार जमा कर कमरे मे बैठे ही थे कि अचानक सेनापति मानसिहजी पधारे और अपनी सधत वाणी में बोले- देखो बेटा यह चित्तौड है. आज नदी समुद्र मे मिलना चाहती है बेटा. हम समझ गये, ससार की नजर ठीक नहीं है दुनिया के बेटो, विश्वम्भर आपका भला करे. जय विश्वम्भर. सारे राजाओ ने हमे गुनहगार ठहराया है बेटो. हम तो गुनहगार हैं. जय विश्वम्भर'.

यह कहकर मानसिहजी चले गये. ये मानसिहजी सेनानायक कल्लाजी के सेनापति हैं. मेरा जब-जब भी कल्लाजी के साथ बाहर शोधयात्राओं मे जाना हुआ, कल्लाजी के आदेश से मानसिहजी सदा हमारे साथ रहे. मीरा सम्बन्धी मेडता की शोधयात्रा मे भी पूरे सप्ताह भर मानसिहजी अपने कुछ विशिष्ट अदृश्य सैनिकों के साथ हमारे साथ रहे जब मानसिहजी सरजुदासजी को आते हैं तब उनका आसन, उनका साफा और उनका अमल का कटोरा सभी कुछ अलग होता है. यहां तक कि तमाखु पीने की चिलम भी जुदा-जुदा होती है.

हमें पहले से यह मालूम था इसलिये हमने इस ढग से सारी व्यवस्था कर रखी थी

हम बातचीत मे मगन हैं इतने मे मेरा ध्यान अपने हाथ पर बधी घडी की ओर चला जाता है सुधाजी पूछ बैठती हैं– कितनी बजा रहे हो क्या अभी से नीद सताने लग गई है ? अभी तो तुक्तक भी जग रहा है अपनी बातो मे सबसे अधिक रस ही यही ले रहा है ' मैंने कहा– एक एक ग्यारह बजी है, सोने की बात ही कहा बाहर कितनी अच्छी चादनी है, अभी तो थोडा घूमेगे. कुछ हवाखोरी करेंगे तब जाकर सोयेंगे '

मैंने अपनी बात पूरी की ही कि उसी कमरे के एक कोने मे लगे खाट पर सरजुदासजी जिन्हे सब बापूजी कहते हैं जाकर सो जाते हैं और आदेश निदेश की भाषा मे बोलना शुरु कर देते हैं

हमे समझने मे तनिक भी देरी नहीं लगती है कि कल्लाजी बावजी का पधारना हो गया है जो चुपचाप अपने सनिकों को यहा की व्यवस्था बाबत आदेश निदेश दे रहे हैं हमे कल्लाजी की बात तो स्पष्ट सुनाई दे रही है पर सैनिको मे से कोई आवाज या कि उनकी भनक तक नही सुनाई पड रही है मैं चुपचाप अपनी डायरी मे लिखता चलता हू—

— छोगमलजी ने के दे के वनै जे'यांरा म दर कनै ऊबा राखे जो आवे वनै राम कोजो जवार कीजो

— परवतसिहजी कठे ? हूरजपोल कूण है ? दखण री दिशा मे कूण कूण है ? गोरधनसिहजी और और हा–हां–कालूसिहजी कठे ? मद मे मेल्या कालूसिहजी ने ? हा–हा–ठीक है–ठीक है वाने कै दीजे के सब त्यार उभारेवे

— कासीबाई ने कीजे के बांरो ध्यान रैवे हां भलो रतनसिहजी रे म्हेला री तरफ कूण है ? वठ 6 जणा कई करे रे ? ठीक भला हा तो वाने कै दीजे के मीणा नै वठई रोक्या राखे 6 जणा ने राख्या जो सोको कीदो

— मानसिहजी भेज्या है वारो बराबर देखणो वेइर्‌यो है कठे गाजो पीने पड्‌यार्‌या तो कूद्‌लो मानसिहजी फरमायो ! हा भला फाटक पर उबा रो

— बक्तावरसिंहजी ने कीजे के कह्यो आयो है. जनाना बराजे वाने जो चावे वारो ध्यान राखे. कासी ने पोसाका मे मेली तो वठे कुण है ? सिंगारी. सिंगारी ने पोसाका मे मेलो. कासी जूनी है.

— बागसिंहजी सा रे वठे कुण है ? अमरसिंहजी श्रो ठीक है. हुकमतसिंहजी कठे ? हुकमतसिंहजी ने म्हारे कनै भेज तो.

— श्राश्रो चोवाणां जैं श्रासापुराजी. कई है. सात दन सूं पधारिया हो नी. सभी त्यार्‌या. भलो–हा–हा. निज म्हेला मे कुण है ? हा–हा–हां– अतरवास मे कुण है ? ठीक है बन्दोवस्त सब करा देवो. जनाना पधारे वाने पाछो डोड्‌या सू पूगता करीजो.

— जैं श्रासापुराजी. श्राप श्रापरे कामे लागो. जैं माताजो म्हारे कई नी चावे रे–न–न–न–म्हातो भला ऊई ठीक हा रे. नायकजी श्राया है ? वानै म्हारो राम कीजो रे बूडा जोव है. किण दरवाजे उबा हो ? ठीक है–ठीक है. बस श्राज री रात ने काल री रात है. श्रोर कई है ? कोई पधारणो चावे तो····

— नायकजी श्राप तो भुवा री घणी रक्षा करी. श्रापने कूंकर भूल सकां नायकजी थाणी पागड्‌याई फाटगो भला. हा म्हू श्ररज करदेऊ. जैं माताजी री. पधारजो.

— रामदेवजी ! पीरजी पधार्‌या ! कद खबर श्राई ? कुण श्रायो ? भाटीजी श्राया ! श्रो हो भलो भाग भला चित्तौड़ रो काले पधारसी ! भला-भला-भला. हां तो वानै जैं गुरु म्हाराज री कीजो नैं श्ररज करजो के म्हा दोई हाथ जोड़ी ने श्ररज करा. हां जरणी तो श्रन्तर मे भी ने ऊपरे भी बराजग्या है. थांनै श्ररज करदीजो के गुरु म्हाराज पधारे तो वांनै भी लेता पधारे.

श्रापरे सब त्यारो है. श्रोर कई मांसवास री त्यारी वे तो मानसिंहजी ने के दीजो. नोसादखांजी रे वठे थांणी पगत लगा लीजो कोई मद पीयोड़ो श्रावे तो थांनै तक्लीफ पड़े. कोई बाया श्राई वे तो कासी ने के भीजो.

— बडुलसारो ! भला श्रा नारी श्रठे कां श्राई है ? घणी ने बांबी मे पाछी भेजदो. श्रमंसिहजी ने कै दीजो के नारी पर जुलम नी करे बलिये

क्यो है वानै छूटा करो अरे नारी कई करे ? नारी म्हारी मावड़ है वा कोई भी जाति री वो

— सलाम-सलाम-सलाम और कई तकलीफ वे तो म्हनै कीजो हो मालक तो दूजा है म्हूतो ऊई थांण भेरो बैठ्यो हू

— जै रूघनाथ री मेताबसिहजी थे तो भला रजपूत व्हिया भला कई केवा थाने. अरे भला पण माथे रजपूती राखो खाली नाम मेताबसिहजो राखियो मेताबकुवर राखियो व्हेतो तो कई व्हेतो ? पेलां जा नै आया हो जो पतो पडियो नी नरक मे रेवण रो कित्तो मजो आयो ? कठे नपुसका री जमात भेरी करी है अरे ना भला मेताबसिहजी बूटाकूटी ना करो ता बूदबूद तो करो

— पूरणसिहजी ने भेजो तो म्हू आपरो काम करी दू आमो माया पूरणजी जै कालीजी. मेताबसिहजी ने डोडया मे मेलो रे वाने तो नारी रा गाबा पेरादो अबे आयोड़ा जीव ने कठे काडो ?

— एक बात और केईदू के डोड्या रे दरवाजे है वानै के दीजा के जनाना पधारे वारे मान मे कोई कमी नी रासे जै कालीजो

लगभग साढा ग्यारह बज रहे हैं हमने जान लिया कि मेले की सारी व्यवस्था का जिम्मा कल्लाजी का है इसीलिए वे सारी जानकारी ले रहे हैं और फटाफट आवश्यक निर्देश दे रहे हैं. उनमे व्यवस्था सम्बन्धी कितना अनुभव, पैनी दृष्टि और प्रशासनिक क्षमता है और नारियो के प्रति कितना मान-सम्मान है अपने सैनिको के साथ उनकी कितनी आत्मीयता और पारिवारिकता है. वे किसी का दिल नही दुखाते हैं और रग व्यग्य मे कैसी चुटकी छोडते हैं हर छोटी से छोटी बात का उन्ह कितना ध्यान है व स्वय कितने मर्यादित हैं और दूसरो की मान मर्यादा का उन्ह कितना खयाल है

यह मेला दिव्य आत्माओ का है. जो आत्माए सद्गति मे हैं वे सब इस मेले मे सम्मिलित होती है जितने भी अच्छे सत, सतियां महापुरुष हुए हैं वे सब आते हैं महाराणा मोकल के समय से इस मेले का प्रारम्भ हुआ तबसे अब तक लगता रहा है इस मेल म जगत्जननी जोगमाया सबको काम की जिम्मेदारी सौपती हैं और पिछले दिये गये काम का लेखा जोखा करती है ऐसे मेल और

भी लगते हैं कहीं एकादशी को, कहीं पूर्णिमा को चित्तौड के इस मेले की बडी भव्य तैयारी करनी पडती है मुख्य दीवाली पर जो भूतों का मेला लगता है उसकी तैयारी तो दो ही दिन मे करली जाती है पर इस मेले की तैयारी में पूरे नौ दिन लगते हैं

रामदेवजी का इस मेले मे पहलोवार पधारना हुआ मारवाड के मुख्य सोलह उमरावों में रामदेवजी का बिराजना होता है. जो गादी ढलती है उस पर पहली पंक्ति सोलह उमरावो की लगती है उसके पीछे बत्तीसो की. फिर साहूकारो की पंक्ति फिर रावराजा ग्रादि बैठते हैं रावराजा पासवान्यो के लडके होते थे रखैत के बालक रावराजा कहलाते थे राजा के साथ उसके बावड (पिता) का नाम चलता जबकि रावराजा के साथ उसकी मावड (माता) का नाम चलता

धर्मशाला के ठीक सामने सडक के परले किनारे भामाशाह की हवेली है हमने हवेली के ऊपरी हिस्से मे काफी देर तक दिव्यात्माग्रों का निरन्तर ग्राना जाना देखा लग रहा था जैसे इस पूरी हवेली मे कोई महा महोत्सव हो रहा है जिससे निरन्तर लोगो का इधर-उधर ग्रावागमन हो रहा है. ग्रादमकद परछाइया हम ग्रपनी ग्राखें फाड फाड कर देख रहे हैं. यह नहीं कि ये परछाइयां स्थिर हैं सब ग्रपने-ग्रपने कार्य मे व्यस्त हैं दिन को खण्डहर लगने वाली हवेली हमे कहीं भी विरान शून्य नहीं लग रही थी कभी-कभी प्रकाश भी हमे दिखाई देता

इसी दौरान हम बाहर सडक पर भी निकले हमने देखा कि भामाशाह की हवेली से कुम्भा महल तक के उस पूरे फैले ग्राकाश मे निरन्तर कोई न कोई बिम्ब ग्राता दिखाई दे रहा है इनमे कभी कोई हल्की रोशनी होती कभी तेज. बहुत तेज कभी पीली कभी नीली कभी लाल कभी एकदम तेजी वाली तो कभी लरलपाती एक ग्रजीब सुहावना नजारा हम देखते रहे. इतनी सारी दिखती, ग्रलोप होती, लम्बे समय तक निरन्तर ग्राती दिखाई देती रोशनियो से हमने ग्रनुमान लगा लिया कि कल के मेले मे कितनी दिव्यात्माए जुडेंगी कल्लाजी ने बताया कि सबके सब महल ग्रौर हवेलियां दिव्यात्माग्रों के ठहरने के लिए व्यवस्थित कर सजा दी गई हैं. सबको ठहरने की जगह तय है. सब जगह उनकी सेवा के लिए नौकर-चाकर सैनिक तैनात हैं लगभग एक बजे हमने धर्मशाला में प्रवेश किया देखा तो कुत्ते इधर से उधर दौड रहे हैं ग्रौर ऊचे ग्राकाश की ग्रोर ग्रपना मुह किये भौंक रहे हैं. सही भी है कि कुत्ता को यह सब

प्रत्यक्ष दिखाई पडता है तुक्कक ने मजाक छेडी, कहा कि ग्राज के दिन तो कुत्ता होना भी बुरा नहीं था. हम सब हस पडे और अपने कमरे मे सोने को चल पडे.

दूसरे दिन कार्तिक पूर्णिमा का पूरा दिन हमारे लिए खाली था दिव्यात्माओ का मेला तो रात ही को देखना था अत हम सुबह ही वहा के दर्शनीय मुख्य-प्रमुख स्थानों को देखने निकल पडे. सबसे पहले हमने भामाशाह की हवेली देखी हवेली के सबसे ऊपरी कक्ष की छत के भीतर बनी पुतालया देखी जो तब भीतर से पूरी हीरे जवाहरात से ठस भरी हुई थी पर अब जगह-जगह से टूटी फूटी लगी इनसे पता चलता है कि भामाशाह कितने दौलतवान थे और कहा कहा उनका धन नहीं छिपा रहता था पूरे खण्डहर पडे प्रसिद्ध मोतीबाजार के नीचे के तलघर देखे ये तलघर पांच पांच सात सात मजिल के हैं. एक तलघर मे हमने देखा दीवाल में से कोई धन-कलश निकाल ले गया है जिसकी जगह सबकुछ साफ बता रही है इसी के पास नाग की बडी गहरी मोटी बावी देखी जिससे लगा कि कितना मोटा नाग यहा धन की रक्षा के लिए रहा होगा

विशाल फैला कुम्भा महल देखा उसका तोशाखाना देखा यह नीचे नौ मजिला है जिसमे हाथी घोडो के जेवर रहते थे यहा एक ओर नीचे भोजराज की माता करमावती का जौहर-स्थल देखा जौहर की राख आज भी सबकुछ बता रही है चाहिये कोई देखने समझने वाला भोज के मीरा के महल देखें जहा शादी के बाद सर्वप्रथम इन्ही महलो मे इनका वास रहा. सौलह बत्तीसो का बैठकखाना देखा इसके चारो ओर चीकें पड जाती जहां ऊपर जनाना सरदार बिराजता सारी बातचीत रानिया भी सुनती कोई निर्णय होता और उन्हें जचता नहीं तो दासी के माध्यम से वे अपनी असहमति भिजवाती उनके निर्णय को सभी मान देते नारियो की तब बडी महत्वपूर्ण भूमिका रहती थी

इसी महल मे कभी 141 हाथी पलते थे सुबह होते ही ये हाथी अपनी सूडो से राणाजी को सलामी देते घोडे ऐसे थे कि जरासी आहट से धरती धूजा देते गज गोले झेलते उनकी दृष्टि ऐसी होती कि दुश्मनो की ताकत पहले भांप लेते और चिघाडकर मालिक को सकेत कर देते. जवाहरबाई का निवास महल देखा अपने व्यक्तित्व से यह इतनी रौबदार थी कि अच्छे-अच्छे रजपूतो की मूछें नीची हो जाती कासीबाई का दाहस्थल देखा चबूतरे पर पाच लक्कडों में

जलाकर उसे विशिष्ट मान दिया. यह बडी समझदार और खैरख्वाह दासी थी. तीन महाराणाओ की धाय-माय के रूप मे इसने बडी सेवा की

जोहर कुण्ड देखा सौलह हजार नारियो ने एक साथ इसमे जौहर किया था लडाई मे कई वीर मारे गये इधर खाद्य सामग्री नही रही. जितने भी वृष पौधे झाडिया थीं उनके पत्ते खाने की सामग्री बने यहा तक कि हरी पतली डालिया तक खाने के काम मे ली गई वृक्ष केवल ठूठ के रूप मे रह गये तब क्या होता ! जौहर के अलावा कोई चारा नही था तय किया गया कि नारियो का तन चला जाये अच्छा है मगर शील न जाये कोई नारी किसी दुश्मन के हाथ न पड सके इसीलिए जौहर करना पडा वृक्षो के जितने भी ठूठ बचे रहे उन सबको काट काट कर कुण्ड मे डाला और चिता तैयार की.

जौहर की यह दास्तान सुनाते सुनाते स्वय कल्लाजी फफक पडे. हमारे सम्मुख भी सारा वातावरण आसुओ से भीगा टपक टपक धार दे गया कल्लाजी बोले-तब कोई नारी मरना नही चाहती थी पकड पकड कर एक-एक को चिता मे झोकते रहे इन हाथो ने अनगिनत नारिया अग्नि को भेंट की थी वे चिल्लाती रहती कि हम अपने पीहर भेज दो, मत मारो मगर इसके अलावा कोई चारा ही नही था. बाहर चारो ओर से अकबर की सेना ने घेरा डाल रखा था. उससे बचने का कोई रास्ता नहीं बचा था

जोहर कुण्ड के पास ही ऊपर के मैदान मे दासियो ने एक दूसरे के कटार भोककर कटार जौहर किया. इन दासियो की चिता कहा से होती ! इतनी लकडियां कहां थीं. लगभग 20 हजार दासियो का यहा इतना ऊचा ढेर लग गया कि अकबर की मोर मगरी भी इसक सामने पानी भरने लग गई अकबर को बता दिया कि उसकी मोर मगरी लाशो की इस मगरी के सामने कितनी तुच्छ नाचीज है यहा तो दासियो तक ने आपस में कटार खाकर एक के ऊपर एक लाशें खडी कर लाशों की ही मोर मगरी खडी कर दी सारे मुसल्ले इसे देखकर दग चकित हो गये.

जयमलजी की हवेली देखी. सारे युद्ध का सचालन निर्देशन इन्हीं के जिम्मे था बलि इतने कि दस हाथियों को एक साथ पछाड दें. इसीलिए दुश्मनों की पहली मार ही इन पर पडती. अकबर की मोटी दुश्मनी ही जयमलजी से थी इनकी हवेली का डबल परकोटा, ऐसी बनावट वाली हवेली कि हर समय चारों ओर इनकी निगाह रहती और दुश्मनों को देखते रहते और तदनुसार किले पर

ग्रावश्यक निर्देश देते रहते. हवेली के नीचे सात हाथ की चौडाई लिये रक्षा दीवाल. बहादुर इतने थे कि एक समय जब ये रक्षा दीवाल पर खडे थे कि दुश्मन ने तोप चला दी जिससे दीवाल के बड़े-बडे पत्थरो सहित जयमलजी ऊचे उडे ग्रौर उडकर ठेठ ऊपर वृक्ष के वहा ग्रा गिरे, मगर कहीं धूलि धूसरित नही हुए ग्रौर खडे-खडे ऐसे निर्देश देते रहे जैसे कोई घटना हो नही घटी हो. हवेली के ग्रागे पत्थर की बनी ऊचो मोटी लाट देखी जिस पर से रग रगीले दीपको का प्रकाश देकर यह सकेत दिया जाता कि दुश्मन किधर हैं ग्रौर किधर कैसी क्या तैयारी करनी है.

इस हवेली के पास ही कल्लाजी का निवास स्थल देखा जहां ग्राज मकान होने का कोई चिन्ह नहीं बचा है लडाई मे दुश्मन कल्लाजो का लोहा मान चुके थे इसलिये इन्हे कही जिंदा नहीं देखना चाहते थे जब चित्तौड पर कोई नहीं बचा तो दुश्मनों ने ऊपर ग्राकर कल्लाजी के निवास को चारो ग्रोर से घेर लिया हिम्मत किसी की नही थी कि कोई इनके निवास को भीतर जाकर देख ग्राये. इसलिये चारो ग्रोर से तोपें दाग दीं ताकि मकान सहित कल्लाजी की बोटि-बोटि उड जाय. यही हुग्रा कल्लाजी तो पहले ही चित्तौड छोड चुके थे तोपो के कारण पत्थर-पत्थर तक उड़ गया. कोई निशान नही बचा कि यहा कोई रहता था.

पत्ता महल की बनावट ग्रौर ही विचित्र है. दुश्मनों का पता लगाने के लिए ऐसे छिद्र बने हैं कि कोई बाहर से देख नही पाये ग्रौर भीतर वाला सारी व्यूह रचना करले छिपने छिपाने के ऐसे गुप्त स्थान कि पूरा खात्मो लगने वाला महल ग्रपनी दीवालो मे इतनो को कैद करदे कि उन्ही से महल पूरा भर जाये ग्रौर दुश्मनो का भीतर ही भीतर खात्मा करदे. महल की मंजिल ऐसी बीच से कटी हुई कि ऊपर कोई चढ नही सकता पत्ता भी कम योद्धा नहीं थे जब सारे वीर काम ग्रागये तब पत्ताजी भी बहादुरों की मौत मरना चाहते थे मुसलमानो के हाथो मरने की बजाय ग्रपने वफादार गज के हाथो मरना उन्होने ठीक समझा इसीलिए सारे हथियार डाल दिये ग्रौर ग्रपने विश्वस्त हाथी के सम्मुख जाकर मृत्यु मागी तब हाथी ने ग्रपने पाव के नीचे उनका एक पाव देकर दूसरे पांव को सूड से चीरकर काम तमाम कर दिया.

हर महल मे नारी खण्ड, दौलत खण्ड, बैठक खण्ड, दासी खण्ड तथा छिपने के खण्ड बने हुए हैं. युद्ध मे योद्धा ही नहीं, बेताल, वीर ग्रौर शक्तिया भी काम

करती अकेले पत्ता ही नही, उनकी मा, पत्नी और बहिन ने भी युद्ध मे बडी वीरता दिखाई.

यहां से कालिकाजी के दर्शन कर पद्मिनी महल देखते हुए कीर्तिस्तम्भ देखने चले गये. यह कीर्तिस्तम्भ बनवाया हमीर ने पर इसके मूल मे शाह छोगमलजी थे जिन्होने सारा धन लगाया. छोगमलजी बनिये थे जिन्होने अपने जीवन मे कभी सब्जी तक नही काटी पर वक्त आने पर अपना पराक्रम दिखाने मे कोई कसर बाकी नहीं रखी पास के बने जैन मन्दिर मे एक समय जब मुसलमानो ने आक्रमण कर दिया तो इन्ही छोगमलजी ने अपने हाथ मे तलवार धारण कर तीन सौ मुसलमानो का पत्ता साफ कर दिया.

कीर्तिस्तम्भ से हम लोग लाखोटिया बारी पहुचे यहां हमे पत्थर का बना रूपसिहजी का सिर मिला जिसकी सिन्दूर मालीपना लगाकर कल्लाजी ने स्थापना करदी. यह स्थापना उसी जगह की जिस जगह तब जयमलजी ने नागणी माता की स्थापना की थी. ये रूपसिहजी जयमलजी के बडे लडके थे. ये लडने में जितने बहादुर थे, बुद्धि मे भी उतने ही तीव्र थे लडते-लडते जब लोहे के गोले समाप्त हो गये तब इन्होने किले पर ही उपलब्ध एक विशिष्ट पत्थर के गोले बनवाये और तोपो मे दाग दाग कर दुश्मनो का मुकाबला किया. ये सबामणी गोले थे जो आज भी चित्तौड के किले पर यत्र तत्र देखने को मिलते हैं. इनके सिर की स्थापना करते हुए कल्लाजी ने बताया कि रूपसिहजी का जितना बडा सिर था उतनी ही बडी आज पूर्णिमा है बल्कि पूर्णिमा से भी बडा उनका सिर था. बहादुर तो इतने थे कि आंतें बाहर निकल आई तब भी जब तक सास रहा, बन्दूक नहीं छोडी, लडते ही रहे अन्त मे जब गोला आ लगा तब इनका सिर नीचे जा गिरा. लगभग 327 बरस तक इधर-उधर ठोकरें खाने के बाद आज यह सिर प्रतिस्थापित हुआ है हमने नारियल की, अगरबत्ती की अच्छी धूप की और उस सारे स्थान को भी अच्छी तरह साफ किया.

लाखोटिया बारी से हम रतनसिहजी के महलो की ओर चले. सध्या का समय हो गया था यहीं महल के ऊपरी छोर पर करणीजी और उनके पति दीपाजी के रूप मे दो सपेद चीलों के दर्शन हुए इस रूप में अकेली करणीजी के दर्शन तो हमें मेडता के दूदाजी के महल-खण्डहरो में भी हुए थे पर दीपाजी और करणीजी के एक साथ दर्शन तो आज ही हुए. बहुत देर तक हम लोग इन्हे देखते रहे दोनों चीलें आपस में काफी देर तक चोंच से चोंच मिलाती बतियाती रहीं इनके दर्शन से हमने अपने को बहुत-बहुत भाग्यशाली माना.

पशु दाग – गोड़लिया

हेडाऊमेरी रम्मतो तथा सती स्मारको के अध्ययन के सिलसिले में जब बीकानेर जाना हुआ तो भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान मे श्री मूलचंद 'प्राणेश' ने कहा कि मेहदी, साभी, मांडणा, गूदना, थापा आदि चित्रावणो के अध्ययन के साथ-साथ पशुओ मे प्रचलित विविध दागों पर भी मुझे कुछ काम करना चाहिये. पशुओ को दागने के अलग-अलग तरीके हैं ये दाग पशुओ की पहचान के लिये लगाये जाते हैं चोरी गये पशुओ की शिनाख्त के अतिरिक्त सामान्य पहचान के लिये भी उन्हें दागा जाता है. दागने की यह क्रिया 'अटेरना' तथा के निशान 'गोडलिया' कहलाते हैं पशुओ मे आई बीमारी को दूर करने के लिये भी कई तरह के दागो का प्रचलन रहा है

श्री प्राणेश ने मुझे यह भी बताया कि दागने की यह परम्परा जानवरों मे ही प्रचलित रही हो ऐसी बात नहीं है बाबा रामदेव के समय मे हाथ का दाग दिया जाता था तब लोग द्वारिका जाकर अपने हाथो पर शख चक्र गदा और पद्म का दाग लगवाते थे. इनमें शख व चक्र बाहुओं मे तथा गदा व पद्म कलाइयो मे दागा जाता था.

दूसरी बार जब बीकानेर जाना हुआ तो तय कर लिया था कि इस बार पशुओ मे प्रचलित विविध दागो पर अच्छी जानकारी प्राप्त करू गा. फलत मैं वही रह रहे अपने लेखक-समधी श्री उदय नागोरी के साथ हो लिया उन्होंने मुझे बीकानेर के कोटगेट, गूजरो का मोहल्ला, जस्सूसर गेट, चौखू टी, गजनेर रोड, नया शहर, भूट्टो का बास, साकर रोड, दाऊजी मार्ग आदि मोहल्लो-मार्गों तथा बीकानेर के पास के उदयरामसर, गगासर, भीनासर, नोखा, पलाना, देशनोक, करमीसर, लालगढ आदि क्षेत्रो का भ्रमण कराया. कई लोगों से पूछताछ की तो मालूम हुआ कि पशुओ के ये चिन्ह कही जाति विशेष के, कहीं अचल विशेष के, कही विशिष्ट राजघराने के प्रतीक हैं तो कुछ विशिष्ट चिन्ह पशुओं मे पाई जाने वाली बीमारी को शमन करने के द्योतक हैं.

इन दागों मे बीमारी के दाग तथा किसी विशिष्ट पहचान और प्रतीती के दागो की अपनी विशिष्ट चित्रवनी रही है. इनमे प्रकृति के विविध उपादान, धार्मिक आस्थाओ के प्रतीक चिन्ह, मानवाकृतिया, विविध कृषि उपकरण तथा दैनिक आवश्यकता की वस्तुओ के विभिन्न आकारो का समावेश मिलता है कुछ लोग इन मोडलियो के मूल मे ब्राह्मी लिपि के अक्षरो की परिकल्पना करते हैं हमने अपनी अध्ययन यात्रा मे गायो, ऊटो तथा बैलो-साडो मे प्रचलित दागो का ही विशेष अध्ययन-सधान किया है ये दाग लोहे के सरिये, मिट्टी की ढकणी, लोहे-पीतल के अक्षर अथवा किसी वृक्ष विशेष की डाली को गर्म कर दिये जाते हैं

पशुओं को दागने के ये अंकन विविध रूपो मे सारे राजस्थान मे प्रचलित रहे हैं मेवाड क्षेत्र मे क्या पशु और क्या मनुष्य, सभी को दागने की क्रिया 'डाम' के रूप मे प्रचलित है बीमारी की हालत मे तो डाम ही एकमात्र रामबाण इलाज था गावो में तो आज भी डाम देने की प्रथा प्रचलित है. इधर तो एक कहावत भी सुनने को मिलती है– 'कै तो राखै राम नै कै राखै डाम' (या तो राम ही जीवित रख सकता है या फिर डाम). दागने, डाम देने का भी अपने आप मे पूरा शास्त्र और विज्ञान है. कहा किस बीमारी के लिये किसका किस नस विशेष या स्थान विशेष पर दाग लगाने से बीमार स्वस्थ हो जाता है, इसके कई जानकार लोग अब भी गांवो मे इलाज करते हैं इन दागो के अलग-अलग नाम उपकरण रग ढग हैं जैसे लुरकी खासी मे ढाक के पत्ते की बीटणी का जवार के दाने जैसा जपेट्या लगाया जाता है तो सिरदर्द मे भौहो के मुख पर सुई का चपकट्या दमाया जाता है.

बालोतरा के पशु मेले में पशुपालको ने बताया कि राजपूतो की जातियो के अनुसार ये लिंग (चिन्ह) बने. बैलो के दागो मे देरासर गाव का पागड़ी, हमीराणा सोढो का दाग, राजड राजपूतो का कुण्डल, रडाणा गाव के रबावडिया सरदारों का परलोटियो, सोकरू गाव के चारणो का माछला, भदेसर गाव का एक और प्रकार का माछला, सोढ़ा राजपूतो का कजावो, राठौडो का दतालियो, भाटियों का हयल, धारोई गाव की कोटड्यां का त्रिशूल जैसे दाग प्रचलन मे हैं. ऊटों मे केलडण राजपूतों का मची तथा अन्य दागों मे अटेरणी व सामणी जैसे लिंग देखने को मिले.

इस मेले मे ऊंटो की गर्दन के दोनो ओर काले गोल धब्बे किये मिले. पूछने पर पता चला कि ऊटो के केश लिजाब किये हुए हैं. इससे ऊंट सुन्दर लगते हैं.

ऐसी ही सुन्दरता उनकी पीठ पर की विविध भाति की डिजाइनो मे मिली. पीठ पर के केश कतर कर फूल, सुग्रा, मोर, पल्ला जैसी भातें उकेर रखी थी.

मारवाड की ग्रोर हमे जो चिन्ह मिले उनमे गायो मे प्रचलित चौफूलिया, पेट की बीमारी का ध्वज, गर्दन की बीमारी का तिराहा, शक्ति का प्रतीक त्रिशूल, गूजरो का चिन्ह खेंग, राजासर व वेरा गाव का चाखडो, लूणकरणसर तहसील का जेडी कुहाडा, गूजरो का कहीं लोरी, चौराहे का प्रतीक चौफूलिया, ऊट-पग, सूरतगढ का दीपक चिन्ह मिले.

ऊंट चिन्हो मे प्रसिद्ध गगारिसाला का अग्रेजी का जो नया पुट्ठे पर गाठ का, गले तथा कमर के रोग के चिन्ह एव शक्ति शिव तथा आकाश के विविध खेंग मिले. साडो-बैलो मे प्रचलित कमर के दर्द का खजूर-छाया, गले की गाठ का सौलह बिंदी, सुनारो का त्रिशूल, मुकीम बोथरो का गठचोपड़, उदयरामसर का त्रिशूल तिया तथा गगाशहर का बिंदी मे बिंदी निशान मिले.

श्री प्राणेश ने मुझे बताया कि पशुग्रो को बुचबुच कह कर ठहराने का सकेत बहुत पुराना है. इसी प्रकार उन्हे डराने, धमकाने, बुलाने, ललकारने, सान्तवना देने के भी अनेक सकेत हैं जिन्हें पशु सरलता से समझ लेते हैं तू तू कहकर कुत्ते को बुलाया जाता है तथा दुर दुर कह कर उसे दुत्कारा जाता है. ऐसे ही सकेत पक्षियो के भी हैं ये सकेत भाषा से भी बहुत पहले के हैं.

अपनी वागड क्षेत्रीय यात्रा के दौरान कुशलगढ मे आदिवासियो क हाथों पर की कलाई पर छोटे-छोटे गोल-गोल दाग देखे. पूछने पर 75 वर्षीय मडिया खडिया ने बताया कि बालपन मे ही ये दाग पशु चराते समय जगल मे कपडे की गोटी बना उसे गर्म कर लगा दिये जाते है. इन्हें धामला कहते हैं खो सख्या मे पाच-पाच होते हैं. ये दोनो हाथो पर धागे जाते हैं. मेरा अनुमान है ये दाग अपने प्रति शोषण-उत्पीडन के खिलाफ बगावत के प्रतीक है. बेगार, लगान, सागडी, बट्टा, जुर्माना जैसे शोषणपरक प्रकार इनकी पीढिया चुपचाप सहन करती आरही हैं भीतर घुटते घुटते जो घाव गहरा गये हैं वे ही इस रूप मे उभर कर प्रकट हुए हो तो कोई आश्चर्य नहीं. दाग:चिन्हो का यह अध्ययन अपने आप मे बडा अनूठा, विचित्र और वैविध्य लिये है. •
से इनका अध्ययन करने पर लोकजीवन के कई सास्कृतिक और
ऐसे पक्ष उद्घाटित हो सकते हैं जो शोध के कई नय आयाम
सकते हैं.

लूंबलूंबालो ढोलियो

ढोलिया अथवा खाट मनुष्य के रात्रि-जीवन का घनिष्ट साथी है. क्या गरीब और क्या धनवान दोनों के लिए इसका अपना महत्व है सर्वेक्षण से पता चला है कि गाव और गरीब इसके प्रिय साथी हैं. किसी भी गाव के किसी भी घर मे पहुच जाइये, खाट से ही सबसे पहले आपका स्वागत होगा. कुर्सी पर बैठकर जो आनद प्राप्त नही होता है वह खाट पर बैठकर प्राप्त होता है यह लेट और बैठ दोनो कामो के लिए उपयुक्त है यानी इस पर आरामपूर्वक लेटा भी जा सकता है और बैठा भी गावो मे हाकिम-हुक्काम आज भी खाट पर ही बैठकर अपना अधिकतर कामकाज करते हैं बूढो के लिए तो खाट का ही एकमात्र सहारा होता है गावो मे यह खाट 'माचा' नाम से भी बडा लोकप्रिय है इसी माचा से माच, मचान और मच शब्द विकसित हुए. यह माचा मूज, सरण तथा अमाडो से बुना जाता है शहरों मे सूत की बुनी बुनाई भात-भात की नवारो से इसकी बुनाई की जाती है गावो मे गरीब लोग खजूर नारियल व खाकरे की जडो की रस्सियो, जूट्ये की हींदरी से माचा तैयार करते हैं छोटा माचा मचली कहलाता है जो बच्चों के लिए होता है

सिरोही के पास गोईली गांव मे अपनी यात्रा के दौरान शकरजी राव के यहां भांत-भात की बुणाई वाली खाटें देखीं उन्होने बताया कि खाट बुणाई में सर्वप्रथम ताणा दिया जाता है फिर आडी बुणाई प्रारम्भ की जाती है जिसे धांगा ओजा कहते हैं बुणाई की विविध भातो मे चोकडी, बयारो, घोरो, खजूरियो जैसी भातें सर्वाधिक प्रचलित हैं बयारा भात की खाटों में एक बयारा से लेकर चार बयारे और पचास-पचास बयारो से लेकर सो-सो बयारो तक की बुणाई चलती है

मेहदी माडनो के विविध भांतो की तरह खाट भी कई भांतों मे बुने जाते हैं अलग-अलग ऋतुओ के लिए इन खाटो की अलग अलग भांतें निर्धारित हैं. उदाहरण के लिए चौमासे में तालतलैया एव सरवर पानी से सराबोर होकर हिलोरे मारते रहते हैं तब उनकी छोटी-मोटी लहरें उठती हैं इन्ही लहरो से

एक कमरे मे पहुँचना पडता है जहाँ सभी औरतें एकत्र होती हैं और उन्हे गादी तकिये देने को कहती है तब जवाई सुनाता है—

गड दिल्ली गड आगरो गड है बीकाणेर
बीकाण्ये को ढोलियो घड्यो घाट स्यू घाट
घडियो सो बुण्यो नहीं बुण्यो पीले पाट.
पागा ज्यारा सोवणा सुपार्या की ईस
नार मोर रा सागवा पुतल्या माडी रीस.
साता ने सतरज औ साला ने सिणगार
बत्तीसा ने बैठणो छत्तीसा ने हार.
गादी पाट पटम्बर की गादी रेसम तणियाह
गादी राजा भोज की वेठे सब जणियाह

गादी देने के साथ तकिया दिया जाता है और तब उसकी ढोलणी (पलग) बाध दी जाती है. इस प्रकार प्रश्नोत्तर का क्रम चलता ही रहता है. इन प्रश्नोत्तरो मे व्यग्य-विनोद एव श्लील-अश्लील के कई रूप देखने को मिलते हैं.

शाही घरो मे ढोलिया का एक रूप हिंगलाट विशेष रूप से प्रचलित है. पीपली नामक लोकगीत मे पत्नी अपने पति को परदेश जाने से रोकती हुई उसके लिए ढोलिया ढालने और हिंगलाट घालने की बात कहती है इस पर पति-'पोढ चलाला प्यारी ढोलियो जी, माण चलाला हिंगलाट' जैसी रगभरी बात कहकर उसकी मनभावन मनुहार का भी स्वागत करता हुआ पाया जाता है.

राजस्थानी माडो मे तो ढोलियो से सम्बन्धित बडे ही सुन्दर वर्णन सुनने को मिलते हैं. एक माड का यह अश द्रष्टव्य है—

अन्दाता याही रहियो जी
बादीला याही रहियो जी
थो थानै पलियो ढलाऊ सारी रैन बादीला यांही''''
लूंबलू बालो ढोलियो घडियो नोखा घाट
जडियो सोना रूप सूं नग जडिया नो लाख.
सेज बिछाऊं साग्डी परक फूलां रो ठाठ
लूंबस्या गले लागस्यां हिंदलेस्या हिंगलाट.
अन्दाता''''.

मेहंदी की महिमा

एक दिन कला मण्डल सग्रहालय को देख कर कुछ विदेशी मेरे पास आये और बोले- 'हमे उदयपुर बहुत अच्छा लगा और उससे भी अच्छा लगा आपका यह सग्रहालय और उसमे भी मेहदी लगे बोर्ड पर मेहदी के भात-भात के अकनों न तो हमे हमेशा के लिए मोह लिया. आपकी 'मेहदी रग राची' पुस्तक भी हमने देखली मगर इस मेहदी की महिमा क बारे मे हम कुछ और अधिक जानना चाहते हैं.' उन्हें बैठक देते हुए मैंने कहा कि मेहदी की महिमा तो स्वय मेहदी ही जान सक्ती है यह मेहदी मेह ने दी इसलिये मेहदी कहलाई. मेह यानी बरसात. मेह बाबा के कई गीत हमारे यहा प्रचलित हैं बाहर से हरी और भीतर से लाल. मेहदी का यह एक ही चमत्कार, रूप, लावण्य नही है. इन्द्रधनुष के सारे के सारे रग इस इन्द्र-पुत्री मेहदी के रग हैं.

लोकगीतो मे वर्णन आता है कि सबसे पहले सुमेरू पर्वत पर मेहदी का पेड उगा तो चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश दिखाई दिया. मेहदी को वसुदेव ने दूध से सींचा और बलराम ने उसकी देखभाल की. पसारी भाई, मेहदी को सोने के पलडो वाली चादी की तराजु मे तोल. यह मेहदी स्वर्ग से आई है. कितनी महक है इस मेहदी में. कितनी सुरगी है यह मेहदी ! तभी तो इसके बोने से लेकर बाटने लगाने तक के कई बखान मिलते हैं. मेहदी सोने की सिलपट्टी पर बटती है. महीन-महीन मखमल से छनती है और रतन कटोरे में गगाजल के साथ मोली घोली जाती है. ऐसी महिमावती मेहदी का क्या कहना. इसके आगे चिरमी, लाल, हिगलु, सिन्दूर, कु कुम सबके सब पानी भरने लग गये.

चिरमी चुप व्है बैठगी,
या तो लाल रई सरमाय.
हार गयो छै हिंगलु,
साज्यां मरं सन्दूर.
कदू रो कई रग है
मेदी सुरगो रग.

(चिरमी चुप होकर बैठ गई. लाल शर्म से झुक गई. हिंगलू हार मान गया सिन्दूर लज्जित हो गया और कु कुम का तो रग ही क्या है. मेहदी का रंग अजब अजूबा सुरगा सुरीला है)

मेहदी विवाहितो के सुख, सुहाग, सौभाग्य की लाली है इसका महत्व नारी और पुरुष दोनो के लिए है राह के गीर से नवोढा मेहदी उचवाने को कहती है. राहगीर मेहदी तो उचवा देना चाहता है पर उसके बदले मे उसका आधा यौवन और आधा शैया-सुख चाहता है. इस पर नवोढा कहती है- 'मेरे ऊपर मेहंदी का रग चढा हुआ है. केशरिया लाल, तेरी इस हरकत पर तुझे क्या तुम्हारे बाप तक को नही छोड़ूगी तुम्हारी मूछो पर अगार घर दूंगी और तुम्हारे पिता की दाढी जला दूगी.' यह सुनते ही राहगीर भूत की तरह भाग उठता है, कितना कमाल है मेहदी के रग मे.

मेहदी बडी अजब रगीली है हथेलियो की रेखायें घिस गई हैं इसके गुण को गाते-गाते. इसका रग कितना मजेदार है ? ऊपर का रग हरा भीतर का रग लाल. अन्य रगो मे ऐसा रग कहा मिलेगा ? इसका रग ही नही, रस भी निराला है. नौ रसो का नाम तो बहुत सुना पर एक रस ऐसा रह गया जिसके बिना सब रस सूने. जीवन सूना, जग सूना, परिवार, मनुष्य और समाज सूना. यह रस है प्रेम रस यदि यह रस है तो सभी रसो की सार्थकता है इस रस की प्रतीक है मेहदी. यह रस बडा सरल है. यह प्राप्त होता है बटने-बांटने से, रचने-रचाने से, एकमेक होने से, अपने को विलीन करने से. मेहदी की पत्तियां बाध लीजिये हथेली पर, कुछ नही होगा. कोई रग नही आयेगा. प्रेम बटता है तभी रसता है. मेहदी जैसा प्रेम बटेगा तो ही रचेगा.

मेहदी प्रत्येक सस्कार अनुष्ठान की पावनी पाहुनी है. इसके बिना सब अधूरे हैं. इससे जनम-परण-मरण सब सार्थक होते हैं. मेहदी की थपकियो से थापे पूरे जाते हैं. इन्हीं थापो में गणगौर चूडा चू दड बनाये रखती है. दशामाता अवदशा से बचाती है. करवा, नागपाची, दीयाडी, दीवाली, चौथ, शीतला आदि सबके सब देव-देवी मेहदी की महक से रीझकर स्वय रिध सिध होते हैं और गृह-परिवार को ऋद्धि-सिद्धि-समृद्धि प्रदान करते हैं. मेहदी रची रमणीयो की छटा बादाम की प्रफुल्ल शाखा सी लगती है टेसू सी लीलपील लिये लमछराती है. मेहदी से मेहदी बाई और मेहदा लाल दोनो ही रंगते, रचते, रूपते, सुवासित होते हैं.

यो तो मेहदी सब ऋतुओं को भायी है. सर्व ऋतु विलासी है परन्तु यदि मौसम सावन का हो तो फिर कहना ही क्या ? इस मौसम मे सब फूलते हैं. प्रकृति और पुरुष फूल-फूल, फूट-फूट पडते हैं प्रकृति के समग्र उपादान-सरोवरो तथा ताल तलैयो पर चलती जल-लहरिया, महकाया मेहदी झाड, कमल बेल, फूल सिंघाडे, कूकते मोर, किलोलती मछलिया, चटाई का बिछावन चोपड और बरतो-भरतो का खेल; ये सबके सब मेहदी हथेलियो मे भी रग लाते हैं. सावणी तीज तथा कजली तीज पर हीडो-झूलो की बहार, साज सिणगार और गीतो-झालो मे प्रियतम का बुलावा मेहदी की आग और राग को रह-रह कर अभिव्यक्त करता है. यह मौसम अकेलो की नहीं है. अकेली प्रियतमा के लिये तो यह मौसम-मेहदी जानलेवा सी है—

मेहदी ने गजब दोनो तरफ आग लगा दी
तलवों मे उधर और इधर दिल मे लगी है.

और उधर प्रिय मेहदी के पत्ते-पत्ते पर अपने हृदय की बात लिखता रहा इस आशा में कि धीरे-धीरे कभी तो प्रियतमा के हाथ उसको यह बात पहुचेगी. सचमुच यह मेहदी एक ऐसी रगरेजण है जो कई अगो-रगो को रगती हुई भी नित नये रग लिये होती है. प्रेम का इतना जबर्दस्त रग रस अन्यत्र कहा मिलेगा, इसीलिये भावज आशीष देती है— 'जग लाली रहे जैसे रग मेहदी'.

मेहदी हाग और सुहाग देती है. भाग और सुभाग देती है. इसका रग धीरे-धीरे चढता है और धीरे-धीरे उतरता है. इस रग से दोनो रगे जाते हैं. लगाने वाला तो रगता ही है, इसे निखरने वाला भी कम नही रगता है. मेहदी के पत्ते-पत्ते मे जैसे रग समाया हुआ है वैसे ही इसके लगाने से अग-अग रग-सग हो उठता है. हथलेवे की मेहदी देखकर वर-वधू के प्रेम रस का अनुमान लग जाता है. गाढी ललाई, हल्की ललाई, काली ललाई. गाढा प्रेम, हल्का प्रेम, बेमेल प्रेम. दो पनी मेहदी कितने दो का बल-सबल, रग-रस बनती है, पवित्र प्रेम बनती है. जीवन हरित करती है. कितनी प्यारी है यह मेहदी ! तभी तो पुरुषों में 'मेहदालाल' और औरतो में 'मेहदीबाई' नाम भी बहुत मिलेंगे. मेहदी मे भी मेहदा और मेहदी दो किस्मे होती हैं. मेहदा की दो पत्तियां बडी तथा कम रचने वाली होती है जो ठीक नहीं समझी जाती. मेहदी पुरुषों के लिए वर्जित है. केवल चुटी अगुली मे ही उनके लगाने का लोकजीवन है. गीतो मे भी यही बात मिलती है परन्तु मैंने तो कई मेलो टेलो मे ऐसे मेहदालाल देखे हैं जिन्होने मेहदी से अपनी हथेलियां मेहदाई.

बहिन ने भाई के हाथो मेहंदी दी और उसे सुसराल भेजा. सालाहेलियों ने बहनोई के हाथो को निरखा और पूछा- 'किसने मांडी है इतनी अच्छी मेहदी ?' बहनोई ने बहिन का नाम लिया तो वे बोल पडी– 'ऐसी सुगणी बहिन को चूंदड ओढाओ और चूडा पहनाओ जिसने इतने सुन्दर प्यारे-प्यारे हाथ माडे हैं.' सुहागिन के मेहदी रचे हाथो पर पति भी रीझा है. उसने कहा– 'तुम्हारे ये मेहदी हाथ मेरे हिरदे पर रखदे. मैं इन पर पन्ने जवाहरात न्यौछावर कर दू'. परिणिताओ को अपने परणिये से भी अधिक प्यारी मेहदी है. वे अपनी मेहदी का गुणगान करती है तो कह उठती है- 'रसिया बालम, मेरा पल्ला छोडदो, मेरे हाथो मे मेहदी रची हुई है'. 'भवरजी, पढ़ना-लिखना छोड मेरे मेहदी भरे हाथो को तो निरखो जरा !' 'मेरा बना मेहदी जैसा रचने वाला है. मैं उसे हथेलियो मे दबाकर रखू गी.' 'मैं उसे मुट्ठी मे दबाकर रखूंगी.' मेहदी का रग और मेह का सग हो कुछ ऐसा ही होता है. इसका आनंद हुलास-उल्लास शब्दो मे बांधने का नहीं, हिरदे मे साधने का है. मेहदी के इसी माहात्म्य के फलस्वरूप अर्जुन एक बडा कुण्ड लाता है इसे घोलने के लिये और तीनो लोको मे यह खबर फैल जाती है. मेहदी के छीटे मात्र से भाग्य उदित होते हैं. वासुदेव बलराम तक अपनी पगडियो को मेहदी के छीटो से पवित्र करते हैं.

मेहदी शृंगार भी है और प्रसाधन भी. यह गुणकारी है जहां प्रेम देती है वहा औषध भी. गर्मी मे यह शीतलता प्रदान करती है. अन्य कई रोगो के साथ-साथ यह चर्म रोग की भी बडी अच्छी दवा है जानकार कहते हैं कि चर्मरोग तलुए और हथेलियो से प्रारम्भ होता है और मेहदी भी यही दी जाती है इसलिए जो मेहदी लगाते हैं वे बहुत सारे चर्मरोगो से बच जाते हैं. सफेद कोढ भी इससे ठीक होती कही गई है.

कुंवारी लडकिया पगथलियों मे मेहंदी नहीं लगाती. हथेलियो में भी बारीक माडनें नहीं बनाती. यदि ऐसा करती हैं तो उनके सावे सूझते नहीं हैं. लग्न समय पर नहीं आते हैं. नारियो के लिये ही इसके रचाने का विधान है. मेहदी कभी सोये-सोये नहीं लगाई जाती. धूप मे बैठकर दिन को दुपहर तिपहर मे मेहदी लगाना भी अपशुकन है यदि किसी ने लगा भी दी तो घर-बाहर नहीं निकला जाता कहते हैं इसकी सुगन्धी पर भूतप्रेत के हावी होने का भय बना रहता है. पगथली के बीच की थोडी जगह बिन मेहदी छोडी जाती है. यह स्थान भाई के लिए रहता है. यदि यहा मेहदी लगा दी तो भाई के लिए भार आने की आशका रहती है. मेहदी की टीकी लगाना खोड समझा जाता है. इसके सबसे बडे दुश्मन मूर्गे हैं जो इसे चुग-चुग जाते हैं.

मांडनें कोई भी हो चाहे मेहदी के हो चाहे जमीन के, घर आंगन के हो. ये सब प्रकृति और मनुष्य के ऋतु-जीवन की कला-निधियो से बन्धे होते हैं चेतो माडनो को ही लें ग्रीष्म का प्रारम्भ होता है होली से. होली का रग-उमग चग के साथ रागी-रागी है तो यह चग अपने नाना प्रकारों मे मेहदी हथेलियों मे भी चगेगा और माडनो मे भी आगन को मडित करेगा. इन्ही दिनो आम्र मौर खिल उठते हैं और धीरे धीरे खट्टी मिट्टी केरिया निकल आती हैं खजूर का फल खजूरा भी इसी मौसम की देन है गर्मी अधिक पडने से पखियो की घर-घर पूछ होने लगती है होली के साथ साथ गणगौर का त्योहार भी इन्ही दिनो आता है गणगौर पर चू दडी धारण कर औरतें माता गणगौर की पूजा कर सुहाग मांगती है इसी अवसर पर नवोडे जवाई नूते जाते हैं मोतीडे बाजोट पर नाना गीत गालो मे उन्हे भोजन परोसा जाता है उनके लिए शतरज, चौपड की महफिल जुटाई जाती है. गौर का बेसण, घेवर, शक्कर पारे और गलीचा जैसे मांडनें भी गणगौर के मुख्य मिष्ठान बिछावने हैं नये धान के रूप मे गेहू की बलिया तथा चने के बू टे भी पहली बार होली ज्वाला मे सेके जाते हैं. बिच्छु भी इन्हीं दिनो मे बाहर आते हैं. ये सारे के सारे उपादान जिनसे हमारा जीवन सुख दुख मय बनता है, माडनों के रूप मे दुख सुख से सुख-दुख से होकर चितरा उठता है मेहदी-जीवन की भी यही सबसे बडी सार्थकता है

हमारे ही देश मे नही, अब तो विदेशों में भी मेहदी बडी महिमा ला रही है भीलवाडा का सगीत कला केन्द्र तो प्रति वर्ष मेहदी माडनो की प्रतियोगिताए आयोजित करता है जहा ऊचे-नीचे घरो की बीस चोईस दर्जन महिलाए एक सग बैठकर मेहदी सिणगारती है प्रतियोगिताओ की यह लहर कई कॉलेजो तथा सार्वजनिक रग प्रतिष्ठानो मे भी मेहदाई जाने लगी है सावण की सुरगी नार और फिर उसके हाथ पावों पर मेहदी का बारीक-बारीक झरमरता सौंदर्य सुलक्षणाया हो तो क्या कहना. अकेली मेहदी ही ऐसी है जिसके द्वारा महिलाए इस अगजग के सारे सौंदर्य सुख, साज सिणगार, ओढन पहनन, खानन पानन, कुसुम कानन, चहकता पक्षीमन, सूर्य तारे सम्बन्धी समग्र सदर्भो को अपनी हथेलियों मे रखकर जो असीम सुख आनद प्राप्त करती हैं उसकी तुलना में इन्द्राणी, अप्सराए और मल्लिकाए भी क्या प्राप्त करती होंगी ? मेहदी तो मेहदी है. उसे न कोई मोल पाया है न कोई तोल पाया है.

मेहदी की एक जात धरन्टा होती है. इसके पुष्प सफेद नीले व फल पीले-पीले झूमकों में लगते हैं. मेहदी का एक वर्ग आलवृक्ष है जिसका रग पहले बाजार मे बिकता था. एक जात रेणुका भी कही गई है. यह ऊंची जात है

जिसका एक पर्याय रेलुका है. रेणुका की एक दुधिया जात को फारसी मे हबुल अरमज कहते हैं. हिन्दी मे इसे सफेद मरच कहते हैं. इसे दखनी मरच भी कहा जाता है. यह दुधिया वृक्ष होता है. रेणुका की ही एक और जाति सुन्दरी नाम से जानी जाती है. अफगान मे इस लता को गधना अथवा गधकार कहते है.

उदयपुर के गुरु तारकेश्वर ने बताया कि बागी जाति की मेहदी मेधड कहलाती है. माली इसे धरूंटा कहते हैं. गुल मेहंदी को सस्कृत मे तेरण कहते हैं. फारसी मे मेहदी को एतकान (अर्यकान) कहते हैं. इसका सस्कृत नाम मदयन्ति, नखरजनि, यवनेष्टा, नख पत्रिका आदि है दक्षिण भारत मे इसे महिलांचि तथा बगाल मे नागदना या नागदाना कहते हैं बनू के हिन्दू लोग पश्चिमोत्तर भारत मे कतीला बोलते हैं. मालियो मे इसका एक नाम बालसम भी चलता है. यह बारामासी होती है जो जगलो मे भी मिलती है. गुल मेहदी के फूल को रगडने से हथेली लाल हो जाती है. मेहदी का वृक्ष भी होता है जिसे जारूल कहते हैं.

मेहदी को मेहदी के रूप मे तैयार करने की प्रक्रिया बहुत आसान नही है. इसके लिए किसी शायर ने ठीक ही कहा है—

कटी, कुटी, पिसी, छनी, गूंधो मेहदी.
इतने दुख सहे जब उनके कदमो मे लगी मेहदी.

मेहदी लगे हाथ किसे प्रेरणा नहीं देते फेरो के समय इन्ही हाथो ने जहा प्रेम का सर्वस्व न्योछावर किया है वहा युद्ध का आह्वान होते ही अपने प्रिय को अपने कर्त्तव्यपथ का स्मरण दिलाते हुए उसे विदा दी है, सदा-सदा के लिए बिछुडन दिया है और इन्हीं हाथो ने प्रेम मे पगलाये पति को अपना सिर दे उसे अपने कर्त्तव्य का भान कराया है. हाथो मे मेहदी हो और फिर वह हाथ गोखरू, पहुची. हथफूल तथा मूदडी से सजा हो तो उसका क्या कहना ! मेहदी रचे हाथ पावो ने कइयो को आदर्श प्रेमी और पति-पत्नी का सुफल-सफल जीवन प्रदान किया है बाहरी मेहदी क्या तेरी महिमा है !

रावण ने विवाह किया मंडोवर

जोधपुर के पास मडोवर बडा प्राचीन और ऐतिहासिक नगर कहा जाता है यहा जाकर कोई देखे तो उसे कल्पना नही करनी पडेगी पर पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग ने जो कुछ बताने को सग्रह कर रखा है, लोगबाग तो प्राय: वही वही देखकर चले आते हैं. ऊपर भी जहा तक सडक बनी है वहा तक भी बहुत कम लोग जा पाते हैं. चारो ओर पत्थर ही पत्थर चट्टानें पसरी घसरी पडी हैं, उसे कोई क्या देखेगा पर असली दिखावा तो ऊपर ऊ चाई की ओर ही है. वहा जो रचना आज भी जिस रूप मे जमी बिखरी हडबड हुई मिलती है उससे उस नगर का वैभव, उसकी समृद्धि, उसका ठाठवाट, ललित लावण्य और सौन्दर्य-शौर्य तथा कला-सांस्कृतिक परिवेश खुल खुल खिलाखिला पडता है.

ऊपर जहां तक नजर जाती है पत्थर ही पत्थर, चट्टानें जमी बिखरी पडी हैं. कहते हैं 24 कोस तक यह नगर फैला हुआ था. कई महल उल्टे पडे हैं. ध्यान से देखने पर लगता है जैसे सारा नगर ही किसी ने उलट दिया है. हमने एक-एक चट्टान देखी, गिरे हुए महल-खडहर देखे, सब कुछ यही-यही आभास दे रहे हैं. जब मैं अपना केमरा आंख पर टिकाये जा रहा था तब मुझे एक बुढिया ने कहा भी-'लाला, काई फोटू लेवे है, आखी नगरी ही उलटी पडी है'.

इतने मे कल्लाजी साक्षात हो आये. उन्होने सारी स्थिति स्पष्ट करदी. बोले– साढे सात हजार वर्ष पूर्व रावण ने यहा आकर मदोधरी से विवाह किया था. मदोधरी का पिता मदूजी था. उसी के नाम से मडोवर नाम पडा. हमे वह चवरी बताई, पत्थर की बनी 10 खभो वाली जहा रावण का विवाह सम्पन्न हुआ. पास ही पत्थर मे उत्कीर्ण बडा कलात्मक तोरण भी बताया जो अब तो टुकडो टुकडों मे वहा पडा है परन्तु उसे देखने से यह पता तो लग ही जाता है कि यह विवाह कितना शाही ठाटबाट वाला और ऐश्वर्य सपन्न रहा होगा. इसके लिए कितनी तैयारी करनी पडी होगी कितने कारीगरों ने रातदिन एक कर कई रात-दिन काम कर विवाह को स्वर्गिक सुख दिया होगा

अपनी कला की कीर्ति गाथा तो वहां पड़े पत्थर स्वयं मुँह बोल बयान कर रहे हैं. कल्लाजी ने एक महल के सर्वोच्च सिरे पर लेजाकर हमें बताया कि यह ध्वस्त महल 24 खण्डों का था 12 खंड ऊपर तथा 12 इसके नीचे थे. नीचे के खंड तलघर तो आज भी सुरक्षित हैं. इसकी बनावट इस ढंग की थी कि प्रत्येक खंड में जाने आने तथा हवा रोशनी पहुंचने का पूरा-पूरा प्रबंध था आसपास के कुछ महलों के नीचे हम गये, उनके तलघर देखे, हवा जाने के स्थान देखे. बड़ी-बड़ी चट्टानों के नीचे दबे मुख्यद्वार देखे जिनसे नीचे पहुंचा जाता है पर आज उन भीमकाम चट्टानों को कौन हिला सकता है. नीचे के तलघरों में छिपे खजाने भी हैं जिनमें करोड़ों मन निधि दबी-छिपी पड़ी है. एक तलघर में तो पूरा मन्दिर दबा पड़ा है जिसकी दीवारों पर उत्कीर्ण रंगबिरंगी आकृतियां आज भी ताजा लग रही हैं.

वे स्थान देखे जहां रजपूत रहते, रानियां रहती और अपनी-अपनी कुल देवियों की पूजा करतीं तब ही जाकर अन्न जल ग्रहण करती मंदोधरी का महल देखा. उसकी कुल देवी का पूजा स्थल आज भी वैसा ही हैं, पुराना होते हुए भी बहुत ताजा, कई महल ध्वस्त होगये पर कई यूं के यूं जमे हुए हैं जिसके झाकते मुंह बोलते पत्थर कितने सुहावने, सौम्य और कांतियुक्त लगरहे हैं. बड़े-बड़े दरवाजे विरान पड़े खंडहरों के मूक साक्षी हैं कि तब कैसी-कैसी रही होगी सारी रचना !

कल्लाजी ने बताया कि रावण जितना बलशाली था उतना ही अभिमानी. वह सारे संसार को अपने अधीन कर लेना चाहता था उसने मेदूजी को भी कह दिया कि वे उसके अधीन हो जायें. मेदूजी को भला यह क्यों कर स्वीकार्य होता ! उन्होंने अपने जवाईराजजी का मान रखते हुए विनयपूर्वक रावण की यह बात नहीं मानी. रावण को कहां धैर्य था. वह बड़ा कुपित हुआ. उसने कुम्भकरण व मेघनाथ की सहायता से सारी नगरी को ही उलट दिया. इसलिए आज भी यह सारा नगर उल्टा पड़ा है यहीं चंवरी के पास राणी महल, जनाना महल के ध्वसावशेष देखे. कुछ कमरे तो यहां आज भी ऐसे हैं जिनमें की गई कला-कारीगरी देखते ही बनती हैं वह रंग और रूप विन्यास आज भी वैसा ही बना हुआ है.

लोकदेवता कल्लाजी ने बताया कि प्राचीन इतिहास की सही जानकारी नहीं होने से बड़ा अर्थ का अनर्थ होरहा है. हर बात का इतिहास भी तो नहीं

लिखा गया कौन इतिहासकार लिखता मडोवर की यह कहानी उसे कौन बताता ? इसलिए बहुत सी चीजें काल की परतो में दबी पडी हैं जैसे मडोवर बडी बडी चट्टाना के नीचे औंधा पडा हुआ है हमने राई-प्रागन, सभा मडप, हाथी घोडा के ठाण, दासियो के रहवास गृह सब कुछ देखा नीचे वह एक पत्थर का महल तो सभी दर्शनार्थी देखते हैं उसी से पता चलता है कि उस समय की पत्थर का कला कारीगरी कितनी बेमिसाल बढी चढी थी

बहुर्चाचित रावण की लका के सम्ब ध मे पूछने पर कल्लाजी ने बताया कि वह लका तो पानी मे समुद्र म डूबी हुई है उस लका का एक झू पड तिरुपति बालाजी है लकापुरी पर राम ने 100 योजन का पुल बाधा था तिरुपति वह स्थान है जहा राम विभीषण मिलन हुआ था उन्होने कहा कि बातें तो कई हैं मैं बता भी दू गा तो जगत विश्वास नही करेगा उन्होने बताया कि इसी मडोवर म नीचे 3 सुरगें हैं इनम से एक अयोध्या, दूसरी लका व तीसरी द्वारिका जाती है

ऐसा नहीं कि तबमे यह मडोवर ऐसा ही पडा हुआ है इन्हीं पत्थरो से नये महल बनते रहे और जगत बसता रहा आज जो जोधपुर है उसका बहुत कुछ निर्माण यहीं के पत्थरो से हुआ है उन्होंने बताया कि आज से तीन हजार वष पूव श्रीकृष्ण ने भी यहा आकर विवाह रचाया था यह विवाह हुआ जामवती से दरसल यह वैवाहिक कायक्रम योजनाबद्ध नही रहा जैसा रावण का रहा अजु न के साथ श्रीकृष्णजी मणि ढू ढते ढू ढते यहाँ आ गय इसलिये कि वह मणि जामवती के पास थी इससे वह खेल रही थी कृष्णजी ने वह मणि मांगी तब जामवती का पिता जामवत बोला— मणि दू गा पर उसके साथ साथ इस बालकी को भी देना चाहूगा' कृष्णजी ने यह बात मानली तब वहीं उनका विवाह हो गया

मडोवर अपने म बहुत कुछ छिपाये है सारी की सारी परतें यों की यो जमी दबी पडी हैं कौन खोले इन इतिहास परतों को ! मडोवर के प्रस्तरो को ! काल कितना हावी होता चलता है ऐसे में मनुष्य की क्या बिसात वह कहां-कहां जीयेगा-वतमान में कि भूत मे या कि भविष्य मे ! बहरहाल मडोवर तो सबमे जीता हुआ अजीत बना हुआ है

एकलिंगजी सबसे बड़ी धजा वाले

मन्दिरों पर धजा चढाने का भी पूरा सस्कार है. यदि इन धजाम्रो का ही अध्ययन किया जाय तो ऐसी बहुत सी सामग्री हाथ लग सकती है जो धजा परम्परा और उनसे जुडे देवता का रोचक इतिहास ही प्रस्तुत करदे धजाम्रो के विविध रग, उनके आकार-प्रकार, उनकी साज-सज्जा, उन पर लगेघगे विविध कलात्मक चित्र-प्रतीक बडा रोचक दास्तान देते हैं नाथद्वारा के श्रीनाथजी की सात धजाएं, सातो अलग-अलग रगो की, एक-एक धजा एक-एक लाख की, श्रीनाथजी को इसीलिये सात धजारी भी कहते हैं.

मेवाड का एकलिगजी का मन्दिर बडा शांत और सुखद पुरातन मन्दिर. भगवान एकलिगजी की सेवापूजा. मेवाड के महाराणा इन्ही एकलिजी के दीवान. ये एकलिगजी कहा से आये लाये ? लिखावटी इतिहास तो जो कहता है वह पढने को मिलता ही है पर लोक का इतिहास कुछ दूसरा ही है. कहा जाता है कि मीरां के पति भोजराज पहुचे हुए शिव भक्त थे. भक्ति के क्षेत्र मे मीरा से भी अधिक पहुँचे हुए इसीलिए कहा जाता है कि मीरा और भोज का विवाह दो घर नही बिगड कर एक ही घर बिगडने जैसी घटना है मीरां कृष्ण की भक्ति मे सुधबुध ही खो बैठती तो भोज शिवमय हो अपने को भूला देते. रतनसिंह इसीलिये मीरा और भोज दोनो से नाखुश था.

इन्हीं भोज ने अपने जीवनकाल में चित्तौड मे दस शिवलिगो को प्रतिष्ठा दी. सात तो गौमुख के उसी तलैये मे स्थापित हैं और तीन ठेठ नीचे जमीन से लगे जिन पर उसी गोमुख का पानी निसर कर अभिसिंचित हो रहा है. यह एकलिगजी वाला ग्यारहवा लिग था, जिसकी प्रतिष्ठा भोज करवाना चाहते थे पर उनके जीवनकाल मे वैसा नही हो सका. मृत्यु के बाद जब उनके महल का सम्भाला लिया गया तो यह लिंग बन्धा बन्धाया पैक मिला जिसे बाद मे एकलिगजी के रूप मे नागदा मे स्थापित-प्रतिष्ठित किया गया. इस सम्बन्ध की काफी शोधखोज बाकी है.

जब यह मन्दिर बनकर पूर्ण हो गया तब इस पर कलश चढाया गया पर रात को वही कलश गिर गया दो-तीन बार जब ऐसी घटना घट गई तो महाराणा को इसकी जानकारी कराई गई. महाराणा को भी इस बात का बडा असमंजस रहा. उसी रात एकलिंगजी स्वप्न गये और महाराणा से कहा कि धारा नाम का एक दर्जी है यदि उसका हाथ लगे तो कलश चढ सकेगा. सुबह पता लगाया गया. धारा वही रहता था. उसका हाथ लगा तो कलश चढ गया. महाराणा ने धारा को बुलवाया और मुह मागा चाहने को कहा. धारा ने यही कहा कि मुझे तो और तो कुछ नही चाहिये, हजूर से यही निशानी चाहता हू कि मेरा नाम अमर रहे. तब वही धारेश्वरजी का मन्दिर बनवाया गया जिसमे धारा शिवजी पर पानी भरे लोठे से अर्घ्य दे रहा है. यह मन्दिर एकलिंगजी के मुख्य दरवाजे के बाई ओर है.

धारा चूकि दर्जी था तो दर्जियो को कलश पर धजा चढाने का अधिकार ही क्या जैसे पट्टा ही मिल गया तब से प्रतिवर्ष चैती अमावस्या को धजा चढाने की रस्म पूरी की जाती है. धीरे-धीरे दर्जियो मे जुदा-जुदा खापें हुई तो वे अपनी-अपनी अलग-अलग धजा चढाने लग गये. इन खापों मे सुई दर्जी, छीपा दर्जी, सालवी दर्जी और रगाडा दर्जी नामो चार खापे हैं. महाराणा फतहसिंहजी के समय छीपा दर्जियो के अपना प्रमुत्व अलग से दरसाया फलत: वे चैती अमावस्या की बजाय चैती पूर्णिमा को धजा चढाने का अपना कार्यक्रम रखते हैं. शेष तीनो खापो के दर्जी मिलकर अपनी-अपनी धजा चढाते हैं.

चैती अमावस्या के एक दिन पूर्व सभी दर्जी परिवार एकलिंग मंदिर मे रात्रि जागरण करते हैं. इस दिन एकलिंगजी को हीरों का नाग धारण कराया जाता है. रात भर भजन भाव होते रहते हैं

सुबह होते ही 'एकलिंगनाथ की जै' के उच्चारण के साथ धजा के लिए सफेद खादी के थान खुलते हैं. 30 इन्च करीब चोडी धजा के लिए थान के बबू केसर के छीटे देने के उपरात सिलाई चलती रहती है. फिर एक पुरानी लकडी, जिसे ये लोग गज कहते हैं, से उस धजा को नापा जाता है. यह धजा 108 गज तक तो नापी जाती है उसके बाद जितनी बडी और करनी होती है, की जाती है पर एक सौ आठ गज तक की लम्बाई होनी तो आवश्यक ही है. धजा नापने का काम मेवाड पटेल के जिम्मे रहता है. यह पटेल परपरागत रूप से चलता रहता है. वर्तमान में मेवाड पटेल नाथद्वारा का कन्हैयालाल कनेरिया है. धजा के लिए प्रत्येक घर से दर्जी परिवार एक-एक रुपया देता है.

यह चन्दा भी धजा ही कहलाता है. धजा की कोथली मे सारा चन्दा जमा होता है. प्रत्येक गाव वाले मिलकर अपना-अपना चन्दा जमा करते हैं. इसीदिन इनकी पच पचायती भी यही होती है. साल भर का लेखाजोखा भी तब कर लिया जाता है.

सबसे पहले धजा मूल मदिर के सोने के छत्र से प्रारम्भ होती है. छत्र के धजा की किनारी बाध दी जाती है. उसके बाद जहा दर्शनार्थी खडे रहते हैं वहा दरवाजे के उसका आटा दे दिया जाता है. वहा से नदकिशोर मन्दिर के आटा लगाया जाता है फिर मदिर के पीछे से ऊपर छतपर धजा लाकर कलश के आटा दिया जाता है, फिर मदिर की बाउण्ड्री के बाहर पीछे की पहाडी पर धजा ले जाई जाती है. तीनो दर्जियो की धजायें वहा जाकर नप जाती हैं कि किसकी कितनी बडी होती है. नापते समय कोई अपनी धजा को खीचता नही है. ऐसा करने से उस समाज मे खीच पडना समझा जाता है. जिसकी धजा छोटी निकलती है उसकी समाज छोटी पडती रहेगी, माना जाता है. नदकेशर तथा निजमदिर पर जो चढते हैं वे डामर कहलाते हैं. ये भील होते हैं जो वश परम्परा से चढते आरहे होते हैं. ये ही नापने के बाद पूरी धजा समेटते हैं और तदनतर मन्दिर मे जमा कराते हैं

ध्वजा का यह लम्बा कपडा फिर टुकडो-टुकडो मे कर दिया जाता है और वहा आसपास जितने भी मन्दिर हैं उनमे नियमानुसार उस कपडे के टुकडे मे चावल, सुपारी पैसा रखकर दे दिया जाता है. इन मन्दिरों की पूरी सूची बनी हुई है. ये टुकडे भी धजा ही कहलाते हैं किसी मदिर के सात धजा (टुकडे) तो किसी के नौ. इस प्रकार एकलिगजी के अलावा ऐसी सौ-सवासौ धजा मदिरो मे दी जाती है धजा समाज के मेरे मित्र श्री उदयप्रकाशजी ने यह जानकारी दी.

धजा चढाने की यह परम्परा एक ऐसी परम्परा है जो अपने आप मे बडी अनोखी और अद्भुत है, एक तो इतनी बडी धजा शायद ही कहीं और किसी मदिर मे चढती हो और फिर चढती हुई भी जहा अनचढी रहजाती हो. जो धजा चढती तो है पर कभी लहराती-फहराती नही है. दर्जी लोग भी जो परम्परा से इतने शिव भक्त शायद नही होते मगर अपने पूर्वज धारा की शिव भक्ति ने इन्हे भी इतना आस्थावान बनाये रखा है कि आज भी उसी विरासत और वैभव का दिल लेकर प्रतिवर्ष ये लोग धजा चढ़ाकर परमसुख पाते हैं.

सांस चोर सांप

राजस्थान के बाडमेर-जैसलमेर नामक रेगिस्तानी इलाको मे कोटडिया, वशमोचन, बेडाफोड, प्रोवा, कालिन्दर, गोरावर, चदन, गो, बोगी, परड, गोफण जैसे साप तो घातक हैं ही पर इनसे भी अधिक खतरनाक यहां का पीवणा सांप बना हुआ है जो मनुष्य की स्वास पीकर अपना जहर छोड जाता है और सूर्योदय होते-होते उसे मरघट पहुचा देता है.

• पीवणा–रात का राजा :

पीवणा सांप रात का राजा है, अन्धेरी रात का. अपनी यात्रा यह रात ही को करता है. चांदनी रात भी इसके लिये अभिशाप कही गई है रोशनी तो इसकी पक्की दुश्मन कही गई है. जहां कही इसे रोशनी नजर भी आगई कि यह अन्धा हो जायगा यही स्थिति इसके द्वारा जहर दिये आदमी की है. यदि रात ही को उस आदमी का इलाज कराया और वह बच गया तो ठीक अन्यथा सूरज की पहली किरण निकलने के पश्चात् वह बच नही पायेगा. ऐसे खतरनाक सांप से इधर के लोग इतने भयभीत हैं कि कोई उसका नाम तक नही लेता. इसीलिये इसे सब चोर-चोर कहकर पुकारते हैं. तीन से पांच फीट तक की लम्बाई वाले इस सांप का रेंगने वाला हिस्सा सफेद-पीला तथा ऊपर का गहरा भूरा-काला घुमावदार आडे तिरछे कटे सफेद चकत्ते लिये होता है इसका मध्य भाग मोटा, मुंह पाव के अगूठे जैसा तथा पीछे का भाग पतला होता है. इसके चलने पर पतली लकीर बनती जाती है.

• स्वांस पीकर जहर टपकाने वाला सांप :

पीवणा आदमी को काटता नही. इसके विषदत ही नहीं होते. कहते हैं जब इसके मुंह की मिसराइयां पक जाती है तब इसे भयकर घबराहट होती है. घबराहट होने से यह इधर-उधर भागता है और सोये हुए मनुष्य की गरम-गरम स्वांस पीता है जिससे मिसराइयां फूट जाती है और इसे शांति मिलती है पर सोये हुए मनुष्य को यह सदैव के लिए शान्ति दे जाता है.

जो लोग सोते समय खर्राटे भरते हैं उन्हे यह अक्सर अपना शिकार बनाता है अन्य साप जहा चारपाई पर नही चढ सकते, यह चढ जाता है और बिना किसी प्रकार का अहसास दिये सोये व्यक्ति की छाती पर जा बैठता है आदमी का जब यह श्वास पीना प्रारम्भ करता है तो धीरे-धीरे उसका मु ह खुलता जाता है और बेहोशी आती जाती है अन्त मे सांप उसके मु ह मे विष उगल पू छ का झपट्टा दे भाग जाता है

० खाट से उल्टा लटकाने का इलाज :

पीवणा का जहर तेज तेजाब की तरह होता है इससे आहत व्यक्ति न कुछ बोल पाता है न कुछ खा पी पाता है उसका शरीर टूटने लगता है और तालू मे फफोला हो आता है इस समय रोगी को फिटकरी खिलाई जाती है जो फफोले को तोडकर श्वासक्रिया को सुचारू करती है मयूर का अण्डा पिलाकर भी इसका उपचार किया जाता है अण्डा पिलाने से बीमार को कै हो आती है जिससे सारा जहर बाहर निकल आता है ऐसे कई समझे बूझे लोग भी है जो फफोले को फोडकर भी रोगी को मरने से बचा लेते हैं जैसलमेर के रणधा गाव के भगवानसिंह भाटी, अणीबाई तथा चन्दनसिंह मोढा इस इलाज के जाने-माने लोग हैं जिन्होने अपने इलाज से कई लोगो को मौत के घाट जाने से बचाया है. धापूबाई नामक एक महिला ने तो अपनी नवविवाहित पुत्री को फफोला फोडकर नया जीवन प्रदान किया जिसकी कहानी आज भी इधर के लोगों की जबान पर सुनने को मिलती है

जैसलमेर से 25 किलोमीटर पिथला गाव के रावलोत भाटी के यहा जब गोमती शादी कर आई ही थी कि रात को उसे पीवणा ने पी लिया. गोमती साप के पू छ के झपट्टे से अचानक जागी तो उसने अपने सुसरालवालो से तत्काल अपनी मा को बुला लाने को कहा जो पीवणे का छाला फोडने मे उस्ताद है रातोरात ऊटगाडी लेकर पिथला से कोई 30 किलोमीटर से उसकी मा धापू लाई गई धापू ने अपनी बिटिया को उल्टी खाट के लटका अपनी अगुली से तीन बार छाला फोडा और सारा जहर बाहर निकाल उसे बचा लिया कई लोग पीवणा के रोगी को खाट के बाध उल्टा लटका देते हैं और मलमल के साफ कपडे को वटकर सींक बनाकर उससे फफोला फोडते हैं यह सारा इलाज रातोरात होता है

० बीमार के लिए जीवित कब्र :

काफी कुछ इलाज के बाद भी जब सांप का रोगी सचेत नही होता है तो उसका शरीर नीला-काला धब्बेदार होना प्रारम्भ हो जाता है चेहरे पर झुरिया

माने लग जाती हैं और रोगी हाथ-पांवों के झटके देना प्रारम्भ कर देता है. बाजवक्त ये झटके इतने जोर-जोर के दिये जाते हैं कि इनसे पांव की खुड़िया तक घिस जाती हैं छह-आठ घण्टे बाद रोगी मूर्छित हो जाता है ऐसी स्थिति मे सूर्य की रोशनी से रोगी को बचाने के लिए तीन फीट चौड़ी और छह फीट के करीब गहरी खाई खोदकर उसे गोबर-मिट्टी से लीप पोत कर बीमार को अन्दर सुला ऊपर काला कपड़ा ओढ़ा दिया जाता है और उसके बाद झाडफूक तथा तन्त्र-मन्त्र करने वाले ओझा-भोपों को बुलाया जाता है. इससे भी कई रोगी बचते देखे गये हैं

० थाली की आवाज और चमड़े की धूणी से बचाव :

जैसलमेर में वहा के मालीपाडा के रहने वाले शिक्षक मनोहर महेचा ने पीवणा साप के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करने हेतु कई गायकों-मगणिहारों तथा अन्य लोगों से मेरी भेंट कराई देवीकोट, सागड, सम, लाचना, अर्जुना आदि गावों की यात्राओं मे मिले नन्दलाल बिस्सा, जैनसिंह पाऊ, प्रेमसिंह सोढा, अजीत स्वामी, भगवानसिंह भाटी आदि की पीवणा विषयक कई आखों देखी घटनायें और इनके वर्षों के अनुभवों ने भी बहुत सारी जानकारी हमे दी.

पूछने पर कई महिलाओं ने बताया कि सोने से पूर्व वे प्रतिदिन कासी की थाली बजाकर सोती हैं. ऐसा कहा जाता है कि जहा तक इस थाली की झनकार पहुचती है उस क्षेत्र तक पीवणा प्रवेश नहीं करता है. जनसम्पर्क अधिकारी डॉ. अमरसिंह राठौड ने बताया कि पीवणा पीये को ऊट के चमडे की धूणी देकर भी ठीक किया जाता है. उन्होने यह भी बताया कि खाट पर सोई औरत की लटकी चोटी के सहारे पीवणा चढ गया पीवणा द्वारा जानवर मारे जाने के समाचार भी इन्हें प्राप्त हुए.

श्री पुरुषोत्तम छगाणी ने बताया कि होहल्ला, रोशनी, लहसुन, प्याज तथा शराब पीवणा के पक्के दुश्मन हैं. सोते समय गावों मे इसीलिये लोग अपने घरों मे प्याज बिखेर देते हैं. श्री महेचा ने भवानीदान नामक एक ऐसे झाडगर का नाम भी मुझे बताया जो नीम की डाली से मन्त्र पढते हुए पीवणा झाडते हैं तब पीवणे का जहर पत्तियों मे आ जाता है और सारी पत्तिया हरी से काली हो जाती हैं.

० पीवणा का रहन-सहन :

अन्य सांपों की तरह पीणा-पीवणा भी बिल मे ही रहता है. ये बिल रेगिस्तान मे पाये जाने वाले जाल, फोग व लाणों की जडों के पास अधिकतर बने

होते हैं. जाल वृक्ष की खोखल में भी पीणे को रहते कुछ लोगों ने देखा है.

जैसलमेर से 60 किलोमीटर अर्जुना गाव के बिरधसिंह को पीवणा के पीने पर जब गाव वाले इकट्ठे हो गये तो उनमे साप के चिन्ह को पहचानने वाले 50 वर्षीय पागी शोभसिंह हिम्मत कर अपने साथ चार अन्य साथी लेकर पीणे के चिन्ह देखते-देखते चलते रहे और 7 किलोमीटर दूर जाकर एक बिल मिला जिसे उन्होने खोदा तो उसमे से बारह साप निकले इनमे से केवल एक ही पीवणा था. शोभसिंह ने सभी साप मार डाले. इससे यह स्पष्ट है कि यह सांप कभी अकेला नहीं रहता.

० पीवणा मारना आसान नहीं :

पीवणा को मारना बडा आसान नही है. यह बडा चालाक चोर होता है. नदलाल व भगवानसिंह ने तो 30-35 सांप मारे हैं मनोहर महेचा को इन्होंने बताया कि यह रबड की तरह बडा लचीला होता है. कई लाठिया टूट जाय तब यह मरता है. मारते वक्त यह अपनी ठोडी अन्दर की तरफ घुसा लेती है. जब तक इसकी ठोडी नही कुचली जाती, यह मरता नहीं.

लाठी मारने पर इससे पी–पी की ध्वनि निकलती है. और जब इसका शरीर फूट जाता है तो बडी भयकर दुर्गन्ध आती है. यह दुर्गन्ध इतनी भयकर होती है कि वहा खडा आदमी उसके मारे बेचैन हो उठता है और उसे उल्टी तक होने लग जाती है.

• पेड़ पर लटके सांपों के कंकाल :

अपनी यात्रा मे इन सापो के अस्थि–पजर पेडो पर लटके भी देखने मे आये सांपमारक बाबूसिंह ग्रामसेवक, देवीकोट स्कूल के प्रधानाध्यापक सैयद-अली, समरथराम देशान्तरी, भेड ऊन विभाग के ऊंट सवार शैतानसिंह ने बताया कि गांवो मे साप मारकर उसे ऊँट के गले तक हल को जोड़नेवाली लकडी के अतिम हिस्से मे छेदकर निकालते हैं और उसके बाद उसे आग मे जलाकर या तो पेड पर लटका देते हैं या जमीं मे गाड देते हैं

रेगिस्तानी इलाको मे पीवणा से अधिक डरावना, भयानक और खौफनाक और कोई अन्य प्राणी नही है. ☐

ढूलीफूंत्ये

ढूलीफू त्ये यानी गुड्डे गुड्डो बाल बच्चो के प्रिय खिलौने तो हैं ही पर उनके अपने अजीज मित्र, दोस्त, सखा भी रूई कपडा और लकडी के बने इन ढूलीफू त्यो को खेलते रमते देखने से पता लग जायेगा कि ये निष्प्राण कहे जाने वाले खिलौने बच्चो के साथ कितने प्राणवान बच्चे बन जाते हैं बालमन उन्हें अपने जैसा ही समझता है उनसे सवाल जवाब करता है, उन्हें खिलाता पिलाता ओढाता पहनाता सुलाता थपकिया देता है कभी बच्चे इन्हीं ढूलीफू त्यो के साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं, जैसा उनके साथ उनके माता पिता करते हैं. उन्हें मनुहार कर-कर वे खिलाते पिलाते हैं, गोदी में लेते हैं, थपकिया देते हैं, आखो मे काजल डालत हैं, तो कभी उन्हें लेकर सोने सुलाने का उपक्रम करते हैं.

हमारे यहा तो ये ढूलीफू त्ये देवी देवताओ के रूप मे भी स्वीकारे जाते हैं. अन्य देवी देवताओ की तरह बरसात के चार महीने ये भी शयन करते हैं, चुप्पी साधते हैं तब बच्चे-बच्ची इन्हें क्यो छूएँ ! इन ढूलीफू त्यो का आपस मे बडे भारी रग ढग और हरख उत्साह से ब्याह भी रचाया जाता है.

अपने ही घर की इनसे जुडी बात करू तो मेरी बच्ची कविता जब छोटी थी तब एक दिन उसे उसकी ढूली की याद हो आई. बिस्तर से उठते ही वह सीधी अपनी उस पेटी की तरफ लपकी जिसमे उसने उस गुडिया को छिपा रखा था. हम लोग चाय पी रहे थे उसने आते ही अपनी गुडिया के लिये चाय और चम्मच मांगा चाय और चम्मच देते हुए उसकी अम्मा की दृष्टि जब उस गुडिया पर गई तो उसे नगी पाकर वह झल्ला उठी और कहने लगी कि तत्काल इसे कपडे पहनाओ. हमने भी सोचा बरसात मे गुडिया कभी नगी नहीं रहती. पाँच सात बरसो से पानी के लाले पड रहे हैं. नगी गुडियाएँ डाकनियाँ बन जाती हैं. और पानी रोक देती हैं कविता ने चाय का आधा कप छोडा और पहले गुडिया को साडी घघरी पहनाई.

मैं सोचता रह गया, मुझे याद हो आया यह मौसम देवी-देवताओ के सोने का है, कोई देवताओ को छूना नहीं पाबूजी देवजी की पड़ें बनाकर अपनी आजी-

बनाई जाती थी. उनमे चमकीले कांच और सितारे लगाये जाते थे. हाथ पांव के सभी जेवरो मे न केवल मोतियो की लड़ियो बल्कि सोना चांदी के तारों द्वारा स्वय के हाथो से बनाई हुई कड़ियो का प्रयोग करते थे इस शृंगारिक तैयारी से पूर्व बच्चे स्वयं उनकी शादियाँ तय कर लेते थे. उनके पीछे माता-पिताओं की पूर्ण सहमति एव स्वीकृति रहती थी. बच्चे स्वय बाजार से सब सामग्रियाँ खरीदते थे. उनका विधिवत हिसाब रखते थे घर की समस्त लिपाई-पुताई एवं सफेदी करते थे. जिस घर मे ढूला-ढूली की शादी रचाई जाती थी उस पर स्वय बच्चे चित्राम माडते थे अथवा उस पर सांस्कृतिक हाथी घोड़े कलश एव आरती धारिणी पुतलियाँ तथा चवर और छत्रधारी द्वार-रक्षक बनाते थे. इस काम मे आवश्यकतानुसार तत्सम्बन्धी प्रवीण कलाकारो से सहयोग लेत थे. शादी के निमन्त्रण अत्यन्त सुन्दर ढग से कागजो पर स्वय लिखकर अपने मित्रों मे स्वयं बाँटते थे शादी से पूर्व और बाद के जितने भी औपचारिक एव अनुष्ठानिक भोज आदि होते थे उनके पकवान बच्चे स्वय बनाते थे.

ढूला के घर बरातियो के बैठने आदि की अत्यंत कलात्मक व्यवस्था की जाती थी तथा ढूली के घर माडा सजाया जाता था. तोरण बांदने की समस्त व्यवस्था की जाती थी तथा बच्चे स्वयं तोरण बनाते थे दूल्हे के घर से बाकायदा बारात सजाकर बच्चे दुल्हन के घर पर जाते थे जहा तोरण की रस्म पूरी की जाती थी अत्यत कलात्मक ढग से सजाए हुए मडप मे ढूला-ढूली बिठाये जाते थे. हवन-यज्ञ आदि हुआ करते थे तथा कहीं-कही सम्पन्न घरो मे तो यह विवाह ज्योतिषी द्वारा सपन्न किया जाता था उस समय यह भी धारणा था कि ढूला ढूली के अत्यत सफल एव आनन्ददायी विवाह बच्चों के सुखद एवं सफल भावी वैवाहिक जीवन के द्योतक भी हैं कहीं-कहीं तो इस सुखद कामना के लिए ढूला-ढूली का विवाह सस्कारवत भी अनिवार्य समझा जाता था.

ढूला-ढूली का यह विवाह केवल एक ही दिन मे समाप्त नही हो जाता था. जिस तरह आज से कई वर्ष पूर्व राजस्थानी विवाहो मे पूरा एक महीना लगता था उतनी ही अवधि ढूला-ढूली के विवाह मे भी लगती थी. ये विवाह बहुधा गर्मी मे रचाये जाते थे. काफी समय पूर्व विवाह की बातें चलती थी. पूर्ण निश्चय होने के बाद ढूला वाले अपने घर मे विवाह की तैयारी करते थे और इसी तरह ढूली वाले के घर में भी सब साज-सज्जाएं जमाई जाती थी. जेवर, वेशभूषा, मिठाई आदि का लेन-देन भी उसी तरह होता था जिस तरह वास्तविक मानवी विवाह मे होता है. ढूला-ढूली के घर पर शादी के गीत लड़कियो द्वारा उसी तरह गाये जाते थे जिस तरह मानवी विवाहों मे प्रौढ

स्त्रियों द्वारा गाये जाते हैं इन बालिकाओं को विवाह सम्बन्धी गीत याद करने पड़ते थे तथा उन्हें समस्त रीति-रिवाजों से अवगत रहना पडता था.

ढूला-ढूली के ये विवाह किसी समय बच्चों के खाली जीवन के लिये प्राण थे उनका सारा समय किसी न किसी उपयोगी रचनात्मक कार्य में लगा ही रहता था अधिकांश में लडकियां ही ये सब विवाह रचाती थीं तथा लडके घर की बनावट, सफाई, पुताई तथा रंगाई आदि में मदद करते थे यही नहीं सारे घर के प्रौढ स्त्री पुरुष भी इन ढूला-ढूली के विवाहों में व्यस्त हो जाते थे."

न केवल राजस्थान में अपितु राजस्थान के बाहर भी ये ढूला-ढूली बडे लोकप्रिय रहे हैं. तुलसी विवाह की तरह इन गुड्डे-गुड्डियों के विवाह में भी हजारों रुपये आज भी खर्च किये जाते हैं कहीं-कहीं तो इनका विवाह नए विवाह से भी सवाया अधिक साजसज्जा, रस्म अदायगी और अच्छे विधि-विधान पूर्वक समाप्त होता है. इस सम्बन्धी पत्रों में प्रकाशित दो खबरें देना यहां उचित होगा—

गुड्डे–गुड्डियों का विवाह

कानपुर. यहां सफेद कालोनी जूही में छेदी की अम्मा की गुडिया व बागड़ के गुड्डे का विधिवत विवाह हुआ बारात निकाली गई आतिशबाजी हुई. द्वारचार, जलपान, विवाह, दानदक्षिणा, दहेज, नृत्यगान व विदा के कार्य सम्पन्न हुए और अब वधू को वापस लाने की तैयारियां जारी हैं हजारों लोगों ने इस विवाह में किसी न किसी रूप में शिरकत की.

–राष्ट्रमित्र 20-6-71

गुड्डे गुड्डी की शादी में 15 हजार खर्च

सांगली (महाराष्ट्र) 30 अगस्त (यू एन. आई) राजीव तथा श्याम की कल यहां धूमधड़ाके और तड़कभड़क के साथ शादी हो गई.

बरात में सजे हुए हाथी, घोडे और ऊंट भी थे इनके अलावा बाजा बज रहा था. वर तथा वधू अच्छी पोशाकों में थे. वे यहां के किंडरगार्डन में स्कूल में पढ़नेवाली भाग्यश्री तथा विजयसिंह के गुड्डे गुडिया थे.

लडकी है. इस शादी विवाह पर सिर्फ 15 हजार रू. खर्च हुए. नव विवाहित 'जोडे' को भेंट मे सोना तथा चांदी मिला. लगभग 500 व्यक्तियो को निमन्त्रित किया गया था जिसमे दुल्हन की 'मां' की लगभग दो सौ सहपाठी भी थी. उन्होंने दावत खाई और आशीर्वाद दिया.

—राजस्थान पत्रिका 30-8-71

विवाह का यह विधिविधान यही समाप्त नही हो जाता. ढूलीबाई को सुसराल पहुचाने के बाद पुन उसे पीहर लाई जाती है और इस खुशी मे घर-घर लड्डुओ के लेणे बाटे जाते हैं. आज इन ढूलेफूल्यो का इतना चलन नही है तो स्वाभाविक है, बच्चो मे भी वह कलादृष्टि और जीवन-कौशल नहीं रहा. ढूला-ढूली के विवाह नहीं रचते हैं तो आगे जाकर बच्चो के वैवाहिक परिणाम भी सामने आ रहे हैं. जिन्होने अच्छे तन-मन से ढूली-फूल्ये रमाये हैं वे अपने जीवन मे भी अच्छी तरह रमते-धमते देखे गये हैं परन्तु जिन्होने इनका कभी नामठाम ही नही सुना उनका तो अल्ला ही मालिक है.

इन ढूलीफूल्यो—गुड्डे-गुड्डियो का अस्तित्व कब से है ? कहा जाता है जब बच्चा अस्तित्व मे आया तब से है. ससार मे जगह-जगह अनेक भागो मे जो खुदाई हुई है उससे यह पता चलता है कि बहुत पहले भी बच्चे हड्डियो से बनी गुडियाओ से खेला करते थे मिश्र की एक पुरानी गुडिया ऐसी मिली जो लकड़ी की बनी विविध मोतियो से सजी हुई है. प्राचीन यूनान मे तो ऐसी गुडियाएँ मिली जिनके सिर, बाहें, टांगें धागो से बधी रहती थी और उन्ही से सचालित भी होती थी. कठपुतलियों की तरह इन धागो को खीचने पर वे अपने हाथ पाव हिलाती थी. स्वय मेरी माताजी ने ऐसी गुडियाएँ अपने बच्चों के लिए बनाई जो धागा खीचने पर अपने हाथ पांव को हिला नृत्य का ठुमका भरती थी. एस्कीमो लडकियां ह्वेलो मछली की हड्डी काट-छांट-तराश कर अपनी गुडिया स्वय तैयार करलेती हैं जबकि मेक्सिको की लडकिया मिट्टी की पकाई गुडिया खेलकर मनोरंजित होती हैं.

गुड्डे गुड्डियों का यह शास्त्र भी अपने आप मे बडा दिलचस्प और बच्चो की मानसिकता को जानने-समझने का पूरा इतिहास हैं. हमारे यहा यह अध्ययन बहुत ही कम हो पाया है जिसकी ओर हमारा ध्यान जाना जरूरी है. शिक्षा के क्षेत्र मे भी इनका उपयोग—प्रयोग नई रोशनी दे सकता है.

लीलड़ा नारेलां लड़लूंबजो

नारियल को राजस्थानी मे नारेल कहते हैं यह फलो मे श्रीफल गिना जाता है. जितना सात्विक,पावन, गुणकारी तथा फलदायक फल नारियल माना जाता है उतना अन्य कोई फल नही. देखिये न कहा लगता है यह ! न धरती पर न आसमान मे दोनो के बीच कहा से कैसे आजाता है इसमे पानी ! कितना शुद्ध और गुणकारी है यह पानी ! इसीलिए प्रत्येक देवी-देवता ने इसे ग्रहण किया है फलो मे यही एक ऐसा फल है जो सर्वाधिक गुणकारी, पौष्टिक और मागलिक माना गया है.

प्राय प्रत्येक महत्त्वपूर्ण संस्कारो तथा धार्मिक अनुष्ठानों मे सबसे पहले नारियल की ही शरण लेनी पडती है यह प्रत्येक देवी-देवता के चढाया जाता है बाल-जन्म पर घर-घर मे नारियल की चटकें बाटी जाती हैं

सगपण अथवा सगाई करने पर सबसे पहले 'रुपया नारियल' झेलाया जाता है. बडे घरो मे इस अवसर पर सोने-चादी के नारियल झेलाने की प्रथा रही है. विवाह के पूर्व वर-वधू वाले अपने सबधियो के वहा आणा लेने जाते हैं तब उन्हें जवारी के रूप मे विवाह मे आने का स्वीकृति सूचक नारियल अथवा रुपया नारियल दिया जाता है शादी मे खारक, मू गफली, दाख आदि मिलाकर जो तजाना बनाया जाता है उसमे खोपरे की चटकें मिलाई जाती हैं चीढी भेजते समय वस्त्राभूषणों के साथ नारियल भेजा जाता है कुम्हार के यहा से चाक लेने जाते समय घी, गुड, मकई, जौ, सुपारी, ककू आदि के साथ नारियल लेजाया जाता है शादी के दिनों में वर-वधू जहा-जहा भी जीमने जाते हैं, एक-एक नारियल प्राप्त करते हैं यह नारियल उनके साथ जिमने वाले बन्यावडे सभाले रखते हैं अन्य लोग भी वर वधू की खोल मे नारियल भरते हैं. वर-वधू के घर रवा, चावल, वडी आदि को माऽमटलियो में पतासी, पइसो के साथ एक-एक नारियल रखा जाता है जो वेनकुंवायो मे बाट दिया जाता है

शादी करने जाने से पूर्व किये जाने वाले पाणी हमोवने के दस्तूर मे पाणी

हमोवने वालो को नारियल दिया जाता है. बरात के साथ जो पडरा लेजाया जाता है उसमें भी नारियल लेजाया जाता है. मलणी मे वधू पक्ष वालो की ओर से जितने भी बाराती होते है उन्हें एक–एक नारियल दिया जाता है. यह 'मिलणी का नारेल' कहलाता है. बरात को सीख देने के रूप मे वर के पिता को हल्दी मे किया नारेल दिया जाता है जो पीला नारेल कहलाता है. विवाह मे हाथ पावो मे मेहदी के नानाप्रकार के माडनें मंडवाये जाते हैं. ये माडनें जिन औरतों से मडवाये जाते हैं उन्हे एक-एक माडनें का एक-एक नारियल दिया जाता है. इनके अलावा भी विवाह मे कई ऐसे प्रसग-दस्तूर होते हैं जिन पर एक-एक नारियल दिया जाता है. इनमे दोवडा बधाई, चाक के दिन राखी बधाई, बडा दोवड़ा बधाई का एक-एक नारियल दिया जाता है. इसके अलावा थम, घोडो, माडपा तथा तोरण लाने वाले को भी नारियल दिया जाता है. कुम्हार, नाई, सेवग, घोबी, ढोली, नगारची, बॉवियावाला आदि आइत तथा कमीणो का भी नारियल लगता है.

विवाह के पूर्व रोडो तथा विवाह के बाद भेरू पूजते समय भी नारियल बधारा जाता है. शादी पर अन्तरवास्ये मे नारेल का गोला बाधा जाता है. नूत रखने पर प्रत्येक को जवारी के रूप मे नारियल दिया जाता है. दीवाली तथा जापा आणा पर जब-जब भी जमाई आणा लेने जाता है उसे नारियल दिया जाता है. बहू को शादी के बाद जब उसका भाई लेने जाता है तो सीख के रूप मे उसे नारियल दिया जाता है होली पर बालिकाएँ होलीमाता के आभूषणो के रूप मे गोबर के जो बडकुल्ले बनाती हैं उनमे एक नारियल भी बनाया जाता है. होली की झाल मे भी नारियल निकाला जाता है. होली पर भील महिलाएँ आनद उच्छव मे नाचती गाती राहगीरो की राई रोक लेती हैं और तब तक उन्हे रास्ता नही देती हैं जब तक कि राहगीर उन्हे नारियल अथवा गुड नहीं थमादेते. इसी अवसर पर तीसरे दिन इन्ही महिलाओ मे नेजा नामक नृत्य उत्सव आयोजित किया जाता है जिसमे एक खभे पर नारियल लटका कर ये महिलाएँ उसके चहूं ओर अपने हाथो मे छडिया तथा बटदार कोडे लिए नाचती हैं. पुरुष अपनी नृत्य भूमिकाओ मे ज्योंही नारियल लेने घेरे मे आते हैं, उन्हे ये महिलाएँ छडियो कोडो से पीटती हुई उन्हें नारियल प्राप्त करने से रोकती हैं. सक्रात में गेंद की बजाय नारेल भी खेला जाता है जिसे 'सकरात्या नारेल' कहते हैं, रातिजगे मे पूर्वज की मूरत बनाने वाले सुथार को नारियल दिया जाता है. जैनियो मे कोई-कोई तपस्या पूर्ण करने पर पारणे के दिन घरो-घरो मे नारेल बाटते हैं. तीर्थयात्रा से लौटते समय गगोज में जब रस्ते में गगोजी महिला रूठ

जाती है तो नारेल फोडकर उसे मनाया जाना है. मृतक के श्मशान में जाते समय उसके सिरहाने नारियल रखा जाता है. नारियल का होम कराया जाता है साधु सन्यासी तथा श्रीमतों की मृत्यु पर उन्हें चदन-नारियल का डाग दिया जाता है

मध्यप्रदेश के भिलालो के इंदल नृत्य मे मध्य पाट पर गडी हुई लडकी के सिरे पर नारियल रखा जाता है. इसे लेने के लिए पुरुष नृत्यक छडी पर चढना है और इसके इर्दगिर्द नृत्यमुद्राओ में घूमती हुई स्त्रिया उसे रोकती हैं. चित्तौड के पास बसी मे देवझूलणी एकादशी को लक्ष्मीनाथ के मन्दिर के पास वाले कुंड मे नारियलों का खेल खेला जाता है. इसमे एकी की सख्या मे नारियल फेंक दिये जाते हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिए भील कुंड मे कूदते हैं और सैकडो की सख्या में उपस्थित जनसमूह काचरे टीमरू आदि की वर्षा कर भील को नारियल लेने से रोकते हैं. लोकजीवन मे यह नारियल इतना लोकप्रिय हुआ कि इस सबधी कई गीत, कथाएँ, पारसियाँ तथा कहावतें सुनने को मिलती हैं जवाई को जवारी स्वरूप नारियल देते समय औरतें—

"यो लो जवाई सा म्हारी जवारी रो नारेल
दूध री जात, दही री जात, गडगडाट करतो
खोटोखरो निकले तो आपरे करमा री बात'

कहकर नारियल का माहात्म्य प्रकट करती हैं. कहावतो मे 'खोटो नारेल होली देवरे' तथा पारसियो मे—

(अ) भींत मे भेरूजी बोले.

(ब) दाडीवालो छोकरो जी हाटूं हाट बिकाय.

(स) डूगर मार्यो मिरगलो लाया गाडी मे गाल
खायो बामण बाणिया पायो जुग ससार.

(द) कचोलें मे कचोलो बेटो बाप से भी गोरो
नामक पारसियाँ अधिक सुनने मिलती हैं.

एक गीत मे एक राजा दाई को कहता है कि लडका होने पर तुम्हे सौलह सोने के तथा अठारह रोकडी रुपये दूंगा और नारियलो की पोट तुम्हारे सिर पर रखवाकर नगारो सहित तुम्हें घर पहुँचवाऊंगा—

ए दाई सोले सोनैया एक आठ रा रोके देवा हां

ए दाई माथै नारैला रो पोट नगारा रो ठौर बेहा.

एक अन्य गीत मे बहिन अपने भाई के लिए नारियलो की भाति फलफूलने की बात बडी ही खूबी से व्यक्त करती है—

'बडज्यूं बधजो वीरा दूब ज्यूं परसजो

लीलडा नारेला लडलू बजो.'

पानी वाले नारियल को 'पाणीस्या नारेल' कहते हैं इसका एक नाम 'दूध्या नारेल' भी है. मालवी के एक गणगोर गीत मे 'हरिया नारेल' का उल्लेख पाया जाता है 'लापसी रदाऊं ए गगा माता लचलची ऊपर हरिया नारेल.' जिस नारियल की गिरी अन्दर से बजती है उसे 'बाजण्या नारेल' कहते हैं. जो नारियल खराब होता है वह 'खोटा नारेल' कहलाता है. नारियल की अन्दर की गिरी को 'खडी' कहते हैं उस खडी के टुकडे टुकडे करने को उसकी चटकें करना कहते हैं नारेल का गोला 'खोपरा' कहलाता है छोटा नारियल 'डोड्या नारेल' के नाम से सबोधित होता है खडी के ऊपरवाला कठोर हिस्सा 'काचरी' कहलाता है. उसको चूडियां बनाई जाती हैं ऊपर ही ऊपर नारियल की जटाएं होती हैं जटा वाला नारियल 'चोटियालो नारेल' कहलाता है इन जटाओ की रस्सिया बनाई जाती हैं जो अत्यधिक मजबूत होती हैं.

नारियल फोडने को 'नारियल बधारना' कहते हैं पाणिस्ये नारेल में कभी-कभी उसका बीज भी निकलता है. ऐसी प्रसिद्धि है कि इसे खाने पर औरतो का बाभपन दूर हो जाता है. कापडे के साथ जिस तरह काचली प्रयुक्त होता है (काचली-कापडा) उसी प्रकार नारियल के साथ भी शब्द जुडे हुए मिलते हैं यथा—रीपो-नारेल, ककू नारेल, लच्छो-नारेल, खोपरा आदि-आदि.

चैत्र में लगने वाले केलादेवी के मन्दिर मे जितने नारियल शायद ही उतने कहीं अन्यत्र चढाये जाते हो सन् 1975 मे एक हजार रुपये मूल्य के तीस हजार नारियल का चढावा आया बाईस हजार से अधिक नारियल की बिक्री से केलादेवी ट्रस्ट को पांच सौ साठ रुपये की आय हुई. यह आय प्रति वर्ष बढती ही

हिचकी घड़ी-घड़ी मत आव

हिचकी किसी को स्मृति-विशेष मे ही आती है जब किसी को किसी की ओल्यू आती है तब हिचकी का आना प्रारम्भ होता है किसी के बार-बार स्मरण करने पर हिचकी भी जोरो से आने लगती है जिसे राजस्थानी मे 'दूनी डेढ़ी' हिचकी आना कहते हैं. इसे बन्द करने के लिये न कोई डाक्टरी इलाज है और न कहीं औषधालयों में औषध ही इसकी केवल यही एक मात्र दवा है कि अपने परिजन जो कि समय बे समय दूर बैठ कभी कभी याद कर लिया करते हैं, उनके बारी-बारी से नाम लेकर एक एक घूट पानी पिया जाता है जिसके नाम के आगे हिचकी आना बन्द हो जाता है तो यह समझ लिया जाता कि उसी ने याद किया है जिससे हिचकी आना बन्द हो गया है और यह बात प्राय सही भी निकलती है राजस्थानी म हिचकी को चितरना' अथवा 'वदणी' कहते हैं.

इस हिचकी का दो रूपों में आना होता है यदि किसी से मिले बहुत समय हो गया हो तब उसके याद करने पर अथवा जो अभी अपना साथ छोडकर बाहर जा रहा है उसके निश्चित स्थान पर पहुचकर याद करने पर हिचकी आती है उसे सुरक्षित पहुच की हिचकी कहकर सबोधित करते हैं.

बिना तार अथवा डाक, किसी के साथ मौखिक या लिखित समाचार भेजते हुए जादू सी यह हिचकी समय बे समय भूले भटको की सुध ले ही लेती है. इसे लाने के लिए किसी प्रकार का कोई उपक्रम नहीं करना पडता यह तो हृदय के पारस्परिक अगाढ स्नेह के कारण अपने आप ही बरसाती बदली की तरह उमड पडती है

लोकगीतो म विशेषकर बनासा, केसरिया, पातलिया, साइना, बादलिया, राइवर की याद रूप मे जो हिचकियां आती हैं उन्ही के उल्लेख की प्रधानता मिलती है

नव वधू को छोड पति जब बाहर जाता है और वहा किसी अन्य युवती से प्रेम करने लग जाता है परन्तु कभी-कभी जब वह उसे याद करता है तो उसे

हिचकियां आने लग जाती हैं. वह अपनी सास से कहती है कि सासुजी ! बाजरी के नन्हे-नन्हे कणो को चुगने के लिए जिस प्रकार चिडिया आती है और पुन उड जाती है उसी प्रकार आपका पुत्र भी कभी-कभी आकर मुझसे मिलता है और पुन अनमना सा होकर चला जाता है कुए की मेढकी अथवा गेड की कटुकडी की तरह कभी तो आपका लाडला आता है, मेरे सग सोता है और कभी गायब हो जाता है और सोने को मना कर देता है.

कुआ मेयली कटुकडी रे डूबे ने तर जाय
सासू आपरो डोकरो रे माणे ने नट जाय
डोढो आवे हिचकी... ....

जब बार-बार कहने पर हिचकी आना बन्द नही होती है और हिचकी की झडी लग जाती है तब वह तग आकर हिचकी से कहती है कि हे हिचकी ! तू बार-बार मत आ, तेरे बार-बार आने से हो सकता है, मेरे प्रियतम अत्यन्त ही दुखी हो रहे हो

म्हारे साइनारो जीव दुख पावें, हिचकी घडी मत आवे.
यही नही वह आगे यह भी कहती है कि—

राजा बोतल मे चितारे राजा प्याला मे चितारे
या पीवतडा दूणी आवे.
राजा थाल मे चितारे ढोला नवेले चितारे
या जीमतडा दूणी आवे.
राजा जाजम पे चितारे, ढोला सेजा मे चितारे
या पोढत दूणी डोढी आवे.
हिचकी घडी ए घडी मत आवे.

कभी-कभी अत्यन्त जोर से हिचकी का आना प्रारम्भ हो जाता है लाख कोशिश करने पर भी वह बन्द नही हो पाती है, ऐसी अवस्था मे न भोजन ही ठीक प्रकार किया जा सकता है, न पानी ही पिया जा सकता है, तब वह गा उठती है—

प्रियतम ! रह रह कर हिचकियां आ रही है. न जाने क्यो ? मुझे भोजन भी अच्छा नही लग रहा है, आपकी बहुत याद आ रही है.

जमाई जब ससुराल वार त्योहार लेने जाते हैं तो वहा की औरतें मजाक रूप म गीत- बोलो द्वारा पत्नी की ओर से हिचकी गीत गाना प्रारम्भ करती हैं इन गीतो में शिष्ट हास्य के साथ-साथ मनोरजन की प्रधानता देखने को मिलती है

जमाईसा, आपकी श्रीमतीजी तो आपको याद कर शरीर से अत्यन्त पीली पड गई है और इतनी पीली हो गई है कि पीलिया अथवा हलदिया रोग होने की आशका है

ओल्यू करी पीला पड्या ओ सारी रैंण रम्या
ओ जी लोग जाणे हलद्यो रोग म्हारा सा पधारिया ओ सारी रैंण रम्या

इसलिये ओल्यू को तो आप कसकर अगोछे मे बाध लीजिये तथा प्रीति को पांवो मे सम्भाल कर रख लीजिये

जब जमाई ससुराल से आज्ञा लेकर पुन अपने घर जाता है तब औरतें एक दिन पहले अपने प्यारे जमाई को सुनाने के लिये स्वत गा उठती हैं—

आछी-आछी पाना अणा जमाया ने सोवे
पेचा ऊपर म्हारा बाई रोझ्या रा जमाई सा
आप चितारो बाई ने नत आवे हिचकी
केसरिया रो नाम लेता रेई जावे हिचकी
पातलिया रो नाम लेता रेई जावे हिचकी

जमाईसा, आपतो बाईसा को प्राय हमेशा ही याद कर लिया करत हैं क्योकि इन्हें हमेशा ही प्राय हिचकी आ जाया करती है और जब ये धीरे से 'मारुजी चितारे तो वदणो बन्द वेई जाजै' कहकर पानी का घू ट गले उतारती है तो टपाक से हिचकी आना बन्द हो जाता है. उसके बाद हम सभी मजाक करती और इन्हें चिढाने के लिये बार-बार दोहराती—

वाह-वाह सोनारा छोगा बन्द कीधी हिचकी
वाह-वाह मोत्यां री माला बन्द कीधो हिचकी
केसरिया रो नाम लेता रेई जावे हिचकी.

इन हिचकी गीतो की अपनी विशेषता है और वह यह कि इनकी राग भी अपने ही ढग से निराली होती है. जिस तरह रह-रह कर हिचकी आती है उसी तरह इन गीतो की राग भी रह-रह कर मचलती, इठलाती,बलखाती जाती है जैसे हिचकी स्वय अपने साथ गीत लेकर आई हो और गा रही हो—

केसरिया रो नाम लेता रेई जावे हिचकी,
पातलिया रो नाम लेता रेई जावे हिचकी.

रह रह कर ज्यादा हिचकी आना ठीक नही समझा जाता इससे आदमो की मृत्यु तक हुई देखी गई है. अतः ऐसी हिचकी को बन्द करने के कई ईलाज किये जाते हैं परन्तु जब किसी प्रयत्न से भी हिचकी बन्द नही होती है तो कोई मार्मिक अथवा दुख भरा सवाद सुनाया जाता है. इतने पर भी यदि हिचकी नही रूकती है तो उसे फिर चिलम पीने को कहा जाता है.

कुछ वर्ष पूर्व ग्रीष्मावकाश मे मेरे बडे भाई, डॉ नरेन्द्र भानावत उदयपुर आए. अचानक एक दिन उन्हे बडी जोर की हिचकी आनी प्रारम्भ हुई. अनेक उपाय किये मगर उनकी हिचकी नही रुकी हम बडे परेशान हुए. अन्त मे एक ग्रामीण वृद्ध के कहे अनुसार मैंने उन्हे अपनी माताजी के सख्त बीमार होने की. तार आने की सूचना दी इस समाचार से भी उनकी हिचकी पर कोई असर नही हुआ. अन्त मे उसी वृद्ध सज्जन के अनुसार उन्हे बीडी पीने को कहा गया. पहले कभी बीडी नही पीने के कारण प्रारम्भ मे तो उन्होने बहुत टाल-मटोल किया परन्तु जब उन्हे बहुत समझाया तो वे इसके लिये तैयार हो गये. बीडी लाई गई और उन्होंने उसके जोर-जोर से कश खींचने प्रारम्भ किये चार पाच कश लिये. धुआं उनके मुह में गया कि तत्काल उनकी हिचकी जाती रही. इस बात पर सभी लोग आश्चर्य करते रहे और आज भी जब कभी हिचकी की बात आती है, बीडी का प्रसग ठहाका पैदा कर देता है.

पिछले दिनो एक इसी तरह की मगर पीडादायक हिचकी मेरे एक समधी को आ लगी. कई तरह के घरेलू और अस्पताली इलाज कराये गये पहुचे हुए डाक्टरो का भी इलाज चला मगर हिचकी गई नही. कुछ खाना भी नसीब नहीं होता. खाया तो निकला, पिया तो निकला. न बैठा जाये न सोया जावे, लगातार छह-छह आठ-आठ घण्टा हिचकी दौर ऐसा चलता कि प्राण हथेली मे आ जाते सबको बडी परेशानी हुई तब एक दिन मेरे एक मिलने वाले मित्र के सामने यू ही यह जिक्र छिड गया. जिक्र क्या छिडा, उस मित्र ने अपने एक

रिश्तेदार की ऐसी ही बीमारी की दास्तान सुना दी और अन्त मे सनवाड की सतीमाता के दर्शनार्थ जाने को कहा, जहा वे स्वय जा चुके थे और उस बीमारी का इलाज पा चुके थे. सनवाड उदयपुर जिले की प्रसिद्ध मण्डी फतहनगर से लगा कस्बा है.

फलत मैं भी अपने रिश्तेदार को लेकर (25–9–83) वहा पहुचा. ये सतीमाता वहा के निवासी श्री देवीलालजी तानेड के परिवार से सम्बद्ध हैं. वहां जाकर पता लगा कि ऐसी बीमारी के कई व्यक्ति दूर-दूर तक से वहा सतीजी के स्थान पर आते हैं और ठीक होकर जाते हैं स्वय देवीलालजी ने बताया कि माताजी की सब पर कृपा रहती है एक बार तो कोई कैसा ही मरीज हो, यहां आते ही स्वास्थ्य लाभ करने लग जाता है कई किस्से भी सुनाये. एक बार एक ऐसी महिला यहा लाई गई जिसको हिचकिया इतनी जोर-जोर से आती रही कि एक-एक किलोमीटर तक उसकी आवाज सुनी जा सकती थी.

जब सब ओर से वह महिला निराश हो गई तब वहां माताजी के देवरे लाई गई. करीब दस दिन तक माताजी की ही शरण रही पर उसकी हिचकी बिल्कुल बन्द नहीं हुई तब माताजी को ही बुरा भला सुनाना प्रारम्भ कर दिया यह सुनते ही सती माताजी तानेडजी के शरीर मे प्रविष्ठ हुए और बोले– 'इतने दिनो तक यहा क्यों पडी रही, चले जाना चाहिये था. इस स्थान को छोड फिर देख तू ठीक होती कि नहीं ' माताजी का यह कहना हुआ कि महिला वहा से चली तो उसके बाद उसे कभी हिचकी नही आई ऐसे कई किस्से सतीमाताजी के, रोगियो के भरे पडे हैं. गाव की आम जनता भी इन करिश्मो-किस्सो से परिचित है.

श्राद्धपक्ष मे हमारे जाने के कारण मागीलालजी ने कहा कि इन पूरे पद्रह दिनो मे माताजी का न तो धूप ध्यान होता है न उनका भाव आता है. श्राद्ध के ब द नवरात्रा मे भी माताजी नही पधारते हैं अत उसके बाद ही आप आइये. इस पर मैंने उनसे कहा कि वैसे हम लोग बाद मे तो आयेंगे ही पर यहां माताजी का नाम लेकर हमारा आना ही सार्थक होना चाहिये. इस पर उन्होने भी यही कहा कि यहां आने वाले प्रत्येक की बीमारी माताजी पकड लेती हैं अतः माताजी को धूप नही भी लगती है और उनका पधारना नही भी होना है तो भी इनकी हिचकी तो जाती रही समझिये.

हमे मजबूर हो वहां से लोटना था पर लोटने से पूर्व यह उचित समझा गया कि आये हुए माताजी के स्थान जाकर धोक तो दे दी जाये **अतः हम पास**

ही तालाब के किनारे माताजी के स्थान पर चले गये तातेड़जी भी वहा आ पहुचे थे. हमने वहा जाकर देखा कि नीम के वृक्ष के पास दो स्थान हैं. ऊंची चबूतरियो पर वृक्ष के पास वाला भतीजी का और उसके पास वाला मुवाजी का.

पूछने पर श्री मांगीलालजी ने बताया कि कोई 500 वर्ष पूर्व जब मुवाजो को लेने फोफाजी आये तो यहा उनकी मृत्यु हो गई यह दीवाली का दिन था. इन मुवाजी को सत चढा और वे उन्हे लेकर इस स्थान पर आये और अपनी गोद मे ले बैठ गये तो अचानक अपने आप ज्वाला फूटी और दोनो उसमे समाविष्ट हो गये तब से उनकी धाम ही चल निकली.

उसके बाद भाद्र शुक्ला सप्तमी को जब भतीजी ने यहां अठाई (आठ दिन निहाहार रह) का पारणा किया तो उसी दिन उनके पति की पगडी उडकर यहां आई तब मुवाजी के स्थान के पास ही भतीजी पगडी को अपनी गोद मे ले सती हो गई.

तब से दीवाली तथा भादवी सातम को यहां विशेष धूपध्यान होता है और बडी चहलपहल रहती है. भूतप्रेत डाकन चुड़ैलन वालो को भतीजी ठीक करती है और बडी बीमारी वालो को मुवाजी.

श्री तातेड ने माताजी पर से मली (सिन्दूर) लेकर दी और कहा कि सप्तमी को गौ मूत्र छिड़क उस स्थान विशेष पर घी अगरबत्ती को धूपकर इस मली को पानी मे पखाल कर इसका खोरण बना पी लेना यही सती माताजी का दवा-प्रसाद है. उनकी कृपा से हिचकी भागती नजर आयेगी हम लोग सती माताजी को वन्दन कर उसी दिन उदयपुर लौट आये

उस बात को दो सप्ताह भी नही हुए, मेरे पास समाचार आये कि अब वे समधी स्वस्थ हैं. हिचकी उन्हें कतई परेशान नहीं कर रही है

पड़ की साक्षी में सतीत्व-परीक्षा

राजस्थानी लोक चित्राङ्कन का एक प्रमुख प्रकार है पड़ चित्रांकन इस चित्राकन मे मुख्यत कपडे पर लोकदेवता पाबूजी और देवनारायण की जीवन-लीला चित्रित की हुई मिलती है इन पडों के भोपे गाव-गाव इस फैलाकर रात्रि को विशिष्ट गाथा गायकी में पडवाचन करते हैं. इससे पडभक्त जहां अपनी मनौती पूरी हुई समझते हैं वहीं भावी अनिष्ट से भी अपने को बचा हुआ मान बैठते है.

इन्ही पडो मे एक पड माताजी की होती है इस पड का किसी प्रकार कोई वाचन नहीं किया जाता बावरी लोग इसके पुजारी होते हैं और अपनी जात मे इसी पड की साक्षी में स्त्री के सतीत्व की परीक्षा लेते है. तब माताजी की पड सबके सम्मुख फैला दी जाती है और माताजी का धूप ध्यान करने पश्चात् पचायत के सम्मुख उस स्त्री-विशेष को उफनती हुई तैल की कढाई में हाथ डालने को कहा जाता है सबके सामने माताजी की साक्षी मे वह स्त्री तैल की कढाई मे अपने हाथ डालती है. यदि उसके हाथों पर उफलते तैल का किसी प्रकार का कोई असर नहीं होता है तो वह स्त्री चरित्रवान तथा सद्चलनी समझली जाती है.

अग्नि परीक्षा की ऐसी परम्परा अन्य जातियों मे भी विद्यमान है. सांसी जाति मे एक नवोढे को सुहागरात के दिन ही अपनी नई नवेली के चरित्र पर सन्देह हो आया तब उसने सुहागरात मनाना छोड दिया और आसपास के गांवो के पचो को साक्षी मे सोलह वर्षीय दुल्हन लोनीबाई की अग्नि-परीक्षा ली गई. सूर्योदय के समय लोनी ने तब अग्नि परीक्षा दी. पहले उसे नहलाकर निर्वस्त्र कर दिया केवल एक छोटा सा धुला हुआ सपेद लट्टा ओढने को दिया. फिर उसके दोनो हाथों पर पीपल के पत्ते रखकर कच्चे सूत से उन्हे बांध दिया मुहूर्त के अनुसार तब पचों द्वारा कोई ढाई कीलो वजन का लाल गर्म लोहे का गोला उसके हाथ मे रख दिया गया और कहा गया कि सात कदम चलकर पास पडे सरकडों पर वह गोला रख आये.

लीली ने ऐसा ही किया वह बेदाग बच गई और चरित्रवान सिद्ध हो गई तब दुल्हे राजा को बतौर जुर्माना ढाई सौ रुपया देकर अपनी नवविवाहिता से माफी मागनी पडी

राजस्थान के अत्यन्त लोकप्रिय कागसिया गीत मे भी कागसिया चुराकर लेजानेवाली पणिहारिनो के लिये हथेली पर गम गोले रखकर चोरी का पता लगाने का उल्लेख मिलता है गीत की पक्तिया हैं—

धमण धमाई लु, गोला तपाई लु
तातो तैल तपाईलू, रे
म्हणी कागसिया रे कारण म्हू
मदर धीज धराइनू रे
पणिहार्‌यां ले गई रे
म्हारे छैल भवर रो कागसियो
पणिहार्‌या ले गई रे

बावरी लोग माताजी की इस पड का एक उपयोग और करते हैं और वह है चोरी करने के लिये जाने हेतु शुभ अशुभ शकुन लना कहते हैं कि पड जब अच्छे शकुन दे देती है तो ये लोग चोरी हेतु निकल पडते हैं और जब सफलतापूवक घर लौट आते हैं तो माताजी को इस पड को खूब धूपध्यान देते हैं

नवरात्रा मे तो नौ ही दिन पड को धूपदीप किया जाता है पड चितेरे श्रीलाल जोशी ने बताया कि चू कि माताजी की पड का उपयोग अधिक नहीं होता है इसलिये ये पडें इक्की दुक्की ही बनवाई जाती हैं परन्तु बावरी लोग बडी श्रद्धा और भक्ति से इस पड को बनवाकर बडे यत्नपूवक अपने घरो मे रखते हैं उनको तो यह पड ही एकमात्र देवी, माताजी और रक्षिका है अपना प्रत्येक महत्वपूर्ण काय सस्कार ये लोग इसी पड देवी की छत्रछाया मे सम्पन्न करते हैं

सतीत्व परीक्षा के हमारे यहां और भी कई रूप प्रचलित रहे हैं सीता की अग्नि परीक्षा तो जग जाहिर है ही पर लोकजीवन भी ऐसी अग्नि परीक्षा से अछूता नही रहा है

मृतक-संस्कार शंखाढ़ाल

मृत्यु लोकजीवन का अन्तिम सस्कार है जिसकी समाप्ति प्राय. शोक एव विषाद मे होती है. मृतात्मा की सुगत के लिये प्रत्येक जाति मे अपने पारपरिक क्रिया-कर्म प्रचलित है. अनेक जातियो मे नाना दस्तूरो के साथ मृत्यु-गीत भी गाये जाते हैं ये गीत बडे मार्मिक तथा हृदयद्रावक होते हैं. कोई दस्तूर एव क्रिया-कर्म नही करने पर, ऐसा माना जाता है कि मृतक व्यक्ति को सद्गति नहीं मिल पाती है फलत: उसका मवरा आकुलावस्था मे भटकता रहता है अतः विशेष दस्तूर-सस्कार करने पर ही उसका मवरा ठिकाने लगता है और उसे गत मिलती है. मृत्युपरक इन सस्कारो मे शखाढाल नामक सस्कार भी एक है जो राजस्थान की मेघवाल, भील, गमेती, भाबी, मोग्या, रेगर, बलाई, बोला, कामड आदि कई जातियो मे प्रचलित है.

शखाढाल एक सत्सगी सघ विशेष होता है जिसके अपने सदस्य होते हैं परिवार के सभी व्यक्ति उसके सदस्य हो यह आवश्यक नही इसके अनुसार मृतक व्यक्ति यदि शखाढाल का सदस्य रहा हो और उसके पीछे परिवार मे जो व्यक्ति शखाढाल का सदस्य है वह चाहने पर ही शखाढाल का आयोजन करता है. यह आयोजन किसी की मृत्यु होने के तीसरे दिन किया जाता है. गुरु की आज्ञा से कोटवाल द्वारा शखाढाल की सूचना मृतक के सदस्य-सम्बन्धियो को दिला दी जाती है इसकी सबसे बडी विशेषता यह कि इससे सम्बन्धित जितने भी छोटे-मोटे कम ज्यादा महत्त्व के घटना प्रसग होते हैं उन सबका अपना बधा-बधाया सवाल होता है जिसका अनिवार्यत: उच्चारण करना पडता है इसके अभाव मे कोई क्रिया पूर्ण हुई नहीं समझी जाती है. जब कोटवाल शखाढाल की सूचना देने जाता है तो सूचना प्राप्त करनेवाला सादका (आखा) प्राप्त करने से पूर्व सवाल बोलता है जो सादके का सवाल कहलाता है. यह सवाल इस प्रकार है—

'आखा सांका सादका वेग तण्या विचार. कलश मे कला, गत मे नूर, आवो सामी परवत सूं. सादका जाप सम्पूर्ण व्हीया. गादी बैठा अलखजी भाखीया. साद को सलाम, गुरु को हरनाम. बोलो सता सत साहेब की.'

इस सवाल से तात्पर्य यह कि सवाल बोलनेवाले ने शखाड़ाल मे सम्मिलित होने का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया है और यथासमय वह यथास्थान पहुच जायगा. यदि किसी व्यक्ति को किसी कारणवश उसमे शरीक नही होना होता है तो वह उपर्युक्त सवाल नहीं बोलेगा और न सादके ही लेगा. ये सादके सुगरे व्यक्ति को ही दिये जाते हैं. नुगरे को नही. सुगरा से तात्पर्य शखाड़ाल का सदस्य होने से है सुगरा बनाने की यह क्रिया शखाड़ाल के समय ही सपूरित होती है जब कही शखाड़ाल हो रहा होता है तब वहां उस बालक विशेष को आंख बन्दकर गुरु के पास लाया जाता है. गुरु-दक्षिणा के रूप मे एक रुपया नारियल गुरु के हाथ मे रख दिया जाता है तब गुरु बालक के सिर पर हाथ रखता हुआ उसके कान मे फूंक मार देता है. इससे बच्चा दीक्षित हुआ समझ लिया जाता है.

मृतक-गृह मे जहां शखाड़ाल का आयोजन किया जाता है वहां दूसरे *व्यक्तियो का आना-जाना बन्द रहता है. इसके लिये प्राय. अलग ही एक मेडी-* ओवरा रहता है सर्वप्रथम गुरु के निर्देश मे कोटवाल द्वारा पाट पूरने की रस्म पूरी की जाती है. यह पाट सवा हाथ कपड़े पर पूरा जाता है आंगन पर पहले सफेद और उसके ऊपर लाल कपडा बिछा दिया जाता है. यह कपड़ा ओढ़ाड़ कहलाता है इस ओढ़ाड़ पर चावलो से कोटवाल द्वारा पाट पूरा जाता है. इसमे सबसे ऊपर तीन तिबारियाँ बनाई जाती हैं इनमे पहली तिबारी मे रोहिदास तथा सुगनाबाई, दूसरी मे निशान, तुम्बी, चिमटा तथा पगल्या, समाधि एव तीसरी मे डालीबाई व हरजी भाटी कोरे जाते हैं पहली तिबारी के नीचे एक के नीचे एक करके पांच पाडव, गणेशजी, गणेशजी के नीचे मालदे एव रूपादे राणी तथा इनके नीचे प्रहलाद भक्त एव राजा बलि दिखाये जाते हैं. बीच वाली तिबारी के नीचे रामदेवजी का घोडा, घोड़े के नीचे हिंगलाज का कलश-जोत तथा उसके पास गाय एव माताजी को आंकित किया जाता है. तीसरी तिबारी के नीचे हनुमानजी और उनके साथ चिमटा लिये कोटवाल, इनके नीचे जेतलजी व रानी तोलादे तथा नीचे राजा हरिश्चन्द्र एव रानी तारामती मांडे जाते हैं.

पाट के बीच मे जहा कलश रखा जाता है उसके दोनो ओर-एक तरफ त्रिशूल तथा दूसरी तरफ वासक बनाये जाते हैं. यह सारा पाट सवासेर चावलो से बडी बारीक कलाकारी लिये होता है. बीच पाट पर सातिया मांडा जाता है इसी सातिये पर कलश थापा जाता है इस कलश मे प्रसाद रूप मे चूरमा बाटी ठाड दिया जाता है. यह प्रसाद 'भाव' नाम से जाना जाता है.

कलश के ऊपर जोत दीपाई जाती है. यह जोत पूरी रात प्रज्वलित होती रहती है इस पाट के चारों कोनों पर चार व्यक्ति बैठते हैं. इनमें एक गुरु तथा तीन मृतक के मुख्य रिश्तेदार होते हैं. ये पूरी रात एकासन मे वहीं बैठे रहते हैं पाट पूरने का सवाल इस प्रकार है—

'ओम गुरुजी. पेला जुग में काहे का पाट ? काहे का ठाठ ? काहे का मनरा ? काहे की चेली ? काहे का नाद ? काहे की जनोई ? काहे की पत्थर पावडी ?'

'ओम गुरुजी. पेला जुग मे रूपा का पाट, रूपा का ठाठ, रूपा का मनरा, रूपे की चेली, रूपा का नाद, रूपे की जनोई, रूपे की पत्थर पावडी जाप स पाट पूरे बैठ पालकी अमरापुर जावे. बना जाप स पाट पूरे पुन्न परडा जावे'

इसी प्रकार दूजा जुग मे रूपे की बजाय सोना, तीजा जुग मे मोती तथा चौथा जुग मे माटी का नाम ले-लेकर सवाल रहता है

पाट के पास ही कंडों की आग पर चूरमे नारियल की धूप खेई जाती है. इस धूप से जो लौ निकलती है उससे कलश की जोत को ज्योति दी जाती है यह ज्योति लकडी पर कच्चे सूत के कैंकडे की सहायता से गिराई जाती है यह कैंकड़ा पांच व्यक्तियों से स्पर्श कराया जाता है. कलश पर जोत गिरत ही सभी बत्तीस करोड देवताओं की जय-ध्वनि उच्चारित की जाती है यह समय रात्रि के दस ग्यारह बजे के करीब का होता है. जोत करने के पश्चात् जिस घर में यह आयोजन किया जा रहा होता है उसके किवाड बन्द कर दिये जाते हैं तथा भीतर एक पर्दा डाल दिया जाता है धूप चेताने-देने का यह सारा काम कोटवाल के जिम्मे रहता है. यों भी सम्पूर्ण मसाडाल मे कोटवाल की भूमिका बडी महत्व की होती है यह गुरु महाराज का सच्चा सेवक होता है जो श्रद्धा पूर्वक उनका हर हुक्म बजाता है इसीलिये इसे गुरु महाराज का हजूरिया भी कहते है धूप चेताते वक्त भी कोटवाल का सवाल होता है—

'ओम गुरुजी धूप से रूप, पेर से पूजा, पांचोई देव मुख मांडे. धूप पांचों मलाव है घरबार. पाप करीने धूप करे, बैठ पालकी अमरापुर जावे बना जाप से धूप करे पुन्न परडे जावे. साध को सलाम....'

पाट पूरने के पश्चात् भजनों का कार्यक्रम प्रारम्भ होता है. तंदुरा, मजीरा तथा खजरी के सहारे रात-रात भर भजनियों की भजन-तन्मयता देखते

ही बनती है करीब 4 बजे शख ढोलने की रस्म प्रारम्भ होती है भजन भाव के साथ-साथ मृतक-सस्कार विषयक अन्य क्रियाएं भी होती रहती हैं एक वैंत (आठ इ च) के करीब बरु (मक्ई के डठल) की खाटली (अर्थी) बनाई जाती है यह अर्थी 'हिग्याट' कहलाती है. इसे कच्चे सूत पर लपेट कर इसके चारो किनारो पर चार धागे बाघ दिये जाते हैं इन चारो धागो को एक बडे धागे से जोड दिया जाता है. यह धागा मकान के ऊ चे डाडो से बाघ दिया जाता है पाट पूरने के स्थान पर मिट्टी के रखे कू डे मे यह हिंगलाट लटका दिया जाता है इस हिंगलाट पर उडद के आटे अथवा दाब नामक घास का पुतला बनाकर सुला दिया जाता है पुरुष-मृतक का शखाढाल होने की अवस्था म सफेद और स्त्री-मृतक की अवस्था मे इस पुतले को लाल कपडा ओढाकर सुलाया जाता है. ऊपर डाडे लगे सूत मे 9 पीपली के पत्ते बाघ दिये जाते हैं. ये 9 पत्ते 9 पेडिया (सीढियां) कहलाती हैं जिनके द्वारा भगवान तक पहुचा जाता है. कू डे के पास शख पडा रहता है शखाढाल मे आये सभी सगे-समधी शख मे पानी भर-भर कर हिंगलाट पर डालते रहते हैं पानी डालते समय हर व्यक्ति अपनी अगुली मे दाब की अगूठी धारण करता है शख से हिंगलाट पर पानी की यही क्रिया 'शखाढाल' कहलाती है. यह दृश्य बडा भाव विह्वल होता है जबकि सभी लोग सिसकिया भर-भर अश्रुपूरित अवस्था मे होते हैं.

शखाढ़ाल का यह प्रारम्भ यू ही नही हो जाता इसके प्रारम्भ मे पृथ्वी को बधानेवाले गणदेव गणेश की 'आवोनी गुणेश-देवता धरती बधावणा' के रूप मे आरती गाई जाती है. शख ढोलते वक्त का सवाल इस प्रकार है—

'ढोले शख पावे मोक्ष, करणी करता नही है दोष सोना सीगो रूपा खरी जामर पूछो सवासेर धडो दूध रो देती तार तार माता गवतरी ' ये शख पाच सात तथा नौ तक ढोले जाते हैं तब इनका सवाल कुछ भिन्न प्रकार का होता है यथा- 'ओम गुरुजी आद शख अलख जी पाया, अधर आसान से आवाज लगाया दूजा शख सगरे दिया, बाध काकण जग मोया नाम कमल का वास किया. तीजा शख गुरुजी को दिया चेला के कान सुणाया. चौथा शख गधा को दिया स्वर शख नाम धराया. पाचमा शख पाडवा को दिया, अधर आसन से आवाज लगाया. घूमर घट्टी झूमर पूछ सोना सीगी रूपा खरी तार तार माता गवतरी ढोले शख पावे मोक्ष पाच शख गवतरी जाप से ढोले, वैंठ पालकी अमरापुर जावे बना जाप के शख ढोले पुन्न परडा जावे पाच शख गवतरी सपूरण व्हीया. गादी बैंठ अलखजी भाखिया....'

शत ढोलते वक्त नौ ही पेडियों का भी सवाल होता है. एक-एक पेडी को पकड़-पकडकर 'जय' उच्चरित किया जाता है और सवाल बोला जाता है. 'ओम गुरुजी पेलो पेडी परभात तणी. सरव घात के सासे चडी राई राई जीव प्रन्धेरा हुवा. कुण माता ने कुण पिता ? गोरज्या माता ने ईसरजी पिता. कहो हसा कहा जावोगे ? म्हें जावूंगा राजा घरम के दरबार. धरम-राजा लेखा मागे नाम नामणी जापट मारे. कई दाण देके उतरोगे पार ? रूपा दाण देके उतरूगा पार.' इसी प्रकार एक-एक पेडी पकडते हुए क्रमशः रूपा, सोना, कपडा, अन्न, जोडी, भोम, माटी, तावा तथा गऊ दाण बोलकर नौ पेडी का सवाल पूरा किया जाता है

प्रात कोई पाच बजे पेडी खोलकर कूडे मे रख दी जाती है. तत्पश्चात् चार व्यक्ति इस कूडे को लेकर बाहर किसी एकात मे उस हिंगलाट को समाधिस्थ कर देते हैं. इस समय गावतरी जापी जाती है. बोल हैं—

'ओम गुरुजी. आवो हमा खोलो अमर टाटी. अमर टाटी में करे उजियालो. सगरा जीव समाधि लेवे. नगरा जीव मसाण जले. कुण खोदे ? कुण खोदावे ? किसनजी खोदे, विष्णु खोदावे खोद्या-खोद्या सवा हाथ जमीं पाया सोना की मिट्टी. रूपा का पात्तडा. अडी खडो पीर केवाणा. चोयो खडो जीव केवाणा सात धूल की मुट्ठी, सात दाब का तरमा. समाधि गावतरी जाप कर रटे बैठ पालकी अमरापुर जावे. बना जाप के समाधि लेवे सो पुन्न परडे जावे समाधि गावतरी सपूरण व्ही. गादी बैठता नाथजी भाखिया....'

इस समाधि पर बाद मे एक छोटी सी चबूतरी बना दी जाती है. इसके नारियल चूरमे की धूप दे दी जाती है. समाधि पूरी होने पर चारों व्यक्ति यथास्थान जाते हैं मन्दर प्रवेश करने से पूर्व कोटवाल उनसे सवाल करता है जिसका जवाब प्राप्त कर ही उन्हें मन्दर प्रवेश दिया जाता है. सवाल-जवाब इस तरह हैं—

तुम कहाँ गये ?
अमरापुर गये.
कितने गये ?
पांच गये.
(चार व्यक्ति तथा एक मृतक—हिंगलाट)
एक कहाँ छोड़ आये ?
अमरापुर मे.

शंखाढ़ाल की यह क्रिया सम्पूर्ण होने के बाद ग्रन्त में आरती की जाती है और कलशवाला प्रसाद सभी को बाँट दिया जाता है. शंखाढ़ाल सम्बन्धी भजनों मे मीरां, कबीर, रूपादे, तोलादे, बाणिया तिलोकचन्द ग्रादि के भजन गाये जाते हैं. यहां बाणिया तिलोकचन्द तथा रूपांदे का एक-एक भजन द्रष्टव्य है—

(क) ग्राज म्हारा वीराजी रो राज ए,
सांवरियो मले तो देसां ग्रोलमो जी,
गिरधारी मले तो देसां ग्रोलमो जी....ग्राज०

केसर ने कस्तूरी काली क्यूं पडी,
क्यू ग्रायो हलदी मे रग म्हारा राज....ग्राज०

नेनकडिया टाबरिया री माता क्यू मरी,
क्यू दीदो वाली ने रडपो म्हारा राज... ग्राज०

एकलडो मत करजे वन रो रूंखडो,
मती करजे गाया रो गवाल म्हारा राज.... ग्राज०

बना भायां को कसो वेनडी,
नहीं म्हारे जामणजायो वीर म्हारा राज.. ..ग्राज०

सासुजी बना तो सुनो सासरो,
नहो म्हारे पोता रो परवार म्हारा राज. ..ग्राज०

बाणिया तिलोकचन्द री विनती,
भाईड़ा रो बेकूठा मे वास म्हारा राज . .ग्राज०

(ख) ए माता म्हानें भली तो परणाई नगरा देश मे ग्रो जी,
मेले जावा नो दे, जमले जावा नी दे,
भाईडाऊं मलवा नी दे ए माता म्हाने. .....
यो जुग तो लागे दोहलोजी ए माता म्हानें ..
ए माता म्हानें करती ए डेरो री कुतरी जो
इतो ग्रावता साधुडा टुकडो नाकता म्हानें .....
ए माता म्हारी म्हानें करतो ए पथरो बावडीजो
इतो ग्रावता साधुडा पाणी पीवता म्हानें. . ...

ए माता म्हानें करती ए वनडी रोजडी ग्रो जी
इतो ग्रावता शिकारी गोली मारता म्हानें ..
ए माता म्हानें करतो ए पारस पीपरी ग्रो जी
इतो ग्रावता पथीडा छाया बैठना ग्रो जी म्हानें
ए माता म्हारी राणी रुपादे री विनती ग्रो जी
इतो सुणजो सूरता लगाय ए माता म्हानें . .

इस प्रकार हम देखते हैं कि शखाढाल एक ऐसा सस्कार है जो न केवल वर्तमान जीवन को ही सुखमय देखता है ग्रपितु ग्रागे का जीवन भी ग्रच्छे सास्कृतिक रूप मे जन्म धारण करे, इस ग्रोर भी यह शखाढाल मनुज को मृत्युलोक से ग्रमरत्व की ग्रोर पहुचता है

नजरां के लगते फल

रातिजगे के पाडवो के एक भारत मे सतयुग का है इस युग मे प्राय व्यक्ति की उम्र एक हजार बरस तो पालने मे ही हालर हूलर सुनता था स्त्री-पुरुष मात्र नजर से ही सतानोत्पत्ति हो जाती थी— 'नर नजर्या रा फल रे लागता'

नजर-फल की इस प्रकार की बात अब कलि मिलती परन्तु एक दूसरे सदर्भ मे नजर-फल के तो आज भी सुनने को मिल जायेंगे सतयुग मे सु फल तो कु-फल ही न[illegible] का।
इससे बचने[illegible]

है चूड़ा पहनने पर भी चूडे के साथ काला धागा बाध दिया जाता है अपने घरो मे भी कभी जब बच्चे को अच्छे कपडे पहना दिये जाते हैं या कोई नये आभूषणादि धारण करता है तो सहसा मुह से उसकी प्रशसा के शब्द निकल आते हैं ऐसी स्थिति मे तत्काल ही थूकारात्मक 'थू' कहकर थूक दिया जाता है ताकि नजर न लग पाये.

यह तो साधारण नजर की बात हुई कुछ कुदृष्टि वाले ऐसे लोग होते हैं जिनकी नजर से बडा अनिष्ट हो जाता है. इनमें महिलायें अधिक होती हैं ये महिलायें प्राय. दलित वर्ग की होती हैं जिनकी नजरें कभी-कभी प्राणलेवा भी सिद्ध हुई हैं जब इस तरह की नजर किसी को लग जाती है तो कई प्रकार की शारीरिक व्याधिया पैदा हो जाती हैं. इन्हें दूर करने के लिए नानाप्रकार के इलाज, टोने टोटके तथा झाड फूक मतर आदि करवाने होते हैं समझेबुझे व्यक्ति नजर का काला डोरा (काली वेल) बनाते हैं जिसे गले में अथवा भुजा पर बाधा जाता है. नजर का मादलिया भी बडा रामबाण असर करता है. ढाढो-धोपों (जानवरो) को भी अक्सर नजर लगती रहती है. इससे उनका दूध सूख जाता है और थन सूझ जाते हैं ऐसी स्थिति मे उन्हे नजर की ओखद-जडी बूटी खिलाई जाती है. हनुमानजी के ऊपर चढी मली (सिन्दूर) की भी धूप दी जाती है

मांगणियार औरतो की दृष्टि अक्सर खराब होती है अतः उन्हे भीख आदि देते समय पूरी सावधानी बरती जाती है. घर की बहू बेटियों को अक्सर ऐसी औरतो से बचाई जाती हैं ताकि उनको किसी प्रकार का कोई छेडा न लगने पाये. यह भी देखा गया है कि किसी घर मे किसी औरत की दृष्टि ठीक नहीं होने पर उसके लडके भी कु वारे ही डोलते फिरते हैं. ऐसे घर में कोई व्यक्ति अपनी बेटी देना पसन्द नही करता है. कई जगह बहुए ऐसी सासुओ से अलग अपना घर बसाती हैं और उन्हें अपने चौके तक नहीं फटकने देती हैं ऐसी कुदृष्टि महिला के साथ भोजन भी नही किया जाता है सामूहिक जीमनचूटन में भी यदि कभी ऐसी औरत जीमने आ जाती है तो वहा जीम रही औरतो की पगत ही जीमना छोड देती है.

नजरधारी महिलाओ का गुस्सा बडा तेज होता है जिस किसी पर ये गुस्सा कर लेती हैं उसे भयकर अनर्थ का सामना करना पडता है. एक बार एक सज्जन ने ऐसी ही एक महिला को कुछ रुपये उधार दे दिये. कौल के अनुसार महिला ने जब रुपये नहीं लौटाये तो वे सज्जन उसके घर पहुचे और उसे बुरा-भला सुनाने

नजरों के लगते फल

रातिजगे के पाडवों के एक भारत मे सतयुग का बडा अच्छा वर्णन मिलता है. इस युग मे प्राय व्यक्ति की उम्र एक हजार बरस की होती थी. सौ वर्ष का तो पालने मे ही हालर-हूलर सुनता था स्त्री-पुरुष अग से अंग नही भीट करके मात्र नजर से ही सतानोत्पत्ति हो जाती थी— 'नर-नारी अगऊं अग नीं भीटता, नजरूयां रा फल रे लागता.'

नजर-फल की इस प्रकार की बात अब कलियुग मे देखने सुनने को नहीं मिलती परन्तु एक दूसरे सदर्भ मे नजर-फल के तो सैंकडो उदाहरण हमे रात-दिन आज भी सुनने को मिल जायेंगे सतयुग मे सु-फल लगते थे पर अब कलियुग में तो कु-फल ही नजर आ रहे है. इससे व्यक्ति का अशुभ एव अनिष्ट ही होता है. इससे बचने के लिए प्राय काली वस्तु काम मे ली जाती है.

गाव मे जब भी कोई नया मकान बनता है अथवा शहर मे कोई नया भव्य भवन बनता है तो सबसे पहले उसके ऊपर काली हडिया लगा दी जाती है ताकि नजर (दीठ) न लग पाये मैंने ऐसी इमारतें भी देखी हैं जो काफी पैसा खर्च करके बडी तबीयत से बनाई गई परन्तु उसमे निवास करने के पहले ही कई जगह दरारें आ गई यह किसी की नजर का ही फल होता है. अच्छी लहलहाती खडी फसल के लिए खेत मे काला कपडा अथवा काली हडिया औंधी लटका दी जाती है. मैं प्रतिवर्ष ज्योंही अपनी अगूर की बेल मे अगूर आने लगते हैं, काली हडिया अथवा काला पहनने का कपडा लगा देता हू. छोटे-छोटे बच्चों के हाथ-पांवो अथवा गले मे या फिर कमर मे काला रेशमी डोरा भी इसीलिये बाधा जाता है ताकि उन्हे नजर न लगने पाये प्रतिदिन उनकी आंखो में काजल डालने तथा हाथ-पांवो एव गालों पर काजल की बिंदिया अथवा मामे देने के पीछे भी यही भावना बलवती रही है

यह नजर छोटो को ही लगती हो, ऐसी बात नही औरतें जब भी पहली बार कोई नया आभूषण धारण करती हैं उनके साथ काला धागा अवश्य बाधती

हैं चूड़ा पहनने पर भी चूड़े के साथ काला धागा बांध दिया जाता है. अपने घरों में भी कभी जब बच्चे को अच्छे कपड़े पहना दिये जाते हैं या कोई नये आभूषणादि धारण करता है तो सहसा मुंह से उसकी प्रशंसा के शब्द निकल आते हैं ऐसी स्थिति में तत्काल ही थूकारात्मक 'थू' कहकर थूक दिया जाता है ताकि नजर न लग पाये.

यह तो साधारण नजर की बात हुई. कुछ कुदृष्टि वाले ऐसे लोग होते हैं जिनकी नजर से बड़ा अनिष्ट हो जाता है. इनमें महिलायें अधिक होती हैं. ये महिलायें प्रायः दलित वर्ग की होती हैं जिनकी नजरें कभी-कभी प्राणलेवा भी सिद्ध हुई हैं. जब इस तरह की नजर किसी को लग जाती है तो कई प्रकार की शारीरिक व्याधियां पैदा हो जाती हैं. इन्हें दूर करने के लिए नानाप्रकार के इलाज, टोने टोटके तथा झाड़ फूंक मंतर आदि करवाने होते हैं. समझेबूझे व्यक्ति नजर का काला डोरा (काली वेल) बनाते हैं जिसे गले में अथवा भुजा पर बांधा जाता है. नजर का मादलिया भी बड़ा रामबाण असर करता है. ढाढो-चोपों (जानवरों) को भी अवसर नजर लगती रहती है. इससे उनका दूध सूख जाता है और थन सूझ जाते हैं. ऐसी स्थिति में उन्हें नजर की ओखद-जड़ी बूटी खिलाई जाती है. हनुमानजी के ऊपर चढ़ी मली (सिन्दूर) की भी धूप दी जाती है

मांगणियार औरतों की दृष्टि अक्सर खराब होती है अतः उन्हें भीख आदि देते समय पूरी सावधानी बरती जाती है. घर की बहू बेटियों को अवसर ऐसी औरतों से बचाई जाती हैं ताकि उनको किसी प्रकार का कोई छेड़ा न लगने पाये. यह भी देखा गया है कि किसी घर में किसी औरत की दृष्टि ठीक नहीं होने पर उसके लड़के भी कुंवारे ही डोलते फिरते हैं. ऐसे घर में कोई व्यक्ति अपनी बेटी देना पसन्द नहीं करता है. कई जगह बहुएं ऐसी सासुओं से अलग अपना घर बसाती हैं और उन्हें अपने चौके तक नहीं फटकने देती हैं. ऐसी कुदृष्टि महिला के साथ भोजन भी नहीं किया जाता है. सामूहिक जीमनचूटन में भी यदि कभी ऐसी औरत जीमने आ जाती है तो वहां जीम रही औरतें की पंगत ही जीमना छोड़ देती है.

नजरधारी महिलाओं का गुस्सा बड़ा तेज होता है. जिस किसी पर ये गुस्सा कर लेती हैं उसे भयंकर अनर्थ का सामना करना पड़ता है. एक बार एक सज्जन ने ऐसी ही एक महिला को कुछ रुपये उधार दे दिये. कौल के अनुसार महिला ने जब रुपये नहीं लौटाये तो वे सज्जन उसके घर पहुंचे और उसे बुरा-भला सुनाने

लगे इस पर उस महिला को बडा गुस्सा आया गुस्से ही गुस्से मे उसने उन्हें अपने यहा से चले जाने को कहा और यह भी कहा कि यदि नहीं जाओगे तो अभी तुम्हारे टुकडे टुकडे होते नजर आयेंगे वह वहा से जाने ही वाला था कि उसके देखते देखते वहां पड़े कांसी के बाटके के टुकडे टुकडे हो गये और वह बिचारा उसके इस शिकार से बच कर बडी मुश्किल से घर लौटा

मेरे एक समधो की एक दिन अचानक आंखें जाती रही उन्हे पहले तो एकदम काले पीले नजर आने लगे और फिर धीरे धीरे दिखना ही बन्द हो गया वे गांवडे म थे जिन्होने भी सुना वे सब दौडे दौडे वहा आये और एक तरह से पूरा गाव ही उनकी सहानुभूति और दवा दारू के लिए एकत्र हो गया उसमे से एक ग्रामीण ने कहा कि इनके और कोई बीमारी नही है नजर दोष है इतना कहते ही मेरे समधी को सारी बात याद हो आई वहीं की एक महिला थी जिसने कई बार उनको उसके लिए एक वेश लाने को कहा था और वे हा हू करके उसकी बात टालते रहे थे तत्काल ही इसका उपाय खोजा गया उस समझे बुझे व्यक्ति ने यही कहा कि अभी का अभी एक नया वेश लाओ और उसे लेकर स्वय जाओ और हाथोहाथ उस महिला को दे आओ यही किया गया देखते देखते कुछ ही समय बाद उनकी आखें ठीक हो गई और आज भी वे पूरा स्वस्थ हैं

दूर क्यो जायें मेरे अपने ही घर म एक बार पत्नी बीमार हुई उसके सिर मे दर्द प्रारम्भ हुआ कभी दाईं ओर, कभी बाईं ओर केवल एक जव र जितनी सी जगह और चौबीसो घटे दद ऐसा कि जैसे कोई जोर जोर से कीलें ठोक रहा हो. उसके लिए हम सब घर वाले बड परेशान हो गये दुनिया भर का इलाज करवाया गया जो भी कोई कुछ कहता वह कर लिया जाता झाड-फूक, तंतर-मतर, टोने टोटके सब कर लिय, देव देवरे भी गये किसी में कोई कसर नहीं रखी अस्पताल मे भी अच्छे से अच्छे विशेषज्ञ से इलाज करवाया गया पानी की तरह पैसा बहाया गया मगर तनिक भी आराम नही पडा फलतः जयपुर ले गये मगर वहा भी कुछ नही हुआ होम्योपैथी इलाज भी करवाया मगर आराम नही पडा तब कुछ लोगो ने बम्बई तथा कुछ ने अहमदाबाद जाकर इलाज करवाने की सलाह दी मैं इसके लिए तैयार हो गया न होता तो करता भी क्या तभी एक समझे बुझे ने फतहनगर देवरे जाने की बात कही, मरता क्या न करता यह देवरा उदयपुर से अधिक दूर नही है प्रतिदिन कई बसें जाती हैं फिर तो चार पाच व्यक्तियो ने भी मुझे यही कहा कि पहले यहां तो जाइये फिर बाहर तो बाद मे जाना ही है पत्नी की हालत ऐसी हो गई थी कि वह एक

पावडा भी मुश्किल से चल पाती थी फिर भी किसी तरह उसे वहां ले गये. वहा ज ते ही चौकी पर बावजी ने अब तक की सारी कथा कह सुनादी फला-फला इलाज करवाया गया दुनिया भर का पैसा खर्च किया मगर कुछ न हुआ. होता भी कैसे, अस्पताल की बीमारी तो है नही यह तो नजर लग गई है किसी विधवा महिला की सिर के पीछे की नजर है एक दिन सध्या को जब घूमने निकली तो सिर खुला हुआ था फलत एक गली के पास एक महिला की नजर लग गई, तभी से यह बीमारी आ पडी है और यह भी बता दिया कि सिर की पीडा किस तरह की होती है यह पीडा धीमे-धीमे रूप से कब प्रारम्भ हुई और कब से इसने इतना जोर पकडा और अन्त मे कहा कि चिन्ता करने की कोई जरूरत नही है यहा चौकी पर दो-चार बार आना अवश्य पडेगा मगर बीमारी जड़मूल से दूर हो जायेगी.

पत्नी के साथ उसके पिताजी थे. उनके जी मे जी आया. उन्होने पूछा कि बावजी आराम तो पड जायेगा ? बावजी ने सतोष दिलाया कि यह तो आपको अभी पता चल जायेगा आये तब इसकी हालत क्या थी और जाते समय इसकी क्या स्थिति रहेगी, ऊचा कर (उठाकर) लाये और अब यह पैदल चली जायेगी. वैसे भी यदि आराम न पड तो फिर यहा मत आना और मुझे भी याद मत करना रात्रि को करीब 9 बजे वे घर आये. मैंने जब पत्नी को धीरे-धीरे पैदल आते देखा तो मेरे जी मे जी आया उसके बाद 5-6 बार फतहनगर जाना हुआ यहा किसी प्रकार की कोई फिस नही ऐसी ऐसी बीमारियां जिनका प्राय. कहीं इलाज नही होता वहां शर्तिया मुफ्त इलाज होता है और पत्नी कह रही थी कि हैदराबाद-मद्रास तक के लोग वहा धके पीटे आते हैं दूर-दूर तक की चिट्ठी-पत्रिया भी आती हैं बावजी सबका ध्यान रखते हैं पत्नी की इस बात को काफी समय हो गया, अब वह स्वस्थ है.

नजर की ऐसी एक नहीं सैकडो दास्तानें हैं यह नजर अच्छी साजसज्जा, खूबसूरती, भव्यता, मनोरमता तथा अच्छे ओढने-पहनावे पर लगती है इसलिए बोलचाल मे कहा भी जाता है कि 'रूपाला घणा हो जो कठे नजर लाग जाई.' (बडे खूबसूरत हो, कहीं नजर नहीं लग जाय) '

एक घर मे नजर लगने से एक लडकी की मृत्यु हो गई. उसके बाद जब दूसरी लडकी हुई तो उसका नाम ही नजरी रख दिया गया. लोकगीतों मे भी नजर सम्बन्धी गीत मिलते हैं. कठपुतली के अमरसिंह राठौड के खेल मे एक पुतली नाच में यह गीत बडा लोकप्रिय है—

सागर पाणीडै ने जाऊसा नजर लग जाय ।
नजर लग जाय हाँ जुलम होय जाय ।।

एक बना गीत मे बने को नजर न लग जाय अत. उसकी बहिन अपने भाई को गले अथवा भुजा पर चौकी बांध कर शादी करने तोरण पर जाने को कहती है ताकि खाती की उसको नजर नही लगने पाये—

बना मचकनें तोरणिये मत जाय
खातीडै री निजर लागणी
वीरा रे मादलियो मतराय ने चौकी बाध ।

दूल्हा जब शादी के लिए आता है तो तोरण पर कामणगीत भी इसीलिए गाये जाते हैं कि कही उसे नजर नही लग जाय. नजर का अपना एक शास्त्र तो है ही परन्तु यह एक शस्त्र भी है. यद्यपि यह एक बुरा शस्त्र है परन्तु कहते हैं इसे प्राप्त करने के लिए कोई न कोई साधना अवश्य करनी पडती है वेद पुराणो से भी इस सम्बन्धी अच्छे खासे सूत्र एकत्र किये जा सकते हैं.

मेरे मित्र जैसलमेर के श्री पुरूषोतम छगाणी ने बताया कि नजर लगने से कई अनर्थ ऐसे होते देखे गये जिनका कोई स्थाई इलाज ही नहीं हो सका. उन्होने कहा कि जैसलमेर के किले के हवाप्रोल के पास वाली दीवाल किसी की नजर लगने से ऊपर से नीचे तक तराड खा गई. यह दीवाल करीब 100 फीट ऊंची है. इसे कई बार अच्छे समझे-बुझे कारीगरों से ठीक भी कराई गई परन्तु अन्ततोगत्वा यह दीवाल वैसी की वैसी रही. आज भी यह दीवाल नजर का प्रत्यक्ष नजारा दे रही है.

रहस्य चूहों का

राजस्थान मे देवियो के कुल नौ लाख अवतार माने गये हैं. प्रसिद्ध रण-क्षेत्र हल्दीघाटी के पास नौ लाख देवियो का स्थान बडल्या हींदवा आज भी बहु-प्रसिद्ध है इस सम्बन्ध मे यहां के देवरो मे नौरात्रा मे रात-रात भर जो भारत-गाथा- गीत गाए जाते हैं उनमे इन देवियो का यश वर्णन मिलता है. इन साधारण-असाधारण देवियो मे 84 असाधारण शक्तियुक्त होने से वे महाशक्तियां कही गई हैं इनमें करणीजी एक हैं.

चारण जाति मे मुख्यत: 4 देवियां हुई—आवड, कामेही, वरवडी और करणी. इन चारो ने राजपूत जाति की भाटी, गौड, सिसोदिया एवं राठौड शाखा पर प्रसन्न हो इनके बड़े-बडे राज्य स्थापित किए. करणीजी ने जोधपुर एव बीकानेर नामक शक्तिशाली राज्यों की स्थापना की.

देशनोक करणीजी का मुख्य स्थान है. यहीं इन्होंने साधना-तपस्या की. यह चारणों की तो कुलदेवी है ही पर अन्य कई लोग इष्टदेवी के रूप से करणीजी की मान मनौती करते हैं वर्तमान करणी मन्दिर से दो किलोमीटर दूर नेहडी नामक प्रसिद्ध स्थान है करणीजी सर्वप्रथम यही रहती थीं. इनके पास दस हजार गाएं थी. यहीं जिस सूखे ठूंठ के सहारे वह बिलौना करतीं, वह ठूंठ आगे जा कर हरा वृक्ष बन गया और तब के दही मथने के छीटे आज भी उस जाल वृक्ष पर लगे हुए हैं. नेहडी बिलोवणे की रस्सी को कहते हैं. कोई-कोई मथदण्ड को भी कहते हैं इसीलिये यह स्थान नेहडीजी के नाम से प्रसिद्ध है. इसी जाल वृक्ष से सटी करणीजी की छोटी-सी मन्दरी बनी हुई है. अभी यशोदान चारण इसके पुजारी हैं जो करीब 80 वर्ष के हैं. यहा आसपास मे कोई बस्ती नही है. यह पूरा स्थान करणीजी का ओपण है, जहां कोई खेती नहीं होती.

इतनी सारी गायों की देखभाल के लिये करणीजी के पास पर्याप्त सख्या मे चारण थे. दिनभर यहां काम करने के पश्चात् करणीजी साधना के लिये, जहां आज मन्दिर बना है वहां आ जाती. तब करणीजी ने देशनोक नहीं बसाया

था यहां तपस्या करते-करते उनके नाक तक बालू जमा हो गई तब उनकी रक्षा के लिये अचानक चट्टान आई आज भी पूरी की पूरी चट्टान करणीजी के मन्दिर के ऊपर स्थिर है करणीजी का मन्दिर मठ कहलाता है करणीजी की जहा मूर्ति स्थापित है उस गुम्भारे को करणीजी ने स्वय बनाया था यहीं वह ध्यान किया करती थी यह स्थान जमीन स्थल से थोडा नीचे है

यह गुम्भारा पूरी की पूरी चट्टान लिये है. चट्टान मे जगह-जगह बिलनुमा छिद्र हैं जहां चूहे निवास करते हैं ये चूहे कई हैं, पूरे मन्दिर मे जहा-तहा चूहे ही चूहे देखने को मिलेंगे दर्शनार्थी को सम्भल-सम्भल कर इन चूहो से बचते हुए देवी तक दर्शन को पहुचना होता है जो भी दर्शनार्थी आता है, इन चूहों के लिये लड्डू और बाजरा लाता है चूहे इनका भोग लेते रहते हैं ये चूहे इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि इन्हे किसी दर्शनार्थी का कोई भय नहीं है कभी-कभी चूहे दर्शनार्थी के शरीर पर चढ जाते हैं और इसे शुभ ही माना जाता है इतने अधिक चूहे होने के कारण करणीजी को चूहो वाली देवी भी कहते हैं

इतने सारे चूहे और खाने को भरपूर माल मिष्ठान्न होने के बावजूद मुझे सारे के सारे चूहे मडीयल, रेंगने हुए चलन वाले, मांदे और खून से ऐसे सने लगे जैसे जगह-जगह से टींच दिए गये हैं प्रत्येक की पूछ के नीचे निकली मोटी गाठ उनके लिए चलना मुश्किल किए हुए थी और चूहे ऐसे लग रहे थे जैसे तेल से भीगे हुए हैं एक भी चूहा मुझ मस्त प्रफुल्ल नही दिखाई दिया. मैंने वहाँ सेवारत लोगो से पूछा भी पर कोई मुझे सन्तुष्ट नहीं कर सका तब मैंने लोक-देवता कल्लाजी का स्मरण किया उन्होने अपने सेवक सरजुदास के शरीर मे प्रविष्ट हो इस रहस्य की गुत्थी सुलझाते हुए बताया कि नेहडी के बहा अचानक कानजी ने आक्रमण कर दिया तब उससे भयभीत हो करणीजी के साथ रह रहे सारे चारण भागते बने. उन्हें भागते देख करणीजी ने उन्हे जोश दिलाते हुए कहा भी कि, 'ऊ दरा री नाई क्यू भागरिया हो ? (चूहों की तरह क्यो भाग रहे हो) पर वे चलते बने इधर करणीजी ने कानजी को बुरी तरह परास्त कर दिया तब वे सारे चारण आ उपस्थित हुए और पछताने लगे, करणीजी ने उन्हे कायर कहते हुए चूहा बनने का श्राप दे दिया मन्दिर मे जो चूहे हैं, वे ही सारे चारण हैं इनकी कोई अन्य गति नही हुई एक चूहा मरने के बाद भी चूहा ही बनता है, देवी आज भी इन पर कुपित है जब देवी का रोष उतरेगा तब इनकी सुगति होगी. देवी के साथ रहने वाले होने के कारण देवी ने उन चारणों को चूहे तो बना दिए मगर खाने पीने और रहने मे उन्हें किसी प्रकार की कमी नही आने दी.

इन चूहो मे सफेद चूहा काबा कहलाता है यह देवी का प्रतीक माना जाता है इसके दर्शन होना बडा मगलकारी माना जाता है यह बडा मस्त प्रफुल्ल है. दर्शनार्थी जो भी आता है, चार-चार छह-छह घण्टा प्रतीक्षा करता रहता है पर काबा के दर्शन करके ही लौटता है यही सुना कि करणीजी का एक रूप सफेद चील है. जो इसके दरसण कर लेता है वह तो बडा ही भाग्यशाली माना जाता है

देवी के चूहे बडे पवित्र माने जाते है इनसे कभी कोई बीमारी नही फैली. जहा चूहा से प्लेग फैलता है, वहा इन चूहो का चरणामृत पी कर प्लेग से ग्रसित सैंकडो आदमी मौत के मुह मे जाने से बच सके. यहा के देवी भक्त अमरसिंह चारण ने बताया कि वि. स 1975 मे प्लेग के कारण गाव खाली हो गये तब सैंकडो लोगो ने यहा आकर बसेरा लिया और चूहो का अमृत जल पी कर अपने को चगा किया. करणीजी की इष्टदेवी तेमडाजी थी एक लकडी की बनी पेटी मे इन्हे रखकर करणीजी प्रतिदिन इनकी सेवापूजा करती थी देशनोक मे तेमडाजी की मदरिया मे यह पेटी आज भी रखी हुई है. मुझे इसके दर्शनो का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ

करणीजी की मूर्ति जैसलमेर के पीले पट्टी-पत्थर पर बनी हुई है. इसे वही के एक अन्धे खाती ने खोदकर बनाई इसका नाम बना था. करणीजी ने इसे बनाने का सपना दिया था इसे बनाने मे तीन माह लगे. गुम्मारे मे इसकी स्थापना सवत् 1595 चैत्रशुक्ला चतुर्दशी को उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र मे हुई. गुम्भारा वि स. 1594 की चैत्र कृष्णा द्वितीया को करणीजी ने अपने स्वर्गवास के 5 वर्ष पूर्व बनाया 21 माह गर्भवास कर 150 बरस जीने वाली जोगणी करणी आज भी उतनी ही शक्तिमती बनी हुई हैं जिसकी धाम दिन दूनी रात चौगुनी बढती जा रही है. देवी उन सब पर रीझती है जो सच्चे मन से उसे राजी कर लेता है.

नाम श्री भगवान का

हमारे यहा अपना नाम कोई नहीं बतायेगा   किसी से नाम पूछने पर वह पहले श्री भगवान का नाम बतायेगा   अपना मुझ मे कुछ नहीं, सब कुछ है सो तोय. वह यही कहेगा— नाम तो श्री भगवान का. फिर कहेगा मेरा नाम....

राजस्थान मे नाम विचार की परम्परा अत्यन्त विचित्र एव विस्तृत रही है. *यहा के अधिकतर नाम ग्रहो, फलो, फूलो, सप्ताह के दिनो, पैसो, रगो,* महीनो, पेड-पौधो, मिठाइयो, पशु-पक्षियो, देव-देवियो, जादू-टोनो, तिथियो तथा अमूल्य पदार्थों के नाम पर रखे जाते हैं   कहीं ऐसे भी अजीबोगरीब नाम सुनने को मिलेंगे, जिनका न कोई अर्थ होता है, न कोई रूप-रग ही

नामकरण प्रथा के अनुसार लडकी के चार तथा लडकों के पांच नामो मे से कोई एक नाम रख लिया जाता है   परन्तु अब तो टिड्डीदल की भांति ऐसे कई नाम निकलते जा रहे हैं जिनके लिए न तो किसी ब्राह्मण देवता की ही आवश्यकता समझी जाती है और न किसी शुभ-शकुन टीपणी, दिन-घडी आदि की ही   कुछ गालियां भी ऐसी प्रचलित हैं जो प्राय नाम की जगह प्रयोग मे लाई जाती हैं.   लडकी को अक्सर 'राड' तथा लडको को 'रडुवा' कहने की आम बोली सुनने को मिलती है. यह प्रयोग गाली के रूप मे भी और साधारण बोली-चाली के रूप मे भी सुनने को मिलता है.

कुछ गालिया ऐसी हैं जिनके पीछे रांड शब्द जोड दिया जाता है, जिससे उनके सौन्दर्य मे चार चाद लग जाते हैं उदाहरण के लिए, डाकण, सोडजोगण, गडूरी, मगती, पसेरी, चोतरी आदि के साथ 'राड' शब्द जोडने पर डाकणराड, सोडजोगणराड, गडूरीरांड, मगतीराड, पसेरीरांड तथा चोतरीराड   लडके के लिए रडवो, डाकणो, गडूरो, खोडीलो, मगतो, गूखाणो, पाणीदीदो, अडीरवो आदि शब्द प्रयोग मे लाए जाते हैं.

कुछ नाम दो नामो के जुडवा रूप मे देखने को मिलते हैं. जैसे— विष्णु-राम, सीताराम, हरिवल्लभ, हरिशङ्कर, राधामोहन आदि. ऐसे नामों की

परम्परा ब्राह्मणो में अधिक देखने को मिलती है. लडकियो मे हर नाम के साथ प्राय 'बाई' लगता है, जबकि लडको के नाम के साथ लाल, मल, चन्द, सिंह, दत्त, शकर, राय राम, देव आदि लगता है. राजपूतो मे उनके नाम के साथ 'सिंह' लगाने की परम्परा है पिछले कुछ समय से लडके-लडकियो के साथ 'कुमार' तथा 'कुमारी' लगाने की प्रथा चल पडी. परन्तु अब यह बात उतने उग्र रूप मे देखने को नही मिलती. अब तो अधिकाश नाम ऐसे रखे जाते हैं, जिनको अपने किसी 'सहायक' (कुमार-कुमारी, सिंह, मल, लाल आदि) की आवश्यकता नही रहती है. शादी के पश्चात् लडकिया अपने नाम के साथ 'बाई' अथवा 'कुमारी' की जगह 'देवी लिखती देखी गई है. कु वारी लडकिया अपने नाम के पहले सुश्री तथा विवाहिता श्रीमती लगाना अनिवार्य समझती हैं. यदि किसी कुंवारी को कोई सुश्री नही लिखे यकि भूल चूक से श्रीमती लिखदे तो वह बुरा महसूस करने लग जायगी.

हीरा, पन्ना माणक, मोती आदि नाम मेवाड की ओर अत्यन्त लोकप्रिय रहे हैं. सूरज, चाद, तारा से लेकर मूला, कद्दू, हल्दी, डाडम, गुलाब, केसर, कस्तूरी, दाख तथा सोसर जैसे नामो की बहार के साथ-साथ आनी (इकन्नी), पावली (चवन्नी) तथा अधन्नी अठन्नी नाम भी बडे विचित्र रूप मे सुनने को मिल जायेगे रगो मे भूरा, काला तथा लाल रग विशेष चुने जाते हैं. महीनों के अनुसार नाम रखने की परिपाटी भी देखने को मिलती है. चैत्र का चेना, बैसाख का बैसाखा, जेठ का जेठा, आसाढ का आसा, श्रावण का हवणा(सवणा),भाद्र का भादया, कार्तिक का कात्या, फागुन का फागणा. इसी प्रकार सप्ताह के दिनों के अनुसार दीतवार का दीता, सोमवार का होमा(सोमा) मगलवार का मगला, बुधवार का बुधा, वृहस्पतिवार का बासता, शुक्रवार का झाकरा, थावर का थावरा मिलता है पूर्णिमा को लेकर पून्या तथा अमावस्या पर अमावा आदि नाम भी सुनने को मिलते हैं

देव-देवियो से सम्बन्धित नामो की अधिकता का कारण इनमें पूर्ण विश्वास और अटूट श्रद्धा हो कहा जा सकता है. तभी तो भैरू, भवानी, हनुमान, देवली, आवरी, देव, भगवती, श दरा, अम्बा, शकर, गणेश, राम, ऊंकार, ओंकार आदि नामो के कई व्यक्ति मिलते हैं और तो और किसी को नजर न लग जाए इस दृष्टि से लडकी का नाम 'नजरबाई' रख दिया जाता है. किसी परिवार मे यदि बालक जिन्दा नही रहता है, तो होनेवाले बच्चे की नाक

सुलाकर रोडीलाल नाम रख दिया जाता है जिससे वह अकाल मृत्यु से बच जायेगा, समझ लिया जाता है कभी-कभी तो पूरे नाम न रखकर किसी वस्तु विशेष का आधा नाम ही उसके नामकरण के रूप मे रख दिया जाता है. जैसे 'टमाटर' की जगह 'टमा'.

पहली बार जन्म लेनेवाले बच्चे-बच्चियो के प्राय दो नाम चल पडते हैं. इनमे से एक नाम उस बच्चे के ननिहाल वालो की ओर से रखा हुआ होता है. राजस्थान मे लडकी का पहला प्रसव उसके पीहर वाले अपने ही घर करवाते हैं अत. ये लोग भी बच्चे का नाम रख देते हैं इसलिए कभी कभी ऐसी भी बात देखने मे आई है कि शादी के समय 'कुमकुम-पत्रिका' मे ऐसे बच्चे बच्चियो के दोनो नाम देने पडते हैं. कारण कि ननिहाल वालो द्वारा रखा गया नाम भी उतना ही वजनी तथा चल पडनेवाला हो जाता है जितना उसके माता-पिता के घर का नाम चलता है छोटे बच्चो को उनके सही नाम के स्थान पर बिगडे नाम से पुकारने की परिपाटी बडे विस्तृत रूप मे पाई जाती है जैसे शान्ति को शान्त्या, बसन्ती को बसन्त्या, अरुण को अरण्या, नाथू को नाथ्या, मिट्ठू को मिट्या, उदय को उद्या आदि

वर्तमान मे और भी कई प्रकार के नाम देखने को मिलते हैं. त्योहार विशेष पर जन्म लेने वालो का उस त्योहार के नाम पर ही नामकरण कर दिया जाता है. जैसे— गणतन्त्रदिवस पर जन्म लेनेवाले बच्चे का नाम गणतन्त्र कुमार रख दिया जाता है. किसी देश विशेष मे जन्म लेनेवालो के नाम उसी देश के नाम पर रखने की प्रथा भी चल पडी है उदाहरणार्थ, बर्लिन तथा फ्रास मे जन्म लेनेवाले दो बच्चो का क्रमश बर्लिन प्रकाश तथा फ्रान्सिस प्रकाश नाम रख दिया गया. जो लोग अन्तरिक्ष मे चले गये तो उनके प्रभाव स बच्चो के नाम मे अन्तरिक्ष कुमार जुड गया साहित्य की विविध विधाओ और छदो पर भी कुछ नाम चल पडे हैं. मेरे स्वय के घर मे ही लडकियो का नाम कविता, कहानी तथा लडको के मुक्तक और तुक्तक नाम है

राजस्थान मे कुछ नाम ऐसे भी मिलते हैं जिन्ह सुनकर बिना हसे तथा आश्चर्य प्रकट किए नही रहा जा सकता जैसे रोडी, बगदो, डेलू, टीपू, झमकू, घीसो किसी परिवार मे जब लडकी की आवश्यकता नही रहती है और न चाहते हुए जब लडकी जन्म लेती है तो उसका नाम अणछाई (अनचाही) रख दिया जाता है. इसके विपरीत कई लडको के बीच मे जब चाह के अनुसार लडकी जन्म लेती है, तो उसका चावती नामकरण कर दिया जाता है. तुक से

तुक मिलाने के लिये एक ही प्रकार के नामों में प्रसून, अनिल, अनन्त; ज्ञान विज्ञान, सुज्ञान; कविता, कहानी; मुन्ना, मुन्नी आदि नाम बडे प्यारे लगते हैं एक सज्जन के दो जुडवां लडके हुए. उन्होंने उनके अम्बर और दिगम्बर नाम रख दिए, परन्तु बाद में जब दो लडके और हुए तो उनके भी उसी तुक के नाम पर नवम्बर और दिसम्बर नाम रख दिए.

कभी-कभी ऐसा भी देखने मे आता है कि किसी व्यक्ति विशेष द्वारा किसी को कुछ नाम से पुकारने पर जन-साधारण भी उसे उसी नाम से पुकारने लग जाता है. जैसे दादा, मामा, भाई, बाबा, चाचा आदि श्रेष्ठ एव उत्तम शब्दों के रूप में भी कुछ नाम मिलते हैं. ये बडे ही सुकुमार एव ललित लावण्यमय होते हैं. स्नेहलता, स्वर्णलता, श्रेयकुवर, वचनलता, सावन, शशिकला, चन्द्रकला, मनमोहिनी, सज्जन, सौभाग्य, गुणवत, उत्तम, नरोत्तम, सुकुमार, सुधा, सुगन्ध, सुमन, सौरभ आदि नाम इसी प्रकार के कहे जा सकते हैं. मेलो-ठेलो के अवसर पर नाम खोदनेवालो के पास नाम गुदवानेवालो की खासी भीड देखकर अन्दाज लगाया जाता है कि अपने हाथो पर अपना नाम खुदाना भी लोग कितना पसन्द करते हैं. अपने नाम के अलावा कुछ जातियो मे लडकियां अपने हाथ पर अपने भाई का तो कही पति का नाम खुदवाती हैं बूढे व्यक्तियो मे पुरुषो को बासा, बाजी, बा तथा औरतों को मासा, माजी, मा कहकर पुकारा जाता है

हमारे यहा एक नाम के अलावा एक और नाम—उपनाम रखने की प्रथा भी रही है बहुत लोगो ने अपने नाम के साथ एक नाम और रखने मे गर्व का अनुभव किया. सुप्रसिद्ध कवि निराला, हरिऔध, दिनकर, बच्चन के ये नाम उपनाम ही हैं. ये नाम इतने अधिक चल पडे कि इन्ही नामो से इनकी पहचान बन गई और मुख्य नाम गौण जैसे हो गये कुछ नाम ऐसे भी हैं जहा मुख्य नाम और उपनाम दोनो जुड गये जैसे— प्रकाश आतुर. इसमे मुख्य नाम प्रकाश तथा उपनाम आतुर है मगर अब ये दोनों नाम मिलकर अपनी पहचान बना गये हैं एक ही शब्द में विभिन्न पर्यायवाची शब्दो के सयुक्त नाम देखने मे भी आते हैं जैसे-सूर्यभानुभास्कर, नाहरसिंह, शूरवीरसिंह, शेरसिंह आदि.

उपनामो को लेकर नामो का जितना विस्तार हुआ उतना ही सक्षिप्तीकरण होता भी देखा गया है. मेरे अपने ही मित्रों मे भगवतीलाल व्यास, विश्वम्भर व्यास, स्वरूप व्यास अपने-अपने सक्षिप्त नाम कर क्रमश: भव्या, विव्या, सव्या हो गये. एक और सक्षिप्तीकरण की हवा ने नाम तथा गौत्र के बीच जो पुरुष और स्त्रीवाची प्रतीक (लाल, कुमारी, बाई, देवी आदि) थे उन्हे चलता कर दिया. इससे कई नामो मे यह बोध ही नही रहा कि वे पुरुषवाची नाम हैं अथवा स्त्रीवाची, यथा— भगवती जोशी, शांति शर्मा आदि.

[illegible] कम नहीं हुआ. एक अम्बालाल टा
थे तो अवालाल का अ और टाया का टा जोडकर अटा कहा जाने लग गय
यह तो ठीक रहा पर एक और सज्जन थे जूमरमल तायल. इन्हे जब इन्ही
कुछ मित्र जूमर का जू और तायल का ता मिलाकर जूता कह बैठे तो बा
तू-तू मैं-मैं तक उतर आई.

पूना से श्रीमती मालती शर्मा ने मुझे अपने पत्र मे इन नामो के सम्बन्ध
बडी रोचक सामग्री भेजते हुए लिखा कि 'हमारे ब्रजक्षेत्र मे तो अनेक रूप रूपा
और अनेक नाम नामाय राधा कृष्ण के पर्यायो का ही पसारा है. राधावल्लभ
हो या राधारमन. कितने नाम इस उलटफेर से बनते हैं, कहना कठिन है.
मेरे क्षेत्र मे भी दिन, महीने, ऋतु, नक्षत्रो पर नाम रखना सामान्य है.
महाराष्ट्र मे तो अभी एक मजदूरिन ने अपने बेटे का नाम दुष्काल ही रख
दिया है. भगवान व देवी-देवताओ के नामो मे ध्येय बडा ऊचा है. इस बहाने
ही भगवान का नाम निकलेगा. यह नाम-महिमा और शरणागति-भाव सतो
की देन है. नाम निर्धारण मे रूप, गुण, जन्म का समय व कुछ जन्म-समय की
टोनिहाई क्रियाए भी महत्वपूर्ण भाग अदा करती हैं— जैसे घूरेलाल. पर
सबसे मुख्य चीज है आखो तले आया परिवेश, इज्जत, भय और उपेक्षा के भाव
भी. अग्रेजो के युग मे दरोगासिंह, मु शी तहसीलदारसिंह, सूबेदारसिंह और
कलेक्टरसिंह नाम खूब चले. मालवा के भीलो मे लड्डू (लाडू बा) भी नाम है
उस ओर वैश्य समाज की महिलाओ के नाम फल-मेवो पर बहुत हैं ये नाम
लोकगीतो मे भी आए हैं

'आवे लहैरकेनु व्यारि बरफी को वगलो सुहावनो.'
'पेलो बधायो आमतु मैं सुन्यो मेरी सौति के कुंजा '
'उतर्यो ससुर दरबार रे मिसिरी के कुंजा.'

बर्तन भी नामों की परिधि के बाहर नही हैं. कटोरी, बेलण, थाली और
हडी मेरे सुनने मे आये हैं एक ही गाव मे हमारी और चम्पा (चम्पी, चम्पो,
चुम्पुलदे), चमेली, अगूरी, शरबती, अनारी, बादामी, कपूरी, गुलाबो, भूरो और
स्यामो नाम की एकाधिक स्त्रिया मिल जायेगी. सोनदेई, लच्छिमी, पूरनदेई,
तुलसा और असरफा नाम भी आम हैं. पशु पक्षियो के नाम हैं- खरहासिंह
(खरगोश), नीलकठ, तोताराम, तोतीराम, मैना आदि.'

'यथा नाम तथा गुण' वाली कहावत इन नामो के साथ हम चरितार्थ नही
कर सकते. यहा तो कायर से कायर व्यक्ति भी अपने आपको शूरवीर बहादुर
कहलाने में गौरवान्वित होते हुए पाए गये हैं.